जम्मू दर्शन

केवल कृष्ण 'शाकिर'

जम्मू दर्शन

लेखक
केवल कृष्ण 'शाकिर'

साहित्य संगम पब्लिकेशन
कच्ची छावनी, जम्मू

JAMMU DARSHAN
Kewal Krishan 'Shakir'
Ph.: 0191-2581409
Mob.: 94196-51745

प्रकाशक
साहित्य संगम पब्लिकेशन
कच्ची छावनी, जम्मू

प्रकाशन वर्ष :- 2014

प्रतियां :-500
मूल्य:- 240 रुपये

मुद्रक
बाला जी आफ़सेट
नई दिल्ली

जम्मू की विरासत के हितैषी-के. के. शाकिर

जम्मू संभाग की संस्कृति के अप्रतिम अध्येता, विशेषज्ञ एवं शोध कर्ता श्री केवल कृष्ण शाकिर को यदि जम्मू का राहुल सांस्कृत्यायन कहा जाए तो उपयुक्त ही होगा। शाकिर जी ने भी जम्मू क्षेत्र में कई शोध यात्राएं करके इस क्षेत्र की अमूल्य प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक धरोहर हो संयोजित करके उन्हें पुस्तकों के रूप में पाठकों एवं शोधार्थियों के हाथों तक पहुंचाया है।

जम्मू की धरोहर पर इन की दो पुस्तकें 'जम्मू के प्राचीन मंदिर' और 'जम्मू के धार्मिक स्थल' प्रकाशित हैं। जम्मू के प्राचीन मंदिर जम्मू क्षेत्र में स्थित मंदिरों पर हिन्दी में लिखित प्रथम विस्तृत, समग्र एवम सांगोपांग अनुशीलन है। इस ग्रंथ में लेखक ने जम्मू क्षेत्र में स्थित मंदिरों की वैज्ञानिक ढंग से कालगत तथा शैलीगत अध्ययन प्रस्तुत किया है। लेखक ने जम्मू के मंदिरों का व्यक्तिगत सामुख्य करके उन पर विश्लेषणात्मक पद्धति के अन्तर्गत ऐतिहासिक एवमं पुरातात्विक प्रमाणों के माध्यम से जो अध्ययन किया है, वह वैज्ञानिक एवम शोधपरत है। यही कारण है कि समालोचकों और पत्रकारों ने इनके इस शोध कार्य की प्रशंसा की है।

शाकिर जी की दूसरी शोध सम्बंधी पुस्तक ''जम्मू के धार्मिक स्थल'' है। सांस्कृतिक दृष्टि से इस पुस्तक का भी अत्याधिक महत्व है। शाकिर जी ने वेद और पुराणों से प्रसंग लेकर इन स्थलों के ऐतिहासिक सांस्कृतिक और धार्मिक महत्व की विवरणात्मक पद्धति में व्याख्या की है। इन्होंने धार्मिक स्थलों की व्याख्या करते समय विभिन्न मत-मतान्तरों को दृष्टि में रखा है।

'धरोहर' से ही सम्बंधित इन की प्रस्तुत पुस्तक 'जम्मू-दर्शन' भी एक अमूल्य ग्रंथ है। इस ग्रंथ में लेखक ने मुख्य रूप से जम्मू क्षेत्र के ऐतिहासिक स्थलों पर शोध कार्य प्रस्तुत किया है जो प्रत्येक दृष्टि से पूर्ण और सराहनीय कार्य है।

इस पुस्तक में लेखक ने डोगरा राजाओं की ऐतिहासिक निर्मितियों तथा मुगल-भवनों पर पर्याप्त प्रकाश डाला है। यह पुस्तक जम्मू की ऐतिहासिक धरोहरों का न केवल संकलन मात्र है अपितु डुग्गर की स्थापत्य कला का दिग्दर्शन भी कराती है। इस में जम्मू प्रदेश में स्थानीय राजाओं द्वारा निर्मित राजमहलों, दुर्गों, विश्रामालयों आदि का न केवल विवरणात्मक वर्णन है अपितु इस क्षेत्र की लोककला, स्थापत्य तथा पुरातत्व भी मुखरित है।

लेखक ने इस पुस्तक में अन्य धार्मिक स्थलों तथा उनके सांस्कृतिक और ऐतिहासिक महत्व पर भी पर्याप्त प्रकाश डाला है। इस पुस्तक में लेखक के कुछ सांस्कृतिक लेख डुग्गर की संस्कृति पर विशेष प्रकाश डालते हैं।

व्यवसाय से अध्यापक शाकिर शिक्षा विभाग में रहे हैं। नवम्बर 1936 ई. में आर.एस. पुरा (जम्मू) में जन्मे शाकिर इतिहास, राजनीति शास्त्र, एवं उर्दू में एम.ए. हैं। शाकिर जी जम्मू-कश्मीर सरकार के शिक्षा विभाग से सन 1994 में सीनियर लैक्चरर के पद से सेवा निवृत हुए हैं।

कई राजकीय, सांस्कृतिक तथा साहित्यिक संस्थाओं द्वारा अंलकृत शाकिर जी की अब तक हिन्दी, उर्दू , पंजाबी और डोगरी में ग्यारह से अधिक पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी हैं।

इन्होंने सन 1954 से लिखना आरम्भ किया और आज तक लिखते ही जा रहे हैं।

श्री केवल कृष्ण 'शाकिर' से डुग्गर के प्रबुद्ध बुद्धिजीवियों, साहित्यकारों और कलाकारों को कई अपेक्षाएं हैं।

मुझे आशा है कि सुविज्ञ पाठक इन की इस नई कृति का अध्ययन पूरे मनन से करेंगे।

शुभ कामनाओं सहित

- शिव निर्मोही

पैंथल (कटड़ा वैष्णो देवी, जम्मू)

–दो शब्द–

''जम्मू के प्राचीन मन्दिर'' तथा ''जम्मू के धार्मिक स्थल'' के बाद ''जम्मू दर्शन'' हिन्दी में मेरी तीसरी पुस्तक है जिसमें डोगरा राजाओं तथा महाराजाओं द्वारा निर्मित कुछ महलों, किलों तथा भवनों की संकेतात्मक जानकारी देने का प्रयास किया गया है जो डुग्गर की अमूल्य विरासत के प्रतीक माने जाते हैं। जिन पर हर डुग्गर वासी को गर्व है और जिन से हमें उस समय की वास्तुकला, चित्रकला, शासन प्रणाली, जनजीवन, रीति रिवाजों, लोगों के सामाजिक जीवन तथा धार्मिक अनुष्ठानों को जानने में सहायता मिलती है। इसके अतिरिक्त कुछ तीर्थ स्थानों, मन्दिरों, स्मारकों तथा धार्मिक स्थलों का उल्लेख भी किया गया है। जहां समय समय पर मेलों का आयोजन किया जाता है और हमें वहां आपसी मेल मिलाप तथा सदियों पुराने भाईचारे के दृश्य देखने को मिलते हैं। क्योंकि यह लेख लगभग बीस साल पहले लिखे गये थे इसलिए हो सकता है कि उन पवित्र स्थानों का और अधिक विकास हुआ हो या वहां के प्रबंधकों में कुछ तब्दीलियां हो चुकी हों। दूसरा संक्षिप्त लेखों में इन ऐतिहासिक तथा धार्मिक स्थानों की विस्तृत जानकारी देना संभव नहीं। इसलिए हो सकता है कि इन में कुछ चीजों या घटनाओं का वर्णन रह गया हो।

कुछ भी हो इन लेखों को पुस्तक के रूप में पाठकों के सामने रखने का अभिप्राय यही है कि हम अपने अतीत, डुग्गर के गौरवमय इतिहास, संस्कृति तथा डुग्गर परम्पराओं से जुड़े रहें जिन से अधिकतर डुग्गर वासी दूर होते जा रहे हैं।

जिन वरिष्ठ साहित्य कारों, शुभ चिंतकों तथा मित्रों ने साहित्यिक सफर में मुझे उत्साहित तथा मेरा मार्गदर्शन किया उनमें सर्वश्री सुदेश महाजन, छत्रपाल जी, डा. सी.एम.सेठ, अर्श सहबाई, प्रो. शिव निर्मोही, नीरू शर्मा, डा. ओम गोस्वामी, डा. ललित गुप्ता, सौजन्य शर्मा, डा. नरहरि राय ज़ादा, ज्ञानेश्वर शर्मा, अभिमनियु शर्मा, डा. अरुणा शर्मा, हरबंस नागोके, डा. भारत भूषण, सोहेल काज़मी, आनन्द लहर, डा. अरविंदर सिंह 'अमन' तथा वेद भसीन जी उल्लेखनीय हैं।

यह लेख दैनिक कश्मीर टाइम्स, तसकीन (उर्दू), श्री गंगा संग्रह, धर्ममार्ग, दैनिक जागरण, तथा अन्य समाचार पत्रों में प्रकाशित हो चुके हैं।

मैंने अब तक हिन्दी, उर्दू, पंजाबी तथा डोगरी में लगभग 11 पुस्तकें लिखी हैं

जिन को पाठकों ने पसंद किया और मेरी हौसला अफजाई भी की। मेरी इन साहित्यिक तथा सामाजिक गतिविधियों को परवान चढ़ाने तथा बढ़ावा देने में हर वर्ग तथा हर भाषा के साहित्यकारों के साथ-साथ मुझे अपनी पत्नी [illegible] संतोष शर्मा, बच्चों तथा परिवार के अन्य सदस्यों का भरपूर सहयोग मिला जिसके फलस्वरूप मैं यह पुस्तक आप तक पहुंचाने में सफल हुआ। अपने छोटे से परिवार में आकृतिक्ष, मानिनी तथा अक्षत (सोनू) रूपी फूलों को देखकर मेरा दिल खुशी से फूला नहीं समाता जिनसे मुझे बहुत आशायें हैं।

आशा है कि "जम्मू दर्शन" के बारे में पाठक अपने बहुमूल्य विचार तथा सुझाव देकर मेरा मार्गदर्शन करेंगे।

केवल कृष्ण 'शाकिर'
सीनियर लैक्चरर (सेवा निवृत)
653 ए.एम. गली न.-10 राजपुरा मगोत्रेयां
शक्ति नगर, जम्मू-180001
जम्मू-कश्मीर

विशेष सूची

सुन्दरता का प्रतीक 'अमर महल'

डोगरा राजाओं और महाराजाओं को वास्तुकला से बेहद लगाव था। यही कारण है कि उन्होंने राज्य के हर भाग में महल, बारह दरियां, स्मारक, मन्दिर तथा बावलियों का निर्माण करवा कर उस समय के कारीगरों का साहस बढ़ाया। उनकी बनाई हुई इमारतें हमारी अमूल्य विरासत का महत्वपूर्ण भाग बन गई हैं जिस से हमें डोगरा राजाओं के रहन-सहन उनकी शासन विधि, उन के कारनामों तथा उस समय के हालात जानने में सहायता मिलती है। उन की बनाई हुई इमारतों को देखकर हमें उस समय का इतिहास, वास्तुकला, चित्रकला और संस्कृति की जानकारी भी प्राप्त होती है।

यूं तो डोगरा राजाओं तथा महाराजाओं के बनाए हुए भवन और महल जम्मू नगर के हर भाग में मिलते हैं परन्तु जम्मू-कश्मीर के महाराजा हरि सिंह के पिता राजा अमर सिंह का बनाया हुआ 'अमर महल' अपनी सुन्दरता के लिए दूर-दूर तक प्रसिद्ध है और जम्मू आने वाले माता वैष्णों देवी के यात्री प्राय: इस महल को देखने आते हैं। विदेशों से आने वाले पर्यटक भी इस महल को देख कर प्रसन्नता का अनुभव करते हैं। सूर्य पुत्री तवी नदी के दायें तट पर शिवालक की पहाड़ियों के मध्य बना यह महल सब को अपनी ओर आकर्षित करता है। महल के आस-पास का वातावरण पर्यटकों की आंखों को ठंडक और दिल को शान्ति प्रदान करता है। तवी नदी तथा दूर दूर तक फैले पहाड़ों पर हरे-भरे वन देखकर दिल खुशी से झूम उठता है।

राजा अमर सिंह फ्रांस में बड़े-बड़े फार्म-घरों में जिमींदारों की इमारतें देखकर प्रभावित हुए इसलिए उन्होंने जम्मू में भी उसी प्रकार का एक महल बनाने के इरादे से फ्रांस के एक प्रसिद्ध शिल्पकार को यहां बुलाया। उस ने महल का नक्शा बनाया और 1862 ई में इस महल को बनाने का काम आरंभ किया गया। यह महल लाल पत्थर का बना हुआ है और कारीगिरी का अद्भुत नमूना माना जाता है। प्रात: सूर्य निकलने और शाम को सूर्य डूबने के समय यहां का दृश्य बहुत ही मनभावन होता है। आज तक शिल्पकार के नाम के बारे में कोई लिखित प्रमाण नहीं मिला। परन्तु सुनी सुनाई बातों से पता चलता है कि उस शिल्पकार का नाम मिस्टर फरेज़र था

जो महल निर्माण के समय यहां उपस्थित था। इसी महल में राजा अमर सिंह राज परिवार के अन्य सदस्यों के साथ रहते थे। उनकी मृत्यु के बाद फ्रांसीसी शिल्पकार भी स्वदेश लौट गया और महल का नक्शा भी अपने साथ ले गया। जब महाराजा हरि सिंह राजगद्दी पर बैठे तो उन को निपुण कारीगिर नहीं मिले जो इसे पूर्णकर सकते इसलिए उन्होंने महल का काम बन्द करवा दिया। नक्शों के मुताबक अमर-महल वर्तमान हरि निवास तक बनना था। महल की छत पर फ्रांसीसी इमारतों की तरह तुफान स्लेटें लगाई गई थीं जो आंधी और तुफान के कारण कई बार गिर कर टूट गई इसलिए 1955 ई में स्लेटों को हटाकर छत पर टीन की चादरें लगाई गई। राज माता तारा देवी जी 1976 तक इसी महल में रहीं।

महाराजा प्रताप सिंह के बाद जब 1925 ई.में हरि सिंह जम्मू-कश्मीर के महाराजा बने तो उन्होंने अमर महल के दक्षिण में हरिनिवास पैलस का निर्माण करवाया जहां वह 1949 ई. तक रहे। उसके बाद हरिनिवास महल डा. कर्ण सिंह और उनके परिवार का निवास स्थान रहा और अब भी है। अमर महल के सामने आमों का बागीचा, खुली सड़क, हवादार खिड़कियां तथा झरोके इस की सुन्दरता को दोबाला करते हैं। श्रीनगर तथा कटड़ा की ओर से आने वाली बसों के यात्री जब जम्मू के करीब पहुंचते हैं तो सब से पहले उनको जिस सुन्दर भवन की झलक दिखाई देती है वह राजा अमर सिंह द्वारा निर्मित अमर महल ही है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे यह भवन जम्मू नगर की रक्षा के लिए बड़ी चुस्ती से एक बहादर सिपाही की भांति अपना कर्तव्य निभा रहा हो।

महल के निचले भाग में सड़क की ओर दीवारों में कोने बना कर महल का विस्तार किया गया। पहली छत की दीवारों में फ्रांसीसी तरज़ की खिड़कियां तथा छोटा बरामदा बना हुआ है। पूर्व को छोड़कर महल की बाकी तीनों ओर खुला बरामदा है। स्तम्भों के ऊपरी भाग में फूल बनाए गये हैं। दीवारों में बाहर की ओर बनी खिड़कियां झरोकों की भांति दिखाई देती हैं। इस के अतिरिक्त कमल के फूल, जानवर तथा भारती वास्तुकला के कई नमूने बनाए गए हैं परन्तु महल की बनावट में योरपीय वास्तुकला की झलक साफ तौर पर दिखाई देती है।

1971 ई में डा. कर्ण सिंह ने 'अमर महल' हरि-तारा चैरी टेबल ट्रस्ट को दे दिया। महल की तीन मंजिलें हैं जिन को अब म्यूज़ियम तथा लाईब्रेरी के तौर पर प्रयोग किया जाता है। निचले हिस्से में जम्मू-कश्मीर राज्य के अतिरिक्त देश के

दूसरे हिस्सों के प्रसिद्ध चित्रकारों के बनाए हुए चित्र रखे गये हैं। दूसरी और तीसरी मंजिल में लाईब्रेरी है जिस में सोशल स्डीज़,हिन्दू धर्म, इतिहास तथा भूगोल, साहित्य, यात्रा लेख, टेक्नालोजी, प्रसिद्ध व्यक्तियों के जीवन तथा शिक्षा, संस्कृत,हिन्दी, उर्दू, डोगरी तथा अंग्रेजी के साहित्यकारों की लगभग 25000 किताबे हैं। इस लाईब्रेरी में वे किताबें भी हैं जो डा. कर्ण सिंह द्वारा लिखी गई हैं या उनको समय-समय पर देशी तथा विदेशी साहित्यकारों ने भेंट कीं। कुछ किताबें राजा अमर सिंह लाईब्रेरी की भी वहां रखी गई हैं। राज परिवार के सदस्यों के फोटो एलबम भी यहां हैं जिस का लाभ रिसर्च करने वाले देशी तथा विदेशी विद्यार्थी उठा सकते हैं।

'अमर महल' की निचली मंजिल जहां चित्रकारों के चित्र रखे गये हैं जनता के लिए निश्चित समय पर खुली रहती है। यहां दो बड़े हाल हैं। इस मंजिल के पहले भाग में चित्र रखे गये हैं। म्यूज़ियम को डा. कर्ण सिंह की माता जी के नाम पर महारानी तारा मैमोरियल म्यूज़ियम का नाम दिया गया है। इस समय यह अमर महल म्यूज़ियम लाईब्रेरी के नाम से जाना जाता है। पहले हाल में नल-दमयंती के छोटे आकार के 47 चित्र हैं जिन को डा. गोस्वामी के अनुसार नैन सुख या उस के बेटे रांझा या उसके किसी शिष्य ने बनाया है। इन चित्रों में रंगों का प्रयोग बड़ी सूझ-बूझ से किया गया है जिन में अठारहवीं शताब्दी के पहाड़ी राजाओं के समय में लोगों के जीवन की झलक मिलती हैं। यह चित्र लोगों तथा राजाओं की चित्रकला में दिलचस्पी के भी प्रतीक हैं। प्रेमियों के आपस में बात करने के तरीकों को बड़े ही सुन्दरढंग में पेश किया गया है।

दूसरे हाल में डोगरा शासकों की तस्वीरों के साथ राज परिवार के दूसरे सदस्यों की तस्वीरें भी प्रदर्शित की गई हैं। बाकी कमरों में जम्मू-कश्मीर के अतिरिक्त देश के जाने-माने चित्रकारों के चित्र रखे गये हैं। जिन में सरदार सोभा सिंह की प्रसिद्ध कलाकृतियां 'सोहनी-महीवाल' 'गुरुगोबिंद सिंह जी' 'सरस्वती देवी' के चित्र उल्लेखनीय हैं। गुलाम रसूल संतोष का बनाया हुआ शिवलिंग का चित्र और जसवंत सिंह का बनाया हुआ चित्रों का सैट भी इस म्यूज़ियम की शोभा को बढ़ाता है। बड़े हाल के साथ ही छः कोनों वाले एक कमरे में सोने का बना सिंघासन रखा हैं जिस पर महाराजा हरि सिंह बैठते थे।

सिंघासन सोफा की भांति है जिस में 120 किलो ग्राम के लगभग शुद्ध सोना लगा है और बैठने वाले स्थान पर लाल रंग की मखमल। यहां सख्त पहरा है और

यात्री या पर्यटक इसे दूर से ही देख सकते हैं। इस कमरे के दरवाजे के सामने शिवालक की सुन्दर पहाड़ियों का दृश्य और नीचे कल कल करती तवी नदी की लहरों का मधुर संगीत सुनाई देता है। म्यूज़ियम के सामने और पिछली ओर बड़े-बड़े लान हैं जहां सुन्दर फूलों की क्यारियां हैं। अमर महल के सामने हरी भरी घास के मैदान में 22 अप्रैल 2000 ई को भारत के उपराष्ट्रपति श्री कृष्ण कान्त ने जम्मू-कश्मीर राज्य के संस्थापक महाराजा गुलाब सिंह की विशाल अश्वारोही प्रतिमा का अनावरण किया जिस से अमर महल परिसर की सुन्दरता में वृद्धि हुई है।

अमर महल लाईब्रेरी तथा म्यूज़ियम के विकास तथा देख भाल की जिम्मेदारी हरि-तारा चैरी टेबल के ट्रस्ट पास है जिसके एगजैक्टिव ट्रस्टी स्वयं डा. कर्ण सिंह हैं, उनकी पत्नी श्रीमति यशो राज्य लक्ष्मी ट्रस्टी ऐडमनिट्रेटर। आनरेरी सैक्रेटरी ब्रगेडियर जे एस राजपूत, अडीशनल सैक्रेटरी श्री आर एस पठानिया, म्यूजियम की क्यूरेटर मिस अपर्णा टंडन, मीनू नंदा आदि अमर महल के रख रखाव में पूर्ण रूप से सहयोग दे रहे हैं। समय-समय पर यहां साहित्यक तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है जिन में स्कूली बच्चों को भी शामिल किया जाता है। ताकि हमारी आने वाली पीढ़ी और कल के नागरिक अपनी बहुमूल्य विरासत तथा डोगरा राजाओं महाराजाओं, शूरवीरों तथा देश भक्तों के कारनामों की जानकारी, हासिल कर सकें। सभी मिलकर डा. कर्ण सिंह जी के मार्गदर्शन में इस स्थान को और अधिक आकर्षक बनाने के यत्न कर रहे हैं ताकि ज्यादा से ज्यादा यात्री तथा पर्यटक यहां आकर हमारी अमूल्य विरासत की झलक देख सकें।

मुबारक मंडी के राजमहल

सूर्य पुत्री तवी नदी के दायें किनारे पर छोटी सी पहाड़ी पर बसा जम्मू शहर अपनी सुन्दरता तथा प्राकृतिक दृश्यों के कारण विश्व प्रसिद्ध है। यहां के पवित्र स्थानों की यात्रा के लिए सारा साल देश के कोने कोने से श्रद्धालु आते हैं और देवी देवताओं के मन्दिरों में पूजा अर्चना करके आध्यात्मिक शांति प्राप्त करते हैं। धार्मिक स्थलों के अतिरिक्त जम्मू शहर तथा इसके आप पास कई ऐतिहासिक भवन, किले, प्राचीन मंदिर तथा कलाकृतियां हैं जो डुग्गर की बहुमूल्य विरासत की प्रतीक हैं जिन पर समस्त डुग्गर वासियों को गर्व है। उन भवनों की वास्तुकला, उनकी दीवारों पर की गई चित्रकारी से पता चलता है कि डोगरा शासक भवन निर्माण में कितनी रुचि लेते थे। वे दरबारी चित्रकारों का उत्साह बढ़ाते और उनकी सहायता करते थे। इन भवनों की दीवारों के बाहर तथा अन्दर की गई चित्रकारी को देखकर मनुष्य हैरान रह जाता है। डोगरा शासक धार्मिक विचारों के थे और अपने धर्म के अतिरिक्त सभी धर्मों का आदर करते थे। सब को यहां धर्मानुसार अपने अपने ढंग से ईश्वर की आराधना करने की स्वतंत्रता थी। उनके शासनकाल में कई मन्दिरों का निर्माण हुआ जिन में रघुनाथ जी का मंदिर रणवीरेश्वर मन्दिर तथा महाकाली मन्दिर बाहुफोर्ट विशेष तौर पर उल्लेखनीय हैं। डोगरा शासकों ने भवन निर्माण में भी बहुत रुचि ली जिसकी जीती जागती मिसाल मुबारकमंडी के राजमहल हैं जो दरबार गढ़ के नाम से प्रसिद्ध हैं।

1947 तक इन महलों की शोभा देखते ही बनती थी। यहां का वातावरण बड़ा सुहावना होता था। परिसर में बने सुन्दर बाग में भांति-भांति के फूल खिले होते थे जिनकी महक चारों ओर बिखर जाती थी और यहां आने वालों के हृदयों में नया जोश तथा नई उमंग भर देती थी परन्तु महाराजा हरि सिंह जी के बाद तो जैसे सब कुछ समाप्त हो गया। डुग्गर की इस बहुमूल्य विरासत के रख रखाव, देखभाल तथा मरम्मत की ओर कोई ध्यान न दिया गया जिसके कारण इन महलों का अधिक भाग अब टूट चुका है। यदि समय रहते इस ओर ध्यान न दिया गया तो चंद सालों के बाद इन महलों का नामो-निशान मिट जायेगा जिसके लिए आने वाली पीढ़ियां हमें कभी क्षमा नहीं करेंगी। वे राजमहल जिन की सुन्दरता को देख विदेशी भी

मन्त्रमुग्ध हो जाते थे और इन की प्रशंसा किये बिना नहीं रहते थे आज प्रशासन की लापरवाही के कारण मलबे के ढेर में परिवर्तित होते जा रहे हैं।

इन महलों का जो भाग गिरा उसे पुनः बनाने का यत्न नहीं किया गया बल्कि उनके स्थान पर आधुनिक ढंग के भवनों का निर्माण किया गया जिससे इन महलों की रही सही सुन्दरता भी नष्ट हो गई। 1947 के बाद इन राजमहलों में राज्य सरकार के 76 कार्यलय स्थापित किये गये। हर विभाग को इन महलों के कुछ कमरे दिये गये और फिर दौर शुरु हुआ इन सुन्दर महलों की तबाही का। महलों के कमरों में लगा बहुमूल्य फर्नीचर तथा चित्र अधिकारियों के घरों में चले गये। जो चीज़ किसी के हाथ लगी उसे समेटता गया और इस प्रकार लूट खसूट का सिलसिला शुरु हो गया। इन महलों में दाखिल होने के लिए तीन बड़ी डयोढियां थीं। बड़ी डयोढी महलों के पश्चिम की ओर, दूसरी दक्षिण की ओर तथा तीसरी डयोढी उत्तर की ओर थी।

तीनों डयोढियों पर पहरेदार होते थे और किसी को भी नंगे सिर मुबारक मंडी परिसार में प्रवेश करने की आज्ञा न थी। उत्तर दिशा वाली बड़ी डयोडी तो दिखाई नहीं देती परन्तु पश्चिम तथा दक्षिण दिशा वाली डयोढियां टूटी-फूटी हालत में दिखाई देती हैं। महाराजा हरि सिंह जी के बाद जम्मू-कश्मीर राज्य के दो प्रधान मंत्रियों का कार्यालय भी इन्हीं राजमहलों में था। यहीं ग्रीन हाल में राज्य की विधानसभा का अधिवेशन होता था। 1961-1962 के करीब जब नये सचिवालय की इमारत बनी तो राजाओं के समय के अजायब घर को विधानसभा भवन में तबदील कर दिया गया। नया सचिवालय बनने के बावजूद कई सरकारी कार्यालय महलों में ही रहे। महलों की दीवारें, झरोखे, डयोढ़ियां तथा दरवाजे एक एक करके टूटते जा रहे हैं परन्तु कोई इन की मरम्मत के लिए आगे नहीं आ रहा। ऐसा प्रतीत होता है मानों यह राजमहल वर्तमान शासकों तथा कर्णधारों के सामने अपने आप को बेबस महसूस करते हुए आखरी दिनों की प्रतीक्षा में हैं। इन महलों की खस्ता हाली पर किसी को दया नहीं आ रही। कोई इन की सुध लेने वाला नहीं।

इससे पहले जम्मू के राजाओं के महल पुरानी मंडी में हुआ करते थे। तारीख डोगरा देश के अनुसार राजा मालदेव ने 1357 ई. में जम्मू के शासन की बागडोर संभाली। वह बड़ा बहादर राजा था और उसने कांगड़ा क्षेत्र के सभी राजाओं को अपने अधीन कर लिया था। उसके शासन काल में जम्मू की जनसंख्या में वृद्धि

हुई। मालदेव ने अपनी बहन की शिकायत पर नूरपुर के राजा कैलाश पठानिया से लड़ाई की और उसे समाप्त करके किला पठानकोट को तबाह कर दिया और उसकी ईंटें भी जम्मू ले आया। उन्हीं ईंटों से यहां उस ने अपने महलों के साथ एक बारह दरी बनावाई जो आज भी पुरानी मंडी में मौजूद है। राजा मालदेव इसी बारह दरी में अपना दरबार लगाता था और यहीं जम्वाल राजाओं को राजतिलक दिया जाता था। पुरानी मंडी की इस बारह दरी में राजा माल देव की पिंडी आज भी मौजूद है जिसे सभी जम्वाल राजपूत तथा राजे देवता की तरह पूजते हैं। अब यहां अमर क्षत्री राजपूत सभा का कार्यालय है।

पुरानी मंडी के राजमहलों के आस-पास ही मंत्रियों तथा अधिकारियों के मकान थे। इसी वंशावली में जब राजा गजे सिंह जम्मू का राजा था तो ओरंगजेब का गवर्नर कलील खान जम्मू आया। गवर्नर के स्वागत के लिए राजा गजे सिंह ने उसके कैम्प के पास एक बाजार बनवाया जो 1947 ई. से कुछ समय बाद तक उर्दू बाजार के नाम से जाना जाता था परन्तु अब राजेन्द्र बाजार के नाम से प्रसिद्ध है। राजा गजे सिंह ने मस्तगढ़ की मस्जिद को भी बड़ा किया। उसी के शासन काल में सिखों के दसवें गुरु गोविन्द सिंह जी महाराज पुरमण्डल की यात्रा पर आए। गजे सिंह की प्रार्थना पर गुरु जी जम्मू भी आए। कुछ दिन जम्मू रहने के बाद वह माता वैष्णो देवी की यात्रा पर गये और वापसी पर जम्मू से होते हुए पंजाब चले गये।

राजा गजे सिंह के बाद उनका बेटा ध्रुव देव जम्मू का राजा बना। राजा ध्रुव देव ने तवी के किनारे महल बनवाये जो दरबार गढ़ के नाम से प्रसिद्ध हुए। राजा ध्रुव देव जम्मू राज्य की राजधानी को भी पुरानी मंडी से तवी के किनारे नये महलों में ले गया और वहीं से शासन चलाने लगा। नये महल बनने तथा जम्मू के राजाओं के वहां रहने के बाद पुराने महलों तथा उसके आस-पास का क्षेत्र पुरानी मंडी कहलाने लगा। इस के बाद राजा रंजीत देव तथा गुलाब सिंह ने भी जम्मू के उत्तर-पूर्व की ओर दरबार गढ़ में कुछ महल बनवाये।

1822 ई.से पहले गुलाब सिंह लाहौर दरबार में महाराजा रंजीत सिंह की सेना के अधिकारी थे और उनके छोटे भाई ध्यान सिंह पंजाब के प्रधानमंत्री थे। उस समय उन्होंने भी पुरानी मंडी में ही अपने परिवारों के लिए महलों का निर्माण करवाया था जहां उनके परिवारों की महिलाएं तथा बच्चे रहते थे। जम्मू का राजा बनने के बाद गुलाब सिंह ने भी दरबार गढ़ में महलों का निर्माण कार्य आरम्भ किया जो 1846

तक जारी रहा। 1846 ई. में अमृतसर सन्धि के अन्तर्गत वह जम्मू-कश्मीर राज्य के महाराजा बने। अपने जीवन काल में ही उन्होंने जम्मू-कश्मीर राज्य का शासन अपने पुत्र महाराजा रणवीर सिंह के हवाले कर दिया। महाराजा रणवीर सिंह के शासनकाल में अधिक निर्माण कार्य हुआ। उन्होंने अपने तीनों पुत्रों तथा राजपरिवार की रानियों के लिए अलग-अलग महल बनवाये।

मुबारक मंडी कांम्लैक्स लगभग 200 साल पुराना है। इन महलों में राज परिवार के लोग रहते थे। यह महल एक सुन्दर तथा हरे भरे आंगन के चारों ओर बने हुए हैं। जिनको समय-समय पर विभिन्न डोगरा शासकों ने बनवाया था। महलों की दीवारों को सुचारु ढंग से चित्रों से सजाया गया था। महाराजा रणवीर सिंह ने ही सारे कांपलैक्स का पुन: निर्माण करवाया और उसे नया रूप दिया जैसे कि हम आज देखते हैं। इन महलों में बड़े-बड़े हाल तथा गैलरियां थीं जहां धार्मिक तथा सामाजिक कार्यक्रमों का आयोजन किया जात था। पर्वों के मौकों पर तो इन महलों को झंडियों तथा रंगबिरंगी रोशनियों से सजाया जाता था। आम लोगों के साथ राज परिवार के सदस्य भी इन पर्वों में बढ़-चढ़ कर भाग लेते थे। यह महल तवी नदी के दायें किनारे पर बाहुफोर्ट के सामने थे जो देखने में बड़े सुन्दर प्रतीत होते थे। विदेशों के सैलानी अक्सर यहां आया करते थे और डोगरा शासकों के इन महलों को देख कर बड़े प्रभावित होते थे। एक विदेशी सैलानी ने इन महलों को तवी पर लटकता महल कहा था। तवी नदी से लेकर महल तक सीढ़ियां थीं जिन को चढ़कर वह महल तक पहुंचा था। क्योंकि यह महल एक ही समय में नहीं बने थे इस लिए बनावट में भी यह एक दूसरे से भिन्न हैं। वास्तुकाल के कुछ नमूने तो जम्मू क्षेत्र के हैं जबकि कुछ को बाहर विशेष रूप से राजस्थान से लाया गया था। कुछ मुगल तथा कुछ यूरोपीय वास्तुकला पर आधारित हैं।

सभी महलों में महारानी चाडकी का महल अधिक सुन्दर था जिसकी एक ओर तोशा खाना था जिसमें रानियों के आभूषण रखे होते थे जिसको वे पर्वों तथा उत्सवों के अवसर पर पहनती थीं। इसके बाद सभी आभूषण वापिस तोशा खाना में रख दिये जाते थे। चार मंजिला इस महल में काले तथा सफेद रंग के इटैलियन मारबल का प्रयोग किया गया है। इस महल में फ्रांस से लाई गई लिफ्ट भी लगी है। छतों तथा दीवारों पर बसोहली तथा पहाड़ी चित्रकला के अद्‌भूत नमूने देखने को मिलते है। बहुमूल्य आभूषणों के अतिरिक्त तोशाखाना में सोने-चांदी की कुर्सियां, हीरे

जवाहरात रत्न जडित आभूषण भी हैं जिनकी कीमत करोड़ों रुपयों में है। तोशाखना के बाहर कड़ा पहरा होता था।

चौक चबूतरा से मंडी बाजार होते हुए यदि हम पश्चिमी डयोडी से दरबार गढ़ कांपलैक्स में प्रवेश करें तो सबसे पहले डयोडी में ही दाईं ओर जे.के. मिनरजल का कार्यालय है। उसके साथ आगे आरकाईवज विभाग का रिकार्ड रूम है जहां राज्य सरकार का पुराना रिकार्ड तथा किताबें और राजाओं महाराजाओं के चित्र रखे हुए हैं। उसके आगे बड़ी ईमारत है जहां हाईकोर्ट हुआ करता था तथा 1947 के बाद मंत्रियों के कार्यालय थे। इस इमारत में हरि सिंह के शासनकाल में सेना का मुख्यालय हुआ करता था। उसके साथ महाराजा प्रताप सिंह के समय का ग्रीन हाल है जहां विधानसभा का अधिवेशन होता था। अब तो यह नाम का ही ग्रीन हाल है क्योंकि जगह जगह पर हरा रंग उड़ चुका है और नीचे से सफेदी तथा ईंटें साफ दिखाई दे रही हैं। लोहे का द्वार भी टूट चुका है और बंदरों ने इस पर अधिकार किया हुआ है। ग्रीन हाल में राजाओं तथा महाराजाओं के रंगीन चित्र लगे हुए थे। महाराजा प्रताप सिंह के शासनकाल में यहां भारत के अन्य भागों की नाटक कम्पनियां अपने नाटक दिखाने आती थीं जिनको देखने के लिए राज परिवार तथा जम्मू के जाने माने लोगों को खासतौर पर आमंत्रित किया जाता था।

इन महलों में जनाना तथा मर्दाना महल बने हुए थे। जनाना महलों में किसी मर्द को प्रवेश की आज्ञा नहीं थी। महाराजा प्रताप सिंह के मर्दाना महल की डयोढ़ी को निक्की डयोढ़ी कहा जाता था। महारानी चाडकी के महल में बालकोनियां तथा झरोके बने हुए थे। बालकोनियों में बैठ कर राज परिवार के लोग तवी नदी का दृश्य देखते थे और शाम को महल के अन्दर बने बागीचे में पक्षियों की मीठी बोलियों से आनंदित होते थे इन महलों के दक्षिण में गोलघर की इमारत थी जो 1985 में आग लगने से तबाह हो गई। उत्तर में पिंक हाल था जहां महाराजा प्रताप सिंह का दरबार लगता था। यहीं मारबल हाल भी था। अब मारबल हाल, पिंक हाल तथा अन्य दो कमरों में 'डोगरा आर्ट म्यूजियम' बनाया गया है जहां डोगरा चित्रकला के नमूने, डोगरा राजाओं के शस्त्र, बन्दूकें, वस्त्र प्राचीन मूर्तियां, सिक्के तथा हस्तलिखित धार्मिक किताबें तथा शिलालेख रखे गये हैं। सारे मण्डी कांपलैक्स में केवल यही भाग है जिसे पहले जैसा रंग रूप दिया गया है। म्यूजियम में रखी चीजों को देखने के लिए प्रतिदिन बड़ी संख्या में लोग आते हैं।

दरबार गढ़ कांपलैक्स के पश्चिमी भाग में जहां इन दिनों डवीजनल कमीश्नर का कार्यालय है वह राजा राम सिंह का महल था। उन्होंने जम्मू शहर के उत्तरी भाग में तवी के किनारे पर नये 'अमर महल' का निर्माण करवाया और वहीं रहने लगे। वह महल अब 'अमर महल म्यूज़ियम' कहलाता है। कुछ समय के लिए राजा राम सिंह के महल को सेना मुख्यालय के तौर पर भी प्रयोग में लाया गया था। इसके बाद राजा हरि सिंह जो मंत्री परिषद के सीनियर मंत्री तथा सेनापति भी थे नव निर्मित बलाक में आ गये।

महारानी चाड़की के महल के उत्तर में जहां फूड एण्ड सप्लाईज का कार्यालय है वहां महाराजा रण्वीर सिंह ने राजपरिवार की रानियों के लिए महल बनवाया और अपने लिए मर्दाना महल बनवाया था। इस भाग में मंदिर का निर्माण भी किया गया जहां राजपरिवार के सदस्य पूजा अर्चना करते थे। यहीं महाराजा गुलाब सिंह के दादा गुरु मियां मोटा की समाधि है। जहां फूड एण्ड सप्लाईज़ का कार्यालय है वहां राजा राम सिंह की रानियों का महल था। आज यहां अदालतें हैं वह राजा राम सिंह का महल था। इसमहल की सीढ़ियां चौड़ी हैं। कहते हैं कि राजा राम सिंह घोड़े पर सवार होकर महल में प्रवेश किया करते थे।

मुबारक मंडी परिसर में दरबार आम का दृश्य देखने वाला होता था। यहां राज्य के हर भाग से लोग आते थे। इन लोगों में कश्मीरी, डोगरे, बलती, लद्दाखी तथा दूर दराज के रहने वाले पहाड़ी लोग भी होते थे। राज्य के बाहर से भी यहां कारोबार के लिए व्यापारी आते थे। इस तरह दोपहर तक जम्मू शहर के बाजारों तथा मंडी में लोगों की भीड़ रहती थी। फिर दरबार बरखास्त होता था। महाराजा बहादर महल में चले जाते थे। मंत्री अपने घरों को चले जाते और चंद ही मिनटों में मंडी का सारा आंगन खाली हो जाता था। विदेशी सैलानियों ने भी दरबार आम में होने वाले कामों तथा रात को होने वाले कार्यक्रमों के बारे में विस्तार पूर्वक लिखा और उनकी प्रशंसा की है।

मुबारक मंडी कांपलैक्स के महत्व को समझते हुए राज्य सरकार ने 1988 में इस ऐतिहासिक यादगार की सुरक्षा करने तथा इस की मरम्मत का निर्णय किया। इस सम्बंध में इंडियन नेशलन ट्रस्ट फार आर्ट एण्ड कल्चर ने इस ऐतिहासिक कांपलैक्स को पहले जैसा सुन्दर तथा आकर्षक बनाने के लिए सुझाव दिये। इन्टेक ने न केवल सुझाव दिये बल्कि डुग्गर की इस विरासत को सांस्कृतिक गतिविधियों

का केंद्र बनाने तथा इसकी शान को बरकरार रखने के लिए सभी को सहयोग देने के लिए भी कहा। यह सारा काम 5 से 10 वर्ष में पूरा करने को कहा और इस प्रोजेक्ट पर खर्च का अनुमान 20 करोड़ रुपये लगाया गया। रिपोर्ट में सरकारी कार्यालयों को हटाने के लिए भी कहा गया था। परन्तु जिन कार्यालयों का सम्बंध डोगरा विरासत तथा संस्कृति से है उनको यहीं रखने का सुझाव दिया। यह भी सुझाव था कि यहां एक लाईब्रेरी बनाई जाए जिसमें डोगरा राज तथा डोगरा संस्कृति से सम्बंधित किताबें रखी जाऐं। मंडी परिसर को नुमाईशों तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों के लिए प्रयोग में लाया जाए और बगीचों को ठीक किया जाए 1988 में दिए गये सूझावों पर कहां तक कारवाई की गई इसका तो पता नहीं चला परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि अब राज्य सरकार डोगरा महाराजाओं के इन महलों तथा डुग्गर की इस अमूल्य विरासत को पहले जैसा रंग रूप देने में संजीदगी से विचार कर रही है। इस नेक काम में सहयोग देने के लिए कई गैर सरकारी संगठन भी सामने आए हैं। राज्य सरकार ने इस के लिए 2 करोड़ रुपये भी मंजूर किए हैं। आशा है कि राज्य सरकार जल्दी ही यहां से बाकी सरकारी कार्यालय भी हटाएगी ताकि सम्बंधित विभाग तथा अधिकारियों को काम करने में आसानी हो। आरकाईवज विभाग के निदेशक श्री मखदूमी जी और सहायक निदेशक श्री अशरफ साहिब इस काम में बहुत रुचि ले रहे हैं। डोगरा शासकों के विषय में जानकारी प्राप्त करने वालों को इस विभाग से पूर्ण सहयोग मिलता है।

आवश्यकता इस बात की है कि जबानी जमा खर्च करने की बजाए इस दिशा में कोई ठोस काम किया जाए। राज परिवार के वर्तमान सदस्य, मुख्यमंत्री, मंत्री परिषद के सदस्य, सामाजिक, धार्मिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक संस्थाएं, वरिष्ठ नागरिक, स्थानीय लोग, डुग्गर संस्कृति तथा डुग्गर विरासत पर गर्व करने वाली युवा पीढ़ी आदि सब मिल कर काम करें ताकि इस परिसर में आने वालों को डोगरों के इतिहास, उनकी वीरता, रीति रिवाजों तथा रहन सहन का पता चल सके और वे उस अमूल्य विरासत से अवगत हो सकें जिस पर डोगरों को गर्व है।

जम्मू-कश्मीर राज्य के महाराजे

जम्मू-कश्मीर राज्य पर डोगरा राजाओं का शासन कई सालों तक रहा परंतु 1846 ई. में जब कश्मीर भी जम्मू के साथ जुड़ गया तो इस बड़े राज्य का नाम जम्मू-कश्मीर रखा गया और जम्मू के राजा गुलाब सिंह इस राज्य के महाराजा बने। गुलाब सिंह के बाद उनके पुत्र महाराजा रणवीर सिंह, फिर प्रताप सिंह और उसके बाद महाराजा हरि सिंह ने जम्मू-कश्मीर की बागडोर संभाली। 1947 ई. में महाराजा हरि सिंह ने जम्मू-कश्मीर राज्य का विलय भारत से कर दिया और स्वयं मुम्बई चले गए जहां 1969 में उन का स्वर्ग वास हो गया।

महाराजा गुलाब सिंह (21-10-1792 से 30-6-1857)

जम्मू-कश्मीर राज्य के संस्थापक महाराजा गुलाब सिंह का जन्म 21 अक्तूबर 1892 ई. को अखनूर में मियां किशोर सिंह के घर हुआ। उनकी माता का नाम महादेवी था। जन्म के समय उनके कुल पुरोहित ने गुलाब सिंह के दादा मियां जोरावर सिंह को गुलाब का फूल भेंट किया और कहा, यह बच्चा बड़ा भाग्यशाली है और बड़ा होकर अपने कुल का नाम रोशन करेगा। फूल को देखकर जोरावर सिंह बड़ा प्रसन्न हुआ और उसने अपने पोते का नाम गुलाब सिंह रख दिया। बचपन में माता पिता तथा परिवार के लोग उसे गलाबू कहकर पुकारते थे। बचपन से ही गुलाब सिंह को बहादरी के खेल बड़े पंसद थे। वह कभी अपने दादा के पास, कभी पिता के पास अखनूर में और कभी दादा के भाई मियां मोटा सिंह के पास जम्मू में रहता था। जब कभी वह अखनूर आता तो अपने गुरु बावा प्रेम दास के दर्शन करने सूई जरूर जाता। बावा प्रेम दास जी ने ही भविष्यवाणी की थी कि गुलाब सिंह एक दिन जम्मू का राजा बनेगा। गुरु के कहने पर ही गुलब सिंह महाराजा रंजीत सिंह की सेना में भर्ती हुआ था और अपनी बहादरी तथा सूझ बूझ के कारण एक साधारण सिपाही से जम्मू-कश्मीर का महाराजा बना। महाराजा रणजीत सिंह गुलाब सिंह की वीरता तथा स्वामी भक्ति से प्रसन्न था। इसलिए उसने 17 जून 1822 ई. को अखनूर में चिनाब नदी के किनारे जिया पोता घाट पर गुलाब सिंह को अपने हाथ से राज तिलक देकर जम्मू का राजा घोषित किया। राजा गुलाब सिंह ने चिनाब नदी के किनारे हरि मंदिर के थड़े पर पहला दरबार लगाया और अपने गुरु

का आर्शीवाद लेने सूई चले गए। बावा प्रेम दास जी के कहने पर गुलाब सिंह ने सूई गांव में रघुनाथ जी के मंदिर का निर्माण करवाया। मार्च 1846 ई. में अमृतसर संधि के अंतर्गत कश्मीर गुलाब सिंह को मिला तो एक स्वतंत्र राज्य जम्मू-कश्मीर की स्थापना हुई। गुलाब सिंह जम्मू-कश्मीर के महाराजा बने और संसार के सब से सुंदर क्षेत्र कश्मीर जिसे धरती का स्वर्ग कहा जाता है गुलाब सिंह के अधिकार में आ गया।

जम्मू-कश्मीर के महाराजा बनने के बाद गुलाब सिंह ने आसपास के क्षेत्रों के राजाओं को अपने अधीन करके अपनी वीरता का प्रमाण दिया। विद्रोह करने वालों को सख्ती से दबाया और राज्य में शांति का वातावरण स्थापित करने के साथ-साथ लोगों की सुरक्षा पर ध्यान दिया। महाराजा गुलाब सिंह के शासनकाल में सब को धार्मिक स्वतंत्रता थी और सभी धर्मों तथा समुदायों के लोग उत्साह पूर्वक अपने त्यौहार मनाते थे।

अपने शासनकाल में महाराजा गुलाब सिंह ने बेगार को समाप्त कर उसे नया नाम कार सरकार दिया और जो लोग सरकारी काम में लगाये जाते थे उन को सरकारी गोदामों से राशन तथा दो समय का खाना दिया जाता था। सरकारी करों को खजाने में जमा किया जाता था और फजूल खर्ची पर रोक लगी हुई थी। अकाल की स्थिति में लोगों को अनाज की सप्लाई यकीनी बनाने के लिए बड़े बड़े स्टोरों में अनाज को जमा किया जाता था। उन्होंने सैनिक शक्ति को दृढ़ किया और प्रशासन में कई सुधार किए जिससे लोगों की आर्थिक दशा में बड़ी तब्दीली आई। मंदिरों तथा धार्मिक स्थानों के विकास के लिए उन्होंने 5 लाख रुपये के चंदे से धर्मार्थ ट्रस्ट की स्थापना की। महाराजा गुलाब सिंह जम्मू-कश्मीर तथा लद्दाख के लोगों में बड़े लोकप्रिय थे क्योंकि उनका शासन न्याय पर आधारित था। वह लोगों के सुख दुख में शामिल होते थे और दूर-दूर गांवों की यात्रा के दौरान गांववासियों के साथ बैठकर भोजन करते थे। हर व्यक्ति की उन तक पहुंच थी। एक रुपये के मामूली उपहार से हर व्यक्ति अपनी शिकायत महाराजा तक पहुंचा सकता था। उन्होंने अपने शासनकाल में अपना सिक्का जारी किया जिसे चिलकी रुपया कहते थे जिस की कीमत अंग्रेजी सिक्के में दस आने होती थी।

महाराजा गुलाब सिंह का स्वास्थ्य क्योंकि ठीक नही रहता था इसलिए उन्होंने अपने जीवन काल में ही 1856 ई. में अपने तीसरे पुत्र रणवीर सिंह को जम्मू-

कश्मीर की राज गद्दी पर बिठा दिया। वह 30 जून 1857 ई. को श्रीनगर में स्वर्ग सिधारे। वह एक सच्चे-सुच्चे इनसान तथा एक योग्य शासक थे जिन की गनना उन्नीसवीं शताब्दी के बड़े-बड़े शासकों में होती है।

महाराजा रणवीर सिंह (जुलाई 1830-12 सितम्बर 1885)

महाराजा रणवीर सिंह का जन्म जुलाई 1830 ई. को किला राम गढ़ (सांबा)में हुआ। वह महाराजा गुलाब सिंह के तीसरे पुत्र थे परंतु राजा सुचेत सिंह ने उनको गोद लिया हुआ था। रणवीर सिंह के दोनों भाईयों ऊधम सिंह तथा मोहन सिंह और राजा सुचेत सिंह का स्वर्गवास हो चुका था इसलिए गुलाब सिंह ने रणवीर सिंह को जम्मू-कश्मीर राज्य का राज तिलक दिया। महाराजा गुलाब सिंह के शासनकाल में ही रणवीर सिंह ने शासन की बारीकियों को समझ लिया था। रणवीर सिंह को फरवरी 1856 ई. को राज गद्दी पर बिठाया गया था। कुछ लोगों को रणवीर सिंह का महाराजा बनना पसंद न था इसलिए उनको जान से मारने का षड्यंत्र किया गया परंतु इसका पता चल गया और इसमें शामिल व्यक्तियों को कड़ा दंड दिया गया। उन्होंने अपनी सैन्य शक्ति से राज्य की सीमाओं को बढ़ाया और 1860 में गिलगित को भी जम्मू-कश्मीर का भाग बनाया जिस पर 1947 तक डोगरा महाराजाओं का अधिकार रहा। उन्होंने सेना का प्रबंध ठीक ढंग से चलाने के लिए उसे चार भागों में तकसीम किया। उस .समय सैना की 52 पलटनें थीं जिन में 18 हजार के लगभग जवान थे।

जब महाराजा रणवीर सिंह ने राज्य की बागडोर संभाली तो राज्य की सरकारी भाषा फारसी थी परंतु उन्होंने देवनागरी की भांति नई डोगरी लिपि तैयार करवाई और आदेश जारी किया कि दरबार में फारसी की बजाय डोगरी में प्रार्थना पत्र दिये जाऐं। सरकारी नौकरी प्राप्त करने के लिए डोगरी भाषा का ज्ञान अनिवार्य था। महाराजा ने राज्य में शिक्षा के प्रचार प्रसार की ओर विशेष ध्यान दिया और जब 1867 ई. में पंजाब विश्वविद्यालय की स्थापना हुई तो उन्होंने एक लाख रुपया चंदा दिया। राज्य में पहला छापा खाना 'विद्या विलास प्रेस' कायम किया गया। किताबों का अनुवाद करने के लिए एक विभाग बनाया गया। श्रीनगर तथा जम्मू में दसवीं तक स्कूल खोले गये। एक सरकारी लेख के अनुसार 1883 ई. में जम्मू स्कूल में जो कि रणवीर कालेज के नाम से जाना जाता था चार सौ विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते थे। रघुनाथ मंदिर जम्मू में हिंदी तथा संस्कृत पढ़ाने का उचित प्रबंध था। श्रीनगर में

स्थापित शिक्षा संस्थाओं में अरबी पढ़ाने का प्रबंध किया गया था। उन्होंने लोगों की भलाई बेहतरी की ओर विशेष ध्यान दिया ताकि लोगों को किसी प्रकार का कष्ट न हो। बाहर से योग्य लोगों को राज्य में नौकरियां दी गईं। अस्पताल बनवाए, सड़कें बनवाईं और वहां यात्रियों के ठहरने के लिए मुसाफिर खाने बनवाये। बाग लगवाये तथा डाक विभाग भी स्थापित किया। अदालतें स्थापित कीं, ताकि लोगों को न्याय मिल सके। अदालातों के अतिरिक्त महाराजा रणवीर सिंह और उनके बाद महाराजा प्रताप सिंह भी खुले दरबार में लोगों की शिकायतें सुनते थे। उन दिनों दरबार का दृश्य देखने योग्य होता था। फ्रेडरिक अपनी किताब जम्मू-कश्मीर में लिखता है ''महाराजा सुबह मंडी में खुला दरबार लगाते थे। उनके साथ उनके बड़े पुत्र मियां प्रताप सिंह, सलाहकार तथा अन्य दरबारी तथा अधिकारी भी होते थे। प्रार्थना पत्र देने वाले बाहर खड़े रहते थे और बारी-बारी महाराजा के सामने पेश होते थे। प्रार्थना पत्र महाराजा स्वयं पढ़ते थे। अंग्रेजी पर्यटकों के लिए अन्य अदालत थी। प्रिंस ऑफ वेल्ज के आने पर महाराजा रणवीर सिंह ने उनके ठहरने के लिए एक भव्य भवन का निर्माण करवाया जिसको बाद में अजायब घर में तब्दील कर दिया गया था जहां अब विधानसभा का अधिवेशन होता है। उनके शासन काल में सुचेतगढ़ से जम्मू तक पक्की सड़क का निर्माण भी किया गया। एक लेख के अनुसार यह सड़क बीस दिन में बन कर तैयार हुई थी और इस पर कुल तीस हजार रुपये खर्च आया था। मजदूरों को चार आने रोज की मजदूरी दी गई। अपने शासलकाल में महाराजा रणवीर सिंह ने जम्मू से श्रीनगर तक सड़क का निर्माण भी करवाया।''

महाराजा रणवीर सिंह ने अपने शासनकाल में बिना किसी भेदभाव के सब को उन्नति करने के बराबर अवसर प्रदान किए। अठाईस साल शासन करने के बाद वह 58 साल की आयु में स्वर्ग सिधारे।

महाराजा प्रताप सिंह (1850-1925)

महाराजा रणवीर सिंह की मृत्यु के बाद उनके बड़े पुत्र मियां प्रताप सिंह 35 वर्ष की आयु में जम्मू-कश्मीर के महाराजा बने। अभी उनको महाराजा बने हुए दो ही वर्ष हुए थे कि उनको अंग्रेज वायसराय का पत्र मिला जिसमें कहा गया कि वह शासन का काम काज ठीक ढंग से नहीं चला रहे और सरकारी खजाने को फजूल कामों में लुटा रहे हैं और यह कि वह अंग्रेजी सरकार के विरुद्ध षड्यंत्र कर रहे हैं। परंतु यह सारे आरोप निराधार थे। उन्होंने प्रशासन का काम चलाने के लिए राज्य

परिषद का गठन किया। राजा अमर सिंह को अध्यक्ष (प्रधानमंत्री), राजा राम सिंह को सेना अध्यक्ष, रायबहादर पंडित सूरज कौल को (मशीरमाल)तथा राय बहादर पंडित भाग राम को कानून मंत्री नियुक्त किया गया। 1900ई. में जब महामहिम लार्ड कर्जन वायसराय हिन्द जम्मू आये तो महाराजा प्रताप सिंह को और अधिक अधिकार दिये गए। 1921ई. में लार्ड चेमसफोर्ड ने दरबार में भाषण देते हुए कहा कि जम्मू-कश्मीर राज्य ने अंग्रेजी सरकार की दिल खोल कर सहायता की है और फौजियों की भर्ती में पहले स्थान पर है। युद्ध के दौरान भारतीय सेना में जो 21 हजार जवान भर्ती किए गए उनमें 6 हजार जवान जम्मू-कश्मीर के थे। इस बात से प्रसन्न होकर अंग्रेजी सरकार ने जम्मू-कश्मीर के लिए और भी कई सहूलतों की घोषणा की।

महाराजा प्रताप सिंह के शासनकाल में लोगों की भलाई के बहुत से काम हुए जिनमें सड़कों का निर्माण तथा तवी नदी पर पुल का काम भी शामिल है। नलकों द्वारा लोगों के घरों तक पानी पहुंचाने के लिए 1889ई. में तीन लाख रुपयों की लागत से जम्मू का वाटर वर्कस विभाग स्थापित किया गया। इस प्रकार 1896ई. में श्रीनगर में भी वाटर वर्कस विभाग बनाया गया। कोयला तथा लोहा निकालने के लिए महाराजा प्रताप सिंह ने एक विशेष विभाग स्थापित किया जिसका नाम जनरल सर्वे विभाग रखा गया। जम्मू की सबसे बड़ी नहर रणवीर नहर महाराजा रणवीर सिंह के शासनकाल में बनना शुरु हुई थी और महाराजा प्रताप सिंह के शासनकाल में बन कर तैयार हुई। 1900ई. तक राज्य में छः रेशम के कारखाने स्थापित किए जा चुके थे। कई नये विभागों की स्थापना भी की गई। उनके शासनकाल में राज्य का पहला समाचार पत्र 'रणवीर' प्रकाशित हुआ जिसके सम्पादक लाला मुल्ख राज सर्राफ थे। शिक्षा को बढ़ावा देने के लिए उन्होंने कई स्कूल खोले जिनमें पाठशालाएं भी शामिल थीं। 1899ई. में श्रीनगर में एक अजायब घर बनाया गया। बिजली विभाग की स्थापना की गई जिसमें एक लाख हार्स पावर बिजली पैदा करने की योजना बनाई गई। जब 1895 ई. में प्रिंस आफ वेल्ज जम्मू आये तो महाराजा प्रताप सिंह ने उनका शानदार स्वागत किय।

महाराजा प्रताप सिंह के शासनकाल में सैन्य शक्ति में वृद्धि हुई और सीमाओं पर होने वाली लड़ाईयों में भी सफलता प्राप्त हुई। मौलवी हशमत उल्ला लखनवी 'तारीख जम्मू' में लिखता है कि महाराजा रणवीर सिंह की भांति महाराजा प्रताप

सिंह के दरबार में भी सब को आने की इजाजत थी। जब वह महलों के मन्दिर में पूजा करने के लिए जाते तो उस समय वहां बहुत रौनक होती थी। उस समय भी लोगों की शिकायतों को सुना जाता था, और मौके पर ही फैसले किये जाते थे।

महाराजा प्रताप सिंह की यादाशत बड़ी तेज थी। एक बार वह किसी को देख लेते तो सालों तक नहीं भूलते थे। बिना भेदभाव के वह सबके साथ प्यार करते थे और हर समय प्रजा के हितों का ध्यान रखते थे।

महाराजा हरि सिंह (1895-1961)

महाराजा हरि सिंह का जन्म सितम्बर 1895 ई. में प्रताप सिंह के तीसरे भाई राजा अमर सिंह के घर हुआ था। उनके जन्म पर ज्योतिषियों ने भविष्यवाणी की थी कि बच्चा बड़ा भाग्यवान है और बड़ा होकर कुल का नाम रोशन करेगा और बड़ा तेजस्वी होगा। उनको अंग्रेजी पढ़ाने के लिए एक अंग्रेज औरत को रखा गया था। वह छः सात साल की आयु में अंग्रेजी में बातचीत कर लेते थे। 1914 ई. में राजकुमार हरि सिंह को महाराजा प्रताप सिंह ने सेनापति नियुक्त करके बहुत बड़ी जिम्मेदारी सौंपी थी इस के साथ ही जनरल सर हरि सिंह को कौंसल का वरिष्ठ सदस्य भी बनाया गया जिसके कारण हरि सिंह जी को राज्य के शासन की पूरी जानकारी हो गई थी।

महाराजा प्रताप सिंह के घर महारानी चाड़की से एक लड़का पैद हुआ परन्तु वह दस महीने के बाद स्वर्ग सिधार गया इसलिए महाराजा प्रताप सिंह के परलोक सिधारने पर फरवरी 1926 ई. में हरि सिंह को जम्मू कश्मीर की गद्दी पर बिठाया गया। हरि सिंह की ताजपोशी बड़े शानदार तरीके से हुई। राजतिलक का यह जश्न 18 जनवरी 1926 ई. से आरम्भ हुआ और 9 मार्च तक चलता रहा। जिसमें हिन्दोस्तान के कई महाराजाओं, राजाओं, नवाबों, जागीरदारों तथा अंग्रेजी अधिकारियों ने भाग लिया। राजतिलक का आयोगन पुरानी मंडी में हुआ और फिर जलूस पुरानी मंडी से दरबार गढ़ आया जिसमें हजारों लोग शामिल हुए। सारे जम्मू नगर को दुल्हन की भांति सजाया गया और रात को दीप माला की गई।

हरि सिंह ने महाराजा बनने पर अपने पहले भाषण में कहा था कि उनके लिए सभी धर्मों के मानने वाले एक समान हैं। सब धर्म उनके हैं और उनका धर्म न्याय है। उन्होंने देखा कि राज्य में बड़ी नौकरियों पर बाहर के लोग काम कर रहे हैं और राज्य के लोगों को स्थान नहीं मिल रहा । उन्होंने राज्य के लोगों की भलाई के लिए

राज्य में नौकरी करने तथा जमीन जायदाद खरीदने के लिए राज्य के स्थाईवासी होने की शर्त लगा दी और फैसला किया कि जिन लोगों के बुजुर्ग 1885 ई. से राज्य में आबाद चले आ रहे हैं उन्हें सरकारी नौकरी में प्राथमिकता दी जाये। 1928 ई. में जम्मू कश्मीर हाई कोर्ट की स्थापना की गई।

उन्होंने तवी-नदी तथा चिनाब नदी पर आठ लाख रुपयों की लागत से पुलों का निर्माण किया और 1938 ई. में जम्मू कश्मीर बैंक की स्थापना की। महाराजा हरि सिंह के शासनकाल में हरिजनों के लिए मंदिरों के दरवाजे खोल दिये गये। उन्होंने प्रजा की बेहतरी के लिए कई योजनाएं बनाई और 1947 ई में जम्मू कश्मीर राज्य का विलय भारत के साथ कर दिया और अपने पुत्र डॉ. कर्ण सिंह को राज्य का शासक घोषित कर स्वयं मुम्बई चले गये। जहां 1961 ई. में उनका स्वर्गवास हुआ।

डुग्गर की आस्था सूर्य पुत्री, तवी

मनुष्य की उन्नति तथा समृद्धि में नदियों का बहुत बड़ा योगदान रहा है जिनके बिना मनुष्य जीवन की कल्पना भी नहीं की जा सकती। मनुष्य के साथ-साथ अन्य जीव जन्तुओं तथा पेड़-पौधों के जीवन का आधार भी नदियों का जल ही है। आदि काल से ही मनुष्य तथा नदियों का अटूट संबंध रहा है और तब तक रहेगा जब तक इस धरती पर जीवन है। नदियों के किनारों पर बड़े-बड़े नगर आबाद हैं और नदियों के किनारों पर ही देशों की सभ्यता तथा संस्कृति का विकास हुआ है। नदियों के किनारों पर ही ऋषियों मुनियों तथा साधु संतों के आश्रम थे जहां हर समय भजन कीर्तन तथा धार्मिक प्रवचन हुआ करते थे। भारत की पवित्र धरती पर जितनी भी पवित्र नदियां हैं उन सब का वर्णन हमारे धर्म ग्रंथों में मिलता है इन नदियों ने एक मां की भांति भारत वासियों का पालन-पोषण किया है और यही कारण है कि भारत वासियों ने नदियों को मां का दर्जा दिया। नदियों के किनारों पर मेलों तथा धार्मिक पर्वों का आयोजन किया जाता है जहां लाखों की संख्या में श्रद्धालु भाग लेते हैं और पवित्र नदियों में स्नान करने के बाद उनके तटों पर बने देवी देवताओं के मंदिरों में पूजा करके आध्यात्मिक शांति प्राप्त करते हैं।

भारत के अन्य भागों की तरह डुग्गर देश में भी अनगिनित नदियां हैं जो धार्मिक दृष्टि से बड़ा महत्व रखती हैं। बैसाखी, शिवरात्रि आदि पर्वों पर उनके किनारों पर मेले लगते हैं। डुग्गर संस्कृति का विकास भी इन्हीं नदियों के किनारों पर हुआ है। अखनूर के पास अम्बारां गांव में खुदाई करने से जो अवशेष मिले हैं उनको देख कर ऐसा लगता है कि डुग्गर संस्कृति भी महनजोदारो तथा हड़प्पा संस्कृति का ही एक भाग थी। यहां से प्राप्त मूर्तियां, सिक्कों तथा महात्मा बुद्ध के समय की वस्तुओं से प्रतीत होता है कि इस क्षेत्र में रहने वालों पर बुद्ध धर्म का प्रभाव रहा होगा। डुग्गर के अन्य भागों से भी नदियों के किनारों से मिले अवशेषों से इस बात की पुष्टि होती है कि डुग्गर वासियों का नदियों से कितना घनिष्ठ संबंध था और आज भी उनके दिलों में नदियों के प्रति उतना ही आदर तथा सत्कार है जितना सृष्टि के आरंभ में था। डुग्गर की नदियों का धर्म ग्रंथों में वर्णन करके विद्वानों ने इन की महानता को और अधिक बढ़ा दिया है। डुग्गर वासियों का विश्वास है कि इन पवित्र नदियों में स्नान करने से मनुष्य जन्म-जन्म के पापों से मुक्त हो जाता है। डुग्गर देश को हरा

भरा तथा डुग्गरवासियों को समृद्ध बनाने में इन नदियों का बड़ा योगदान है। डुग्गर की प्रसिद्ध नदियां जिनका उल्लेख धार्मिक ग्रंथों में मिलता है उनमें गंगा की बड़ी बहन देविका, चंद्रभागा तथा सूर्य पुत्री तवी आदि शामिल हैं। धार्मिक दृष्टि से भी इनको बड़ा महत्वपूर्ण माना गया है।

यूं तो डुग्गर प्रदेश में बहने वाली हर नदी का अपना स्थान है परंतु तवी नदी की महानता शायद इसलिए अधिक मानी गई है क्योंकि जम्मू राज्य की राजधानी कभी इसी के तट पर बसे गांव किष्णपुर मनवाल के पास बबापुर (बबोर) में थी जो उस समय व्यापार का बड़ा केंद्र था और जहां ग्यारहवीं, बारहवीं शताब्दी के बने हुए मंदिरों के खंडरात आज भी देखे जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त कई अन्य छोटे बड़े राज्यों की राजधानियां भी तवी नदी के किनारे पर थीं। तवी नदी सूर्य पुत्री तोषी तथा श्याम वर्णी आदि नामों से भी प्रसिद्ध है। यह नदी चंद्रभागा की सहायक नदी है जिसके दाएं किनारे पर डुग्गर का सबसे बड़ा प्रसिद्ध नगर तथा जम्मू-कश्मीर राज्य की शीतकालीन राजधानी जम्मू आबाद है। तवी नदी जम्मू की शान तथा पहचान है। जम्मू और तवी एक दूसरे के बिना अधूरे हैं इसलिए जम्मू के साथ तवी अवश्य लिखा जाता है। सूर्य पुत्री तवी नदी का उद्गम स्थान भद्रवाह में कैलाश कुंड माना गया है। आरंभ में तो यह एक छोटे से नाले के रूप में बहती है परंतु रास्ते में अन्य छोटे छोटे नाले जब इस में मिलते हैं तो इसका आकर बड़ा हो जाता है। पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण इस की गति भी तेज होती है। चनैनी के पास तवी से एक नहर निकाल कर बिजली घर बनाया गया है। यह नदी जब उधमपुर पहुंचती है तो इस का पाट चौड़ा हो जाता है। बड़ी बड़ी चट्टानों के साथ टकराती और शोर मचाती जम्मू की ओर बढ़ती है। जम्मू पहुंचने के बाद तवी नदी की पहाड़ी यात्रा समाप्त हो जाती है और वह मैदानी क्षेत्र में प्रवेश करती है उसकी गति भी धीमी पड़ जाती है। जम्मू तथा तवी मानो एक ही सिक्के के दो पहलु है जिन को अलग करके नहीं देखा जा सकता है।

एक दंत कथा के अनुसार जैसे राजा भागीरथ ने भागीरथी के प्रवाह को बदल दिया था बिलकुल उसी तरह नागराज वासुकि के पुत्र राजा भैड़ तवी नदी के प्रवाह को बदल कर उसे जम्मू लाए थे। ऐसी मान्यता है कि बहुत समय पहले जम्मू तथा उसके आस-पास के क्षेत्र पर वासुकि नाग का राज था। एक बार वह त्वचा रोग से पीड़ित हुए और लाख यत्न करने तथा वैद्यों, हकीमों के इलाज से भी वह स्वस्थ न

हो सके। उनकी हालत दिन प्रति दिन बिगड़ती जा रही थी। राजा वासुकि का बहुत बड़ा परिवार था जिस में उस के कुल मिलाकर 84 पुत्र-पौत्र थे जिनमें काई, भैड़, कालूस, लनसू, धनसर तथा मानसर आदि शामिल थे। इन में काई, युवराज तथा भैड़ राजकुमार था। जब राजा वासुकि हकीमों तथाा वैद्यों के इलाज से स्वस्थ न हो सके तो मजबूर होकर राज परिवार के सदस्यों को ज्योतिषियों की शरण में जाना पड़ा। ज्योतिषियों ने सलाह दी यदि कोई कैलाश कुंड से नदी बहाकर लाए और उस जल में नागराज वासुकि स्नान करें तो उनका त्वचा रोग ठीक हो सकता है। तब राजा वासुकि ने अपने पुत्रों से कहा कि जो कोई सबसे पहले कैलाश कुंड से नदी बहा कर लाएगा उसे जम्मू की राज गद्दी दी जाएगी। भैड़ कैलाश कुंड की ओर चल दिया।

वहां पहुंच कर वह परेशान हो गया क्योंकि वहां बड़े कुंड थे। बहुत सोच विचार के बाद उसने कैलाश कुंड के आगे पड़ी शिला को अपनी पूरी शक्ति से हटा दिया तो वहां से जलधारा निकल पड़ी। भैड़ जल प्रवाह के साथ-साथ चल दिया और बाकी भाईयों से पहले नदी के रूप में जलधारा को लाने में सफल हो गया। राजा वासुकि ने उस जल में स्नान किया और त्वचा रोग से मुक्त हो गए। नागराज वासुकि ने प्रसन्न होकर भैड़ को जम्मू का राज दे दिया। फिर वही जलधारा जम्मू तक पहुंची जिसे तवी के नाम से पुकारा जाने लगा। काई को अखनूर कर राज मिला।

भैड़ देवता बड़ा चलित्तरी ते आन्दी तौ बगाई।
बिच तवी दे भैड़ बसदा, अखनूर बसदा काई।।

ऐसी मान्यता है कि आज भी भैड़ देवता का वास तवी नदी में एक बड़ी मछली के रूप में है जिसे कई जातियों के लोग अपना कुल देवता मानते हैं। कभी कभी श्रद्धालुओं को भैड़ देवता के दर्शन भी होते हैं और वह अपने स्थान से जम्मू तक के सारे क्षेत्र की रक्षा करते हैं।

डुग्गर के लोग तवी नदी की पूजा करते हैं। पुराने वक्तों में जब नलके नहीं थे तो डुग्गर वासी तवी नदी में स्नान करने जाते तथा इसके जल को घरेलू जरूरतों तथा खेती बाड़ी के लिए प्रयोग में लाते थे। जम्मू शहर के लोग प्रात: तवी में स्नान के बाद वापसी पर मंदिरों में स्थापित देवी देवताओं की पूजा करते थे। तवी तक जाने के लिए एक रास्ता बावे वाली गली, दूसरा पीर मिठ्ठा मस्तगढ़, तीसरा पक्की ढक्की, पजंतीर्थी तथा धौंथली आदि से जाता था। शहर का हर व्यक्ति स्त्रि, पुरुष

तथा बच्चा स्नान के बाद तवी के जल से भरे घड़ों तथा गागरों को सिरों पर उठा कर घरों को लाया करते थे।

तवी नदी के दाएं किनारे पर एक छोटी सी पहाड़ी पर बसे जम्मू शहर की सुंदरता देखते ही बनती है। जम्मू नगर तक पहुंचने के लिए तवी नदी पर तीन बड़े पुलों का निर्माण किया गया। जिससे हजारों की संख्या में छोटी बड़ी गाड़ियां तथा पैदल चलने वाले शहर के एक भाग से दूसरे भाग तक जाते हैं। मंदिरों के सुनहरी कलश शहर में प्रवेश करने वाले यात्रियों का मन मोह लेते हैं और हाथ फैला कर उनका स्वागत करते हैं। तवी के दाएं किनारे पर एक प्राचीन गुफा में आप शम्भु विराजमान हैं। यह गुफा मंदिर पीर खोह तथा जामावंत गुफा के नाम से प्रसिद्ध है। पीर खोह के उत्तर में जम्मू-कश्मीर के राजाओं तथा महाराजाओं के सुन्दर महल हैं जो वास्तुकला के बेहतरीन नमूने हैं परन्तु प्रशासन की लापरवाही के कारण खंडरात में तबदील होने के बिल्कुल करीब हैं। यह महल डुग्गर की बहुमूल्य विरासत के प्रतीक हैं जिन पर हर डुग्गर वासी को गर्व है। तवी नदी के किनारे ही शहर के उत्तर में नव निर्मित पैलेस तथा अमर महल है जो अच्छी हालत में हैं। इन महलों से तवी नदी तथा आसपास की पहाड़ियों के प्राकृतिक दृश्यों को देख कर हर व्यक्ति का मन प्रसन्नता से झूम उठता है। तवी के किनारे हरे भरे जंगलों को देख आंखों को ठंडक मिलती है। तवी के जल को साफ करके पाईपों द्वारा लोगों के घरों तक पहुंचाया गया है। बाहु किले के नीचे कुछ साल पहले बाग-ए-बाहु के निर्माण से जम्मू नगर की सुन्दरता में वृद्धि हुई है।

जम्मू नगर के बिलकुल सामने तवी के बायें किनारे पर बाहु दुर्ग है जिसकी अब केवल बाहरी दीवारें तथा इसके अन्दर बने महलों की भी दीवारें ही दिखाई देती हैं जिनकी छत्तें गिर चुकी हैं। किले के अन्दर जम्वाल राजपूतों की कुलदेवी महाकाली का छोटा सा मंदिर है। इन दिनों प्रतिदिन हजारों की संख्या में यात्री अपनी मनोकामनाएं पूरी करने के लिए बिना किसी भेद-भाव के माता के दरबार में उपस्थित होते हैं और माता का आर्शीवाद प्राप्त करते हैं। बाहुकिले के उत्तर में देवी महामाया का मंदिर है जहां किसी समय एक बड़ा नगर आबाद था जो धारा नगरी के नाम से जाना जाता था। किसी प्राकृतिक आपदा या भूंचाल आदि के कारण यह नगर तबाह हो गया। जो थोड़े बहुत लोग बचे वे भी यह स्थान छोड़ कर सुरक्षित स्थानों पर चले गये। महामाया तथा बाहु किले के मध्य कुछ समय पहले हर की

पौड़ी का निर्माण किया गया है। इस पवित्र स्थान पर लोग अपने मृत परिजनों की अस्थियों का तवी में प्रवाह करते हैं। यहां कई मंदिरों का निर्माण भी किया गया है। तवी नदी जम्मू नगर की महानता में वृद्धि करने के साथ-साथ राष्ट्रीय एकता की प्रतीक भी है क्योंकि इसके किनारे मंदिरों के साथ-साथ मस्जिदें तथा अन्य धर्मों के पूजा स्थल भी हैं। सूर्योदय तथा सूर्यास्त के समय जब सूर्य की किरणें, तवी के पवित्र जल पर पड़ती हैं जो ऐसा प्रतीक होता है मानों हम प्रकृति के समीप आ गये हैं।

तवी नदी, जिस का वर्णन धार्मिक ग्रन्थों में है डुग्गर वासियों के लिए ईश्वर का एक वरदान है जिसका डुग्गरवासियों की प्रगति तथा समृद्धि में बहुत बड़ा योगदान है। हम सबका भी यह कर्तव्य है कि इसकी पवित्रता तथा स्वच्छता को बनाये रखें और इसको साफ सुथरा रखने में पूर्ण सहयोग दें।

जम्मू के प्रसिद्ध शिव मंदिर

जम्मू की पावन धरती को ऋषियों मुनियों तथा साधु संतों की तपस्या स्थली होने का गर्व प्राप्त है। इस क्षेत्र के शासकों ने यहां की पवित्रता को ध्यान में रखते हुए स्थान-स्थान पर मंदिरों का निर्माण करवाया तथा पाठशालाएं स्थापित कीं जहां विद्यार्थियों को धार्मिक शिक्षा दी जाती थी और सरकार की ओर से उन के रहने तथा खाने-पीने का निःशुल्क प्रबंध किया जाता था।

इस क्षेत्र के हर राजा ने अपने राज्य में मंदिर बनवाए जिन में कुछ तो आज भी मौजूद हैं और उस समय की वास्तुकला के बेहतरीन नमूने समझे जाते हैं परन्तु जम्मू कश्मीर के डोगरा महाराजाओं के शासन काल में जम्मू क्षेत्र विशेष रूप से जम्मू शहर में बहुत से मंदिरों का निर्माण हुआ जिन में विभिन्न देवी देवताओं की सुंदर मूर्तियों की स्थापना की गई। जम्मू की हर गली, महल्ले तथा बाज़ार में मंदिरों का निर्माण हुआ। महाराजाओं के अतिरिक्त महारानियों तथा मंत्रियों और बड़े-बड़े अधिकारियों ने भी मंदिर बनवाए जिन में रघुनाथ जी तथा राधाकृष्ण जी के मंदिरों की संख्या अधिक है। जम्मू शहर में शिव तथा शक्ति के मंदिरों का निर्माण भी हुआ जिन में दुर्गा के अनेक रूपों की सुंदर मूर्तियों को स्थापित किया गया और बड़े-बड़े तथा छोटे शिव लिंगों की स्थापना की गई और यह सिलसिला आज भी जारी है। इन मंदिरों में सुबह, शाम पूजा, भजन कीर्तन तथा धार्मिक प्रवचनों की गूंज सारे शहर में सुनाई देती है।

अनगिनित मंदिर होने के कारण जम्मू को मंदिरों का शहर भी कहा जाता है। इन मंदिरों में स्थापति देवी देवताओं की सुंदर मूर्तियों के दर्शन तथा पूजा करने के लिए देश के कई भागों से श्रद्धालु यहां आते हैं।

जम्मू शहर में अधिकतर शिव मंदिरों का निर्माण डोगरा शासकों के समय में ही हुआ था जिन में शालीमार स्थित रणवीरेश्वर मंदिर, पंचवक्त्र, पीरखोह तथा आप शम्भु शिव मंदिर रूप नगर अधिक प्रसिद्ध हैं। इन मंदिरों में यूं तो प्रतिदिन भक्तों की भीड़ रहती है परन्तु शिवरात्रि पर्व पर तो यहां मेलों तथा भंडारों का आयोजन किया जाता है और हजारों की संख्या में शिव भक्त यहां आकर पूजा करते है उस समय भगवान शिव के जयकारों से सारा वातावरण गुंज उठता है। माता वैष्णों देवी की यात्रा पर आने वाले यात्री तथा पर्यटक भी इन मंदिरों में स्थापित शिव लिंगों की

पूजा करके आध्यात्मिक शांति प्राप्त करते हैं।

श्री रणवीरेश्वर मंदिर

जम्मू में शिव भक्तों की आस्था का सबसे बड़ा केंद्र है जो उत्तरी भारत में सब से बड़ा शिव मंदिर माना जाता है। इस मंदिर का निर्माण जम्मू-कश्मीर राज्य के महाराजा रणवीर सिंह द्वारा करवाया गया था। जो 1856 ई. में इस राज्य के महाराजा बने।

उन्होंने लद्दाख पर दो बार चढ़ाई की परन्तु वह वहां के लामाओं को अपने अधीन न कर सके। उन दिनों बाबा नन्दगिरी जी इस स्थान पर कुटिया बना कर रहते थे।

महाराजा रणवीर सिंह ने लद्दाख विजय के लिए आर्शीवाद प्राप्त करने के लिए अपने एक मंत्री को बाबा जी के पास भेजा। बाबा जी नाराज़ हुए और मंत्री से कहा कि जिस ने तुम्हें यहां भेजा है क्या वह स्वयं नहीं आ सकते हैं। अगले दिन स्वयं महाराजा रणवीर सिंह बाबा जी के दरबार में उपस्थित हुए। बाबा जी के आर्शीवाद से लद्दाख विजय हुआ और महाराजा बाबा जी के शिष्य बन गए। बाबा जी के कहने पर ही इस मंदिर का नाम रणवीरेश्वर मंदिर रखा गया था जहां महाराजा ने बाबा नन्द गिरी जी की गद्दी की स्थापना की। यह मंदिर इतनी ऊंचाई पर बनाया गया जहां से सारा शहर दिखाई देता है। निचले दो भागों में यात्रियों तथा पुजारियों और महंतों के ठहरने के लिए कमरे हैं। ऊपर के चबूतरे में भगवान शिव का मंदिर है।

बरामदे में महाराजा रणवीर सिंह जी का सुंदर चित्र है जिस के साथ ही अखंड ज्योति, माता महाकाली, पंच मुखी हनुमान जी, श्री गणेश जी, श्री कार्तिकय जी की मूर्तियां स्थापित हैं। इसके अतिरिक्त बरामदे में नन्दीगण जी भी विराजमान हैं। मंदिर में प्रवेश करते ही श्याम रंग के लगभग सात फुट ऊंचे शिवलिंग के दर्शन होते हैं जिसे जयपुर से लाया गया था। बड़े शिवलिंग के दोनों ओर पांच-पांच शिव लिंगों की स्थापना भी की गई है जो बनावट में बड़े शिवलिंग से मिलते हैं परन्तु ऊंचाई में कम हैं। मंदिर में भगवन शिव तथा माता पार्वती जी की सफेद संगमरमर की बड़ी मूर्तियों के साथ गणेश जी की छोटी मूर्ति की स्थापना की गई है। कीमती वस्त्रों तथा आभूषणों से सुसज्जित यह मूर्तियां बड़ी मनमोहक हैं। श्री जी.एन. गनहार के अनुसार यह मूर्तियां राजस्थान से और छोटे शिवलिंग नर्मदा नदी से लाए गए थे।

इन शिवलिंगों का अभिनन्दन तथा स्वागत महाराजा ने रणवीर सिंह पुरा में किया था और वहां से पवित्र मूर्तियों को बैल गाड़ियों द्वारा जम्मू लाया गया था।

एक दंत कथा के अनुसार जब मंदिर बनकर तैयार हो गया तो शिवलिंग की स्थापना के लिए जब उसे उठाने का यत्न किया गया तो वह इतना भारी हो गया कि उसे उठाया न जा सका। महाराजा बहादर को सूचित किया गया। उस समय वह अस्वस्थ थे इस लिए उन्होंने अपने पुत्र राम सिंह को भेजा परन्तु सफलता न मिली। अंत में महाराजा बीमारी की हालत में उठकर मंदिर परिसर में आए। जब उन्होंन शिवलिंग को स्पर्श किया और हर हर महादेव, बम बम भोले, तथा जयशिव शम्भु के जयकारों की गूंज में शिवलिंग को उठाने का यत्न किया गया तो शिवलिंग बड़े हल्के हो गए। तब श्रद्धालुओं ने बड़ी आसानी से शिवलिंग की स्थापना कर दी।

भगवान शिव माता पार्वती की मूर्तियों के सामने सफेद बिलौर के बने 11 शिवलिंग एक वेदी पर स्थापित किए गए हैं। मंदिर की भीतरी दीवारों पर भगवान शिव की लीला तथा चमत्कारों पर आधारित चित्र बने हुए हैं। जम्मू कश्मीर धर्मार्थ ट्रस्ट के चेयरमैन ट्रस्टी डा. कर्ण सिंह ने 13 जनवरी 1986 को मंदिर परिसर में अपने परदादा महाराजा रणवीर सिंह की प्रतिमा की स्थापना करवाई। इसी परिसर में एक वट वृक्ष के नीचे मंदिर के पहले महंत बाबा नन्द गिरी जी की पवित्र समाधि है। मंदिर के वर्तमान महंत श्री स्वामी ऋषि बान जी हैं जिनकी नियुक्ति कुछ समय पहले धर्मार्थ ट्रस्ट के चेयरमैन ट्रस्टी डा. कर्ण सिंह द्वारा की गई है।

पंचवक्त्र शिवालय

राजेन्द्र बाजार के पास निर्मित भगवान शिव का यह मंदिर जम्मू के प्राचीन मंदिरों में गिना जाता है। क्योंकि मंदिर के फर्श पर चांदी के रुपये लगे हुए हैं इस लिए यह मंदिर रुपयों वाला मंदिर के नाम से भी प्रसिद्ध है।

कहते हैं कि इस मंदिर का निर्माण तथा इस में शिवलिंग की स्थापना राजा मालदेव के शासनकाल में हुई थी परन्तु श्री केदारनाथ शास्त्री जी के अनुसार इस मुंदिर का निर्माण राजा जसवंत देव के बड़े पुत्र ने अठारहवीं शताब्दी में करवाया था। एक सरकारी रिपोर्ट के अनुसार इस शिवालय को राजा रंजीत देव ने बनवाया था। इस स्थान को इस लिए भी पवित्र माना गया है क्योंकि यहां आप शम्भु प्रगट हुए थे। एक दंत कथा के अनुसार राजा मालदेव इस स्थान पर घोड़ों का अस्तबल बनवाना चाहते थे। खुदाई का काम जोर-शोर से चल रहा था कि एक मजदूर की

कुदाल एक पत्थर से टकराई तो वहां से लहू की धारा बह निकली जिसकी सूचना राजा को दी गई। पत्थर को बाहर निकाला गया जो पूर्ण शिवलिंग था। इस स्थान की पवित्रता को ध्यान में रखते हुए राजा मालदेव ने यहां मंदिर का निर्माण करवा कर उस में धरती से प्रगट होने वाले शिव लिंग की स्थापना कर दी। महाराजा प्रताप सिंह ने यहां नए मंदिर का निर्माण करवाया और शिवलिंग की वेदी पर चांदी लगवा दी। धार्मिक ग्रंथों के अनुसार पंच वक्त्र का अर्थ पांच मुंह वाला है।

यह मंदिर क्यों कि शहर के मध्य में है इसलिए यहां प्रतिदिन सुबह शाम शिव भक्तों का आना जाना लगा रहता है परंतु त्यौहारों पर विशेष रूप से शिवरात्रि को यहां खूब चहल पहल होती है। वास्तुकला की दृष्टि से यह मंदिर उत्तर भारत में बने मन्दिरों से मिलते हैं। मंदिरों के सामने बेरी का एक वृक्ष है जो शायद उतना ही पुराना है जितना यह शिव मंदिर है। मंदिर में स्थापित शिवलिंग की ऊंचाई एक फूट से भी कम है। मंदिर परिसर में महावीर जी, विश्वकर्मा, माता दुर्गा तथा महंत बलवंत गिरी जी का समाधि मंदिर है। प्राचीन मंदिर के साथ कुछ अन्य महंतों की समाधियां हैं जो इस पवित्र गद्दी पर विराजमान रहे। महंत जी तथा पुजारियों के रहने के लिए कमरों का निर्माण किया गया है। आज तक लगभग तेरह महंत इस पवित्र गद्दी की शोभा बढ़ा चुके हैं। हर मंदिर की पूजा के लिए पुजारी नियुक्त किए गए हैं यहां एक गौशाला भी है।

पीर खोह

सूर्य पुत्री तवी नदी के दांए किनारे तथा जम्मू शहर के पूर्व में स्थित यह शिव मंदिर पीरखोह के नाम से प्रसिद्ध है। इस गुफा में ऋषियों मुनियों के अतिरिक्त पीरों फकीरों ने भी तपस्या की जिस के कारण इसे पीर खोह भी कहा जाता है। मंदिर के आस पास का वातावरण बड़ा सुहावना तथा स्वच्छ है। यहां स्थापित शिवलिंग के दर्शन करने के लिए भक्तों को दस मीटर के करीब गुफा में से गुजरना पड़ता है। यह गुफा डेढ़ मीटर चौड़ी है जिस के फर्श पर सफेद संगमरमर लगा हुआ है। गुफा में रोशनी का भी उचति प्रबंध है ताकि भक्तों को शिवलिंग तक पहुंचने तथा वहां पूजा अर्चना करने में परेशानी न हो। यहां भी त्यौहारों पर मेलों का आयोजन किया जाता है जब दूर-दूर से श्रद्धालु भगवान शिव के दर्शन करने आते हैं। एक दंत कथा के अनुसार गुरु गोरख नाथ जी ने भी इसी गुफा में तपस्या की थी और आज से कोई छ:सात सौ वर्ष पहले पीर गरीब नाथ जी ने भी ईश्वर भक्ति के लिए इसी

पवित्र गुफा की खोज की थी। इस गुफा को जामावंत गुफा भी कहा जाता है। यहां पीर मिट्ठा जी ने भी लंबे समय तक ईश्वर की भक्ति की है। वह पीर गरीब नाथ जी के मित्र थे और दोनों एक दूसरे की आध्यात्मिक शक्ति की परख के लिए कई चमत्कार भी करते थे। पीर गरीब नाथ जी की ईश्वर भक्ति से प्रभावित हो कर राजा अजायब देव ने इस गुफा पर मंदिर का निर्माण करवाया था। जामावंत गुफा में भगवान श्री कृष्ण, शिव पार्वती, गणेश जी, गुरु गोरख नाथ जी और जामावंत जी की सुंदर मूर्तियों की स्थापना की गई है। मंदिर परिसर में भगवान राम, माता सीता, लक्ष्मण जी तथा हनुमान जी का मंदिर है। बरामदे में बने हवन कुंड की धूनी सदियों से जलती आ रही है। साधुओं तथा यात्रियों के लिए यहां लंगर का प्रबंध भी किया गया है। मंदिर में स्थापित शिवलिंग अन्य मंदिरों में स्थापित शिवलिंगों से हटकर है जो शायद ही किसी अन्य मंदिर में हो। इस शिवलिंग की बनावट रुद्राक्ष की भांति है जिस की पूजा करने तथा जिस के सामने सच्चे दिल से प्रार्थना करने वालों की हर मनोकामना पूरी होती है।

पीर खोह तक पहुंचने के लिए महल्ला पीर मिट्ठा, दलपतियां, मस्तगढ़, जुलाहका महल्ला तथा पक्की ढक्की से रास्ते जाते हैं। एक अन्य नव निर्मित गुफा में मां दुर्गा के नौ रूपों, माता शेलपुत्री, माता ब्रहाचारिणी, माता चंद्र घंटा, माता कुष्मांडा, स्कन्द माता, कात्यानी, माता काल रात्रि, माता महा गौरी तथा माता सिद्धिदात्री की सुंदर मूर्तियां स्थापित की गई हैं। इस समय मंदिर का प्रबंध पीर रत्न नाथ जी की देख रेख में सुचारु रूप से चल रहा है।

शिव मंदिर-रूपनगर (सथरे)

जम्मू शहर के उत्तर में आप शम्भु भगवान शिव का प्राचीन मंदिर भी बड़ा प्रसिद्ध तथा शिव भक्तों के आकर्षण का केंद्र है। यह मंदिर शहर से दूर एकांत तथा स्वच्छ वातावरण में निर्मित है। यद्यपि यह मंदिर बहुत पुराना है परन्तु शहर से दूर होने के कारण बहुत कम लोगों को इस की जानकारी थी। यहां स्थापित शिवलिंग थोड़ा खंडित है। अब जम्मू शहर के विस्तार के कारण मंदिर के आस पास कई, रिहायशी कालोनियां बनने से यहां बहुत रौनक हो गई है और सुबह शाम शिव भक्तों की यहां भीड़ होती है। किसी समय यहां जंगल बियाबान था जहां कुछ परिवार रहते थे जो भैंसें पालते और उन का दूध बेच कर गुजारा करते थे। उनकी भैंसें इसी जंगल में चरतीं थीं। एक भूरे रंग की भैंस प्रतिदिन शिवलिंग के पास

आकर खड़ी हो जाती। उसके थनों से दूध निकल कर शिवलिंग पर पड़ता और उसी में समा जाता था। वह भैंस घर आकर दूध नहीं देती थी। एक दिन भैंस के मालिक ने उसका पीछा किया तो देखा कि भैंस एक पत्थर (शिवलिंग) पर आकर अपना सारा दूध वहां छोड़ रही है। मालिक ने समझा कि यह जरूर कोई भूत है जो उसे देख कर अपना रूप बदल बैठा है। मालिक ने कुल्हाड़ी से पत्थर पर वार किया जिससे वह पत्थर (शिवलिंग) खंडित हो गया और उस में से खून की धारा बह निकली। जब यह खबर जम्मू के राजा के पास पहुंची तो उस ने शिवलिंग को बाहर निकालने का आदेश दिया ताकि जम्मू में किसी उचित स्थान पर उस की स्थापना की जा सके। जम्मू के राजा ने अपने ऐहलकारों को शिवलिंग जम्मू लाने को कहा परंतु वे शिवलिंग को खोद कर बाहर निकालने में असफल रहे। थक हार कर राजा ने वहीं जंगल में एक छोटा सा मंदिर बनवा दिया। यूं तो प्रतिदिन श्रद्धालु यहां आते हैं परंतु हर सोमवार को चार बजे रघुनाथ मंदिर से शिव भक्तों की एक बस यहां आती है। शिवरात्रि को यहां पर मेला लगता है और शिव लिंग के दर्शनों के लिए भक्तों की लंबी लंबी कतारें लगती हैं। सुनने में आया है कि जम्मू शहर के अन्य शिव मंदिरों से यहां पर श्रद्धालुओं की संख्या अधिक होती है। स्थानीय लोग तथा धार्मिक संस्थाएं इस अवसर पर भंडारों का आयोजन भी करती हैं। यहां पर मां दुर्गा का भी एक बड़ा ही सुंदर मंदिर है। मंदिर का प्रबंध चलाने तथा इसे और अधिक सुंदर तथा आकर्षक बनाने के लिए एक कमेटी का गठन किया गया है।

जम्मू का 'हैरीटेज कॉलेज'

महाराजा गुलाब सिंह ने 1846 ई. में अमृतसर सन्धि के अन्तर्गत जम्मू कश्मीर राज्य की स्थापना की और राज्य की सीमाओं को दूर-दूर तक बढ़ाया। 1856 ई. में उन्होंने अपने जीवन काल में ही रणवीर सिंह को जम्मू-कश्मीर राज्य की बागडोर सौंप दी। महाराजा रणवीर सिंह ने 1856 ई. से 1885 ई. तक कुशलतापूर्वक राज्य का शासन चलाया। उनके तीन बेटे थे। प्रताप सिंह, राम सिंह तथा अमर सिंह। प्रताप सिंह का जन्म 18 जुलाई 1848 ई. को महाराजा रणवीर सिंह की पहली रानी सीबा के गर्भ से रियासी के राजमहल में हुआ था। महाराजा रणवीर सिंह के स्वार्गवास पर मियां प्रताप सिंह 14 सितम्बर 1885 ई. को जम्मू-कश्मीर के महाराजा बने और 1925 ई. तक हकूमत की। हकूमत संभालतें ही उनको कई प्रकार के षड्यंत्रों से दो चार होना पड़ा परन्तु उसके बावजूद उनका शासन काल डोगरा इतिहास का स्वर्ण युग कहलाता है क्योंकि उन्होंने प्रजा की भलाई के लिए बहुत से काम किये। उनके शासन काल में किसानों को कई प्रकार की सहूलतें दी गईं जिसके कारण पैदावार में वृद्धि हुई और लोग खुशहाली की ओर बढ़ने लगे। उनके शासनकाल में जम्मू से श्रीनगर तक सड़क बनी और सेयालकोट से जम्मू तक रेलवे लाईन द्वारा जम्मू कश्मीर राज्य को देश के अन्य भागों से जोड़ा गया।

महाराजा प्रताप सिंह अपने पूर्वजों की तरह ही धार्मिक विचारों के थे। उनके शासनकाल में सभी त्यौहार बड़ी धूम-धाम से मनाए जाते थे जिनमें सभी धर्मों के लोग शामिल होते थे।

दीवाली, दशहरा, बैसाखी, लोहड़ी, बसंत पंचमी, शिवरात्रि, राम-नवमीं तथा जन्म अष्टमी आदि पर्वों को सरकारी तौर पर मनाया जाता था और विशेष रूप से उनको मनाने के लिए सरकारी खजाने से धन खर्च किया जाता था। वह सुबह से दोपहर तक भगवान की पूजा में व्यस्त रहते थे।

उसके बाद ही वह दरबार में जाते थे। धार्मिक पर्वों पर मंदिरों तथा शहर की गलियों और बाजारों को सुन्दर ढंग से सजाया जाता था। महाराजा प्रताप सिंह को डुग्गर के धर्मात्मा राजा के रूप में भी याद किया जाता है। वह-बड़े दयालु, कृपालु तथा प्रजा के हितैषी थे। उनके शासनकाल में सुख शांति तथा समृद्धि थी और सभी धर्मों के मानने वाले भाईयों की तरह रहते थे।

महाराजा प्रताप सिंह के शासनकाल में 1905 ई. में प्रिंस आफ वेल्स ने जम्मू का दौरा किया। राज्य सरकार की ओर से उनका शानदार स्वागत किया गया। इससे पहले भी महाराजा रणवीर सिंह के शासनकाल में 20 जनवरी 1876 ई. को प्रिंस आफ वेल्स जम्मू आए और दो दिन यहां रहे। उनके आगमन पर जम्मू शहर को दुल्हन की तरह सजाया गया था।

तवी नदी के किनारे पहुंचने पर उनको 21 तोपों की सलामी दी गई और जब वह गुमट गेट पर पहुंचे तो पुनः सलामी दी गई। उनका स्वागत करने के लिए महाराजा बहादर स्वयं मीरां साहिब तक गये। जब महाराजा प्रताप सिंह के शासनकाल में प्रिंस आफ वेल्स जम्मू पधारे तो उनके लिए स्वागत समारोह का आयोजन किया गया। अपने भाषण में महाराजा बहादर ने कहा कि राज्य हर लिहाज से उन्नति की ओर अग्रसर है। प्रजा की भलाई के लिए कई विभागों की स्थापना की गई और अन्य कई योजनाओं को हाथ में लिया गया है।

इस अवसर पर उन्होंने ये भी घोषणा की कि वह राज्य के युवाओं की उच्च शिक्षा के लिए प्रिंस आफ वेल्स नाम से जम्मू में एक कालेज खोलना चाहते हैं ताकि यहां रहने वाले लोगों को उच्च शिक्षा उपलब्ध करवाई जा सके। कालेज न होने के कारण बहुत से लोगों को उच्च शिक्षा के लिए लाहौर जाना पड़ता है जिससे उनको कई प्रकार की कठिनाईयों से दो चार होना पड़ता है। जम्मू में अपने भव्य स्वागत के लिए प्रिंस आफ वेल्स ने महाराजा बहादर का धन्यवाद किया।

राज्य में उच्च शिक्षा का प्रबंध न होने के कारण बहुत कम लोग ही बी.ए कर पाते थे इसलिए राज्य में ऊंचे पदों पर पंजाब के पढ़े लिखे लोग ही नियुक्त किये जाते थे। कालेज खुल जाने से यहां के रहने वाले भी प्रशासन में ऊंचे पदों पर नियुक्त होने लगे। इस प्रकार वे सरकारी नौकरियों में पंजाबियों के प्रतिद्वन्दी बनने लगे। इस पर महाराजा बहादर ने सरकारी नौकरियों के लिए जम्मू कश्मीर का स्थाई निवासी होने की शर्त लगा दी और 1925 ई में एक आदेश जारी किया जिसके अन्तर्गत यह जरूरी कर दिया गया कि राज्य में जमीन तथा नौकरी उसी को मिलेगी जो राज्य का स्थाई निवासी होगा। इस आदेश के जारी होने पर राज्य के पढ़े लिखे युवकों को सरकारी नौकरी प्राप्त करने में आसानी हो गई।

उन दिनों गिने चुने समृद्ध घरानों के बच्चे ही उच्च शिक्षा प्राप्त कर सकते थे और राज्य में बी.ए. पास युवकों की संख्या बहुत कम थी। जो व्यक्ति पंजाब विश्वविद्यालय

से बी.ए. करता था लोग उस को देखने तथा मबारक बाद देने के लिए आते थे। लोग अपने नाम के साथ बी.ए. या एम.ए लगाने में गर्व सहसूस करते थे। उनको राज्य सरकार के बड़े-बड़े पदों पर नियुक्त किया जाता था। महाराजा प्रताप सिंह के शासनकाल में अंग्रेजी तरज के स्कूलों को राज्य के कई भागों में खोला गया जिन में पंजाब विश्वविद्यालय के पाठक्रम के अनुसार शिक्षा दी जाने लगी और जम्मू में पहला हाई स्कूल खोलने का आदेश जारी किया गया जिसका नाम रणवीर हाई स्कूल रखा गया। आज भी यह स्कूल जम्मू प्रांत का सबसे बड़ा स्कूल माना जाता है। 1890 ई. में पंजाब विश्वविद्यालय के पाठयक्रम के अनुसार शिक्षा प्रदान करने वाले केवल दस ही स्कूल थे। जिनमें एक हाई स्कूल एक मिडल स्कूल आठ प्राईमरी। इन स्कूलों में कुल 819 विद्यार्थी शिक्षा प्राप्त करते थे। प्रिंस आफ वेल्स की जम्मू यात्रा जम्मू-कश्मीर राज्य में शिक्षा के प्रचार तथा प्रसार में बड़ी महत्वपूर्ण समझी जाती है। स्थापना के समय कालेज का नाम प्रिंस आफ वेल्स कालेज रखा गया था जो 1948 ई. तक इसी नाम से जाना जाता था। भारत की स्वतंत्रता के प्रश्चात 4 जून 1948ई. को यह कालेज राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के नाम पर गांधी मैमोरियल कालेज कहलाने लगा जहां साईस तथा आर्टस विषयों को पढ़ाया जाता था। विद्यार्थियों की बढ़ती संख्या को ध्यान में रखते हुए 20 सितम्बर 1954 ई. को कालेज के दो भाग कर दिये गये।

एक का नाम गांधी मैमोरियल साईंस कालेज तथा दूसरे का गांधी मैमोरियल आर्टस कालेज रखा गया। गांधी मैमोरियल आर्टस कालेज छः साल तक इसी कालेज के परिसर में चलता रहा। आर्टस कालेज के लिए कुछ कमरों का भी निर्माण किया गया जो आज भी इसी कालेज का एक भाग हैं। आर्टस कालेज की नई ईमारत का निर्माण वर्तमान जम्मू विश्वविद्यालय के सामने किया गया। जब नवनिर्मित गांधी मैमोरियल आर्टस कालेज में साईंस भी पढ़ाई जाने लगी तो कालेज का नाम मौलाना आजाद मैमोरियल कालेज रखा गया।

प्रिंस आफ वेल्स कालेज जिसका वर्तमान नाम गांधी मैमोरियल कालेज है ज्यूल सिनेमा के पश्चिम में नहर की ओर जाने वाली सड़क की बाईं ओर स्थित है। कालेज की ईमारत उस जमाने की अंग्रेजी वास्तुकला का अद्भुत नमूना समझी जाती है। प्रिंस आफ वेल्स कालेज के भवन का शिलान्यास 16 दिसम्बर 1910 ई. को सर फ्रांसिस यंगहसबैंड रेजिडैन्ट कश्मीर ने रखा था यद्यापि कालेज में पढ़ाई

का काम अजायब घर की ईमारत में आरम्भ हो चुका था। महाराजा प्रताप सिंह की ओर से जम्मू शहर के बाहर 65 एकड़ जमीन अलाट की गई जो तवी नदी के दायें किनारे के साथ–साथ फैली हुई है। 20 अप्रैल 1907 ई. से कालेज अजायैबघर की ईमारत में शुरू हो चुका था जिसमें प्रो. आर.एन. मुकर्जी आफीशेटिंग प्रिंसीपल प्रो. ई. मित्र इतिहास विभाग, पं. लक्ष्मण शास्त्री संस्कृत, तथा मौलवी मुहम्मद सादिक फार्सी तथा अरबी के प्राध्यापक के तौर पर काम करते थे। इसके बाद जुलाई में कालेज में कुछ स्थाई नियुक्तियां की गईं जिनमें एफ.एम. डाडिना प्रिंसीपल तथा अंग्रेजी के प्राध्यापक तथा अन्य विषय पढ़ाने वाले प्राध्यापक शामिल थे। जून 1912 ई. में कालेज की बड़ी ईमारत तथा कैमिस्ट्री तथा फिजिक्स के ब्लाकों का निर्माण कार्य पूरा हो गया और 18 सितम्बर 1912 को प्रिंस आफ वेल्स कालेज को नई ईमारत में लाया गया। नई ईमारत में कालेज के पहले प्रिंसीपल प्रो. एस राबसन नियुक्त हुए तथा अर्थशास्त्र, भूगर्भ शास्त्र, धातु शास्त्र, अंग्रेजी, अंक शास्त्र इतिहास, संस्कृत, फारसी तथा अरबी पढ़ाने के लिए भी प्राध्यापकों की नियुक्तियां की गई। 1908 ई. में यह कालेज पंजाब विश्वविद्यालय के अधीन कर दिया गया था। जनवरी 1910 ई में यहां भूगर्भ शास्त्र तथा अरबी को बारहवीं कक्षा तथा अंग्रेजी, अंक शास्त्र, भूगर्भ शास्त्र, संस्कृत तथा फारसी विषयों को बी.ए.तक पढ़ाने का प्रबंध किया गया। 1911 ई. में तीन विषय तत्वज्ञान, इतिहास तथा अर्थशास्त्र भी बी.ए.तक पढ़ाया जाने लगा। कालेज की स्थापना से लेकर अब तक 28 विद्वानों के हाथ में कालेज का प्रबंध चलाने की जिम्मेदारी रही है। पहले प्रिंसीपल श्री आर.एन मुकर्जी थे। उनके बाद एम.एम.डाडीना, श्री एच.आर. नन्दा, एस.आर. सूरी श्री गिरधारी लाल गुप्ता श्री एस.डी. मल्होत्रा, श्री मेहदी रत्ता, श्री पी. एन.काज़ी, श्री एल.डी. सूरी श्री घनश्याम जी, श्री तीर्थ राम, श्री एस.एम. इकबाल, श्री एम.आर. भारद्धाज, श्री रोमेश चौधरी, श्री जी.पी. सिंह, श्री के.एल गुप्ता, श्री जे.एल कोतवाल, श्री विजय प्रकाश, श्री एस. सपरु, श्री एम.एस साहनी, श्रीमती सरला कोहली इस कालेज में प्रिंसीपल के तौर पर काम कर चुके हैं। वर्तमान प्रिंसीपल श्री एन.डी. वानी ने पहली नवम्बर 2003 को इस कालेज का कार्यभर संभाला और उसी दिन से वह कालेज के विकास कार्यों में विशेष रुचि ले रहे हैं। जम्मू क्षेत्र के दूर दराज के विद्यार्थियों के ठहरने के लिए 5 जुलाई 1910 को कालेज के साथ ही तवी नदी के किनारे 50 कमरों का एक होस्टल बनाया गया, जहां विद्यार्थियों के ठहरने तथा खाने

पीने का प्रबंध किया गया। जिन लड़कों को होस्टल में स्थान नहीं मिलता था वे जम्मू शहर के मन्दिरों, धर्मशालाओं तथा सभाओं में रहते थे। इस समय होस्टल में 83 कमरे हैं जिनमें 250 के करीब विद्यार्थी रह रहे हैं। कालेज में दो बड़े हाल हैं जो पुराना हाल तथा नया हाल के नाम से जाने जाते हैं। पुराना हाल तो प्राचीन भवन के मध्य, में है जहां समय-समय पर सांस्कृतिक कार्यक्रम, वाद विवाद, विद्यार्थियों की परीक्षा तथा अन्य कार्यक्रमों का आयोजन किया जाता है इस हाल के चारों ओर क्लास रूम बने हुए हैं। नया हाल मेडिकल ब्लाक में है जिसका निर्माण बाद में किया गया था। इस हाल में विद्यार्थी विभिन्न खेलें खेलते हैं। कालेज में बहुत बड़ा खेल का मैदान है। इतना बड़ा खेल का मैदान राज्य में शायद कहीं नहीं है। यहां स्थानीय खिलाड़ी तथा पुलिस और सेना की टीमें क्रिकेट, फुटबाल तथा हाकी के मैच भी खेलती हैं। इस समय यह कालेज दो शिफ्टों में चल रहा है। सुबह की शिफ्ट में 2600 छात्र तथा छात्राएं विभिन्न विषयों में 90 प्राध्यापकों से शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। शाम की शिफ्ट में 500 छात्र छात्राएं शिक्षा प्राप्त करते हैं। कालेज में अनुशासन पर अधिक जोर दिया जाता है ताकि सभी विद्यार्थी पढ़ाई की ओर पूरा ध्यान दें और अच्छे नागरिक बनकर अपने देश की सेवा कर सकें।

कालेज के जियालोजी विभाग में अपनी किस्म का बेहतरीन संग्रहालय है जिस में पत्थरों के बहुत से नमूने रखे गये हैं। इस विभाग में 10 लाख साल पुराना 10 फुट 8 इंच लम्बा हाथी का दांत रखा है जिसे वर्ममान नगरोटा के पास जगटी क्षेत्र से खोद कर लाया गया है। ऐसा कहा जाता है कि तवी नदी के साथ-साथ तह दार चट्टानों में से प्राचीन काल के जीव जन्तुओं की कई हड्डियां मिली हैं जो पत्थर का रूप धारण कर चुकी हैं। कालेज की इस ऐतिहासिक इमारत का निर्माण निपुण कारीगरों ने किया था जो आज हमारी विरासत का अद्भुत नमूना समझी जाती है। यह ईमारत हमें उन लोगों की याद दिलाती है जो प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से इसके साथ जुड़े रहे या जिन्होंने शिक्षा के इस मन्दिर में काम किया। शिक्षा के इस मन्दिर ने बहुत से विश्वविख्यात संगीतगार विद्वान, पत्रकार, कानून दान, राजननीतिज्ञ उच्च स्तर के प्रशासनिक अधिकारी, समाज सेवक, फौजी जनरल तथा समस्त मानव जाति का कल्याण चाहने वाले व्यक्तियों को पैदा किया जो अपनी योग्यता का लोहा देश विदेश में मनवा चुके हैं। इन व्यक्तियों ने जम्मू-कश्मीर राज्य तथा भारत का नाम

ऊंचा किया है, इनमें से कुछ भारत तथा विश्व के अन्य भागों में भी रह रहे हैं।

वर्तमान साईंस कालेज तथा स्वतंत्रता से पहले का प्रिंस आफ वेल्स कालेज हमारी अमूल्य विरासत का चिन्ह है जो अपने सौ वर्ष पूरे कर चुका है। इस अमूल्य विरासत तथा वास्तुकला के अद्भुत नमूने की रक्षा करना हम सब का मुख्य कर्तव्य है। सरकार की ओर से इस कालेज को एस.पी कालेज श्री नगर के साथ हैरीटेज कालेज घोषित किया गया है। इस घोषणा पर प्रसन्नता व्यक्त करने के लिए कालेज में एक समारोह का आयोजन किया गया जिसकी अध्यक्षता जम्मू विश्वविद्यालय के उपकुलपति प्रो. अमिताभ मट्टू ने की। इस अवसर पर जम्मू-कश्मीर के शिक्षा मंत्री श्री हर्ष देव सिंह मुख्य अतिथि थे। अपने भाषण में शिक्षा मंत्री ने कहा कि सौ वर्ष पूरे करने पर इस कालेज को हैरीटेज कालेज घोषित किया जाना जम्मूवासियों के लिए प्रसन्नता तथा गर्व की बात है। उन्होंने कालेज के विकास के लिए हर सम्भव सहायता का विश्वास दिलाया और कालेज में एक कामन रूम के निर्माण के लिए 20 लाख रुपय मंजूर किये। उन्होंने यह भी कहा कि जल्दी ही कालेज में आधुनिक ढंग की सुविधाओं का प्रबंध किया जाएगा ताकि इस कालेज की गनना देश के अन्य भागों में स्थित अति उत्तम कालेजों में हो सके। पढ़ाई के साथ-साथ यहां शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों के मानसिक तथा शारीरिक विकास की ओर पूरा ध्यान दिया जाता है। समय-समय पर कालेज में खेल प्रतियोगिताओं तथा सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आयोजन भी किया जाता है। इन प्रतियोगिताओं द्वारा बच्चों को अपने अन्दर छुपी प्रतिभा को उजागर करने का अवसर मिलता है। 1912 ई. से कालेज का वार्षिक मैगज़ीन 'तवी' प्रकाशित किया जा रहा है जिसमें कालेज के प्राध्यापकों तथा विद्यार्थियों के अंग्रेजी, हिन्दी, उर्दू, पंजाबी तथा डोगरी भाषा में लेख तथा कविताएं प्रकाशित की जाती हैं। इस से विद्यार्थियों को अपने विचार लिखित रूप में प्रस्तुत करने का अवसर मिलता है।

कालेज के वर्तमान प्रिंसीपल डा.एन.डी वानी के मार्गदर्शन तथा स्टाफ मैम्बरों के सहयोग से कालेज की शानदार परम्पराओं तथा शिक्षा के स्तर को ऊंचा रखने के सम्भव प्रयास किये जा रहे हैं ताकि यहां शिक्षा प्राप्त करने वाला हर विद्यार्थी गर्व महसूस करे और देश के प्रति अपने कर्तव्यों को पूरा करने में पूर्ण रूप से तैयार होकर यहां से निकले। कालेज की प्राचीन प्रतिष्ठा तथा गौरव को बरकरार रखने की ओर भी विशेष ध्यान दिया जा रहा है। इस सम्बंध में श्री वानी, साहिब समाज के

सभी वर्गों से जुड़े लोगों का सहयोग लेने तथा कालेज परिसार को और अधिक सुन्दर तथा आकर्षक बनाने के लिए प्रयत्नशील हैं। 16 दिसम्बर 2004 को कालेज का स्थापना दिवस मनाया गया था।

इस अवसर पर शहर के जाने माने व्यक्तियों को सम्मानित किया गया जो कभी इस कालेज के विद्यार्थी थे।

आवश्यकता इस बात की है कि हैरीटेज कालेज घोषित होने तथा सरकार के पुरातत्व विभाग के अधिकार में आने के बाद काजेज के प्राचीन भवन की मरम्मत तथा रख रखाव की ओर उचित ध्यान दिया जाये ताकि हमारी विरासत के इस अद्‌भुत नमूने को देख कर ही जम्मूवासी गर्व महसूस करें।

रेडियो कश्मीर-जम्मू

लोकतंत्र के इस युग में मीडिया का महत्वपूर्ण स्थान है। इसे लोकतंत्र का चौथा स्तम्भ भी कहा जाता है। मीडिया का किसी देश की उन्नति में बहुत बड़ा योगदान है। इसके द्वारा सरकार के कार्यक्रमों तथा जनता की भलाई बेहतरी की योजनाओं के बारे में लोगों को जानकारी दी जाती है और विपक्षी दलों को सरकार की त्रुटियों को उजारग करने का अवसर मिलता है। इस दौर में मीडिया द्वारा लोगों को अपने विचार प्रकट करने तथा अपने अन्दर छुपी खूबियों को, सार्वजनिक करने का भी अवसर मिलता है। प्रिंट मीडिया तथा इलैक्ट्रानिक मीडिया की सहायता से संसार के किसी भी कोने में होने वाली घटना की जानकारी हमें मिनटों में मिल जाती है। इलैक्ट्रानिक मीडिया में रेडियो के महत्व से इनकार नहीं किया जा सकता। टेलीविजन के बावजूद आज भी रेडियो सुनने वालों की संख्या बहुत अधिक है। देश के दूर दराज पहाड़ी तथा पिछड़े इलाकों में जहां लोगों ने आज तक बिजली नहीं देखी वहां रहने वाले लोग रेडियो के जरिये ही देश तथा दुनिया के विभिन्न भागों में होने वाली तबदीलियों से परिचित होते हैं। खेतों में काम करने वाले किसान, खानों में काम करने वाले मजदूर तथा सफर के दौरान लोग अक्सर रेडियो का प्रयोग करते देखे जा सकते हैं। दिल बहलाने के अन्य साधनों के बावजूद रेडियो की लोकप्रियता में कमी नहीं आई। 1947 से पहले भारत के बड़े-बड़े शहरों में रेडियो स्टेशन स्थापित हो चुके थे परन्तु जम्मू-कश्मीर में चंद अमीर लोगों के सिवाय रेडियो आम आदमी की पहुंच से दूर था।

15 अगस्त 1947 को हिन्दुस्तान स्वतंत्र हुआ परन्तु उसको दो भागों में विभाजित कर दिया गया और एक नया देश पाकिस्तान के नाम से दुनिया के नक्शे पर उभर कर सामने आया। देश में फसादात शुरु हो गये। कई परिवार उजड़ गये। हजारों लोगों का वध हआ और लोग अपनी जमीन जायदाद छोड़ कर दर-बदर भटकने पर मजबूर हुए। आजादी के लगभग दो महीने बाद कबाईलियों ने कश्मीर पर आक्रमण कर दिया। कबाईलियों ने जम्मू-कश्मीर में रहने वालों का बड़े पैमाने पर संहार किया। लोग अपने घर बार छोड़ने पर मजबूर हो गये और कबाईली एक के बाद दूसरे गांव में नर संहार करने के बाद श्रीनगर शहर तक पहुंचने में सफल हो गये। उस समय जम्मू-कश्मीर राज्य पर महाराजा हरि सिंह का शासन था। सारे

राज्य में अफरा तफरी फैली हुई थी। जम्मू शहर में कर्फ्यू लगा दिया था। लोग शहर छोड़ कर भाग रहे थे और जम्मू शहर में शरणर्थियों के आने का सिलसिला जारी था। राज्य को और अधिक तबाही से बचाने के लिए महाराजा हरि सिंह ने 26 अक्तूबर 1947 को जम्मू कश्मीर राज्य को भारत में शामिल करने की घोषणा कर दी। भारत की सेना जम्मू-कश्मीर में आई और कबाईलियों को जम्मू कश्मीर की भूमि से पीछे धकेलना शरू कर दिया।

रेडियो पाकिस्तान तथा पाक अधिकृत कश्मीर जिसे पाकिस्तान ने आजाद कश्मीर का नाम दिया था वहां का आज़ाद कश्मीर रेडियो भारत के विरुद्ध जहरीला प्रचार करके राज्य के शांत वातावरण को दूषित करने का प्रयास करने लगा और यहां के लोगों के जज़बात को भड़का कर एक दूसरे के विरुद्ध घृणा पैदा करके शताब्दियों से कायम राष्ट्रीय एकता को बरबाद करने की कोशिश करने लगा। पाकिस्तान के इस जहरीले प्रचार का मुंह तोड़ उत्तर देने के लिए राज्य सरकार के पास कोई साधन न था।

राज्य के लोगों को सही हालात की जानकारी देने के लिए जम्मू में रेडियो स्टेशन की जरूरत को महसूस किया गया। इस संबंध में महाराजा बहादर ने भारत सरकार से सहायता मांगी जिसे मान लिया गया और नवम्बर 1947 के पहले सप्ताह में आल इंडिया रेडियो के इन्जीनियर यहां आए और रेडियो स्टेशन की स्थापना रणवीर हाई स्कूल के तीन कमरों में की गई।

एक कमरे में एक किलो वाट का मीडियमवेव ट्रांसमीटर लगाया गया। दूसरे कमरे में स्टूडियो और तीसरे कमरे में दफ्तर बना कर दो सप्ताह के अन्दर काम पूरा कर दिया गया। रेडियो स्टेशन जम्मू का उद्घाटन जम्मू-कश्मीर के महाराजा हरि सिंह जी ने 1 दिसम्बर 1947 ई को किया। इस अवसर पर राज्य के प्रधानमंत्री शेख मुहम्मद अब्दुल्ला भी वहां मौजूद थे। जम्मू रेडियो स्टेशन की स्थापना से जम्मू वासियों के दिलों में खुशी की लहर दौड़ गई और सब एक दूसरे को मुबारक बाद देने लगे। जम्मू का यह रेडियो स्टेशन राज्य का पहला रेडियो स्टेशन था। उस दिन शाम को छः बजे पहली बार जो आवाज गूंजी वह स्टेशन के उद्घोषक श्री शम्भु नाथ की थी। 'यह रेडियो स्टेशन जम्मू' है इस के बाद 'बढ़े चलो बहादरो' गीत की धुन बजाई गई। महाराजा हरि सिंह ने रेडियो स्टेशन का उद्घाटन करने के बाद राज्य वसियों को सम्बोधित करते हुए कहा ''हमारी प्रजा तथा राज्य के इतिहास का

एक नया अध्याय लिखा जा रहा है। हमने कई महत्वपूर्ण निर्णय किये हैं। हम इंडियन यूनियन में शामिल हो गये हैं। हमें यह ऐतिहासिक निर्णय ऐसी कठिन घड़ी में करना पड़ा जब हमारे राज्य पर आक्रमण किया गया और हम पर ज्यादतियां की गईं। उस समय से बराबर लड़ाई जारी है। इस नाजुक समय पर मैं आपके साथ इस रेडियो स्टेशन से बातचीत कर रहा हूं। आशा है कि जम्मू रेडियो स्टेशन से जो कार्यक्रम प्रसारित किये जाएंगे वे ऐसे होंगे जिन्हें सुनने वाले पसंद करेंगे। यह रेडियो स्टेशन राज्य की आवश्यकता को पूरा करेगा तथा प्रजा को शिक्षित करने और राज्य में स्वच्छ विचार फैलाने का साधन होगा। राज्य के लोगों तक सच्चे समाचार पहुंचाने का अब तक कोई साधन न था। हम भारत सरकार के धन्यवादी हैं जिसकी सहायता से यह स्टेशन स्थापित हुआ है। भारत सरकार बराबर हमारी सहायता कर रही है। हम पं. जवाहर लाल नेहरु, सरदार वल्भभाई पटेल तथा सरदार बलदेव सिंह के बहुत एहसानमंद हैं। जिन्होंने मुश्किल में हमारी सहायता की।''

इसके बाद महारानी तारा देवी ने अपना संदेश प्रसारित करते हुए कहा - ''जबकि पडोसी क्षेत्रों में हिन्दू-मुस्लिम फसाद की आग भड़क उठी थी। हमारे राज्य में बसने वाले लोग अमन तथा शांति से दिन गुजार रहे थे। राज्य के लोग आपस में भाईयों की तरह रहते थे परन्तु हमारे शत्रुओं को यह न भाया और उन्होंने हमारी जन्म भूमि पर एकदम आक्रमण कर दिया जिसका परिणाम यह निकला कि हमारे भाई बहनों तथा बच्चों को अनगिनित मुसीबतें झेलनी पड़ीं। रेडियो स्टेशन तो बन गया परन्तु उस का प्रबंध चलाने में बहुत कठिनाईयां आईं क्योंकि इसके लिए राज्य सरकार की ओर से न तो कोई बजट ही मंजूर किया गया और न ही इसके लिए कोई अधिकारी नियुक्त किया गया। आल इंडिया रेडियो के कुछ अधिकारी जम्मू के कार्यक्रमों को देखने के लिए आते थे। कार्यक्रमों की तरतीब भी ठीक ढंग से नहीं होती थी। पहले कुछ दिन तो रेडियो स्टेशन जम्मू में केवल ग्रामोफोन रिकार्ड ही बजाए गये थे। इस रेडियो स्टेशन द्वारा पाकिस्तान के दुष्प्रचार का उचित उत्तर दिया जाने लगा तथा स्थानीय कवियों की देश प्यार की कविताएं तथा जोशीले गीत प्रसारित होने लगे। देहाती प्रोग्राम में श्री बोध राज शर्मा, जितेद्र शर्मा, यश शर्मा तथा राजेन्द्र गुप्ता की विशेष भूमिका होती थी। इस कार्यक्रम को जम्मू शहर तथा आसपास के गांवों में बड़ी दिल चस्पी से सुना जाता था। गीत संगीत के अतिरिक्त

यहां से समाचार तथा नाटक भी प्रसारित किये जाते थे। 2 जनवरी 1948 को स्टेशन का प्रबंध चलाने की जिम्मेदारी उस समय के प्रसिद्ध उपन्यास कार तथा फिल्म निर्माता श्री राजेंद्र सिंह बेदी को सौंपी गई जिन्होंने बड़ी सूझ-बूझ के साथ यहां से प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों को लोगों की रुचि के अनुसार बनाने तथा अधिक से अधिक प्रभावशाली बनाने का यत्न किया और अच्छे अच्छे कलाकारों को प्रोत्साहित किया। उन्होंने नाटक, फौजी भाईयों के लिए, गीतों भरी कहानी तथा कई ऐसे कार्यक्रम शुरु किये जिससे राज्य में रहने वाले विभिन्न धर्मों के मानने वालों में आपसी भाईचारे तथा एकता को बढ़ावा मिलता था। रेडियो के द्वारा भारती नेताओं तथा भारती सैनिकों के विरुद्ध पाकिस्तानी प्रचार का करारा उत्तर देने के लिए विशेष कार्यक्रम 'जबावी हमला' प्रसारित किया जाता था। शत्रु के साथ लड़ रहे सैनिकों का मनोबल बढ़ाने के लिए जनरल आफिसर कमांडिंग वैस्ट्रन कमांड, जनरल के. एम.करिआपा इस स्टेशन से सैनिकों के नाम संदेश जारी करते थे जिससे इस स्टेशन का महत्व और भी बढ़ गया था।

1952 ई में जम्मू रेडियो स्टेशन को रणवीर हाई स्कूल से वर्तमान परिसर बेगम हवेली की शाही घुडसाल में स्थानान्तरित कर दिया गया। 1952 में पहली बार रेडियो स्टेशन में ड्रामा फैस्टीवल का आयोजन किया गया।

जम्मू कश्मीर राज्य के दूसरे बड़े शहर श्रीनगर में भी 1 जुलाई 1948 को रेडियो स्टेशन की स्थापना की गई। इससे पहले जम्मू रडियो स्टेशन से ही कश्मीरी कार्यक्रम प्रसारित किये जाते थे। उस का नाम रेडियो कश्मीर रखा गया। बाद में यह दोनों रेडियो स्टेशन रेडियो कश्मीर जम्मू तथा रेडियो कश्मीर श्रीनगर के नाम से प्रसिद्ध हुए और आज भी उनके यही नाम है।

स्थापना से लेकर 1954 ई तक तो रेडियो कश्मीर जम्मू सूचना तथा प्रसारण विभाग के अधीन रहा। 1954 ई में इस स्टेशन को भारत सरकार ने अपने अधिकार में ले लिया और यह भी आल इंडिया रेडियो परिवार का एक सदस्य बन गया। देश में स्थापित यही दो ऐसे स्टेशन हैं जिन को रेडियो कश्मीर जम्मू तथा रेडियो कश्मीर श्रीनगर के नाम से पुकारा जाता है जब कि अन्य स्थानों पर स्थापति स्टेशनों को आल इंडिया रेडियो ही कहा जाता है। रेडियो कश्मीर जम्मू से प्रसारित किये जाने वाले कार्यक्रमों में ग्राम विकास, पशुपालन, बच्चों के लिए बाल जगत तथा युवाओं और स्त्रियों के कार्यक्रमों पर भी ध्यान दिया जाता है। 1966 ई. तक यहां प्रोग्राम

इचार्ज की नियुक्ति की जाती थी जो असिस्टैंट डायरेक्टर ग्रेड के अधिकारी होते थे। 1966 ई. में स्टेशन डायरेक्टर की नियुक्ति की गई और श्री बी.पी. शर्मा रेडियो कमीर जम्मू के पहले स्टेशन डायरेक्टर बने उनके बाद श्री शिलेन्दर शंकर, श्री वी, बी, अग्रवाल, श्री एस.एन साधू, श्री ए.एस. अग्रवाल, श्री एन.के नायर, श्री पी. धर्मज्ञानी, श्री के.वी. रामचंद्रन, श्री एच. एल मलिक, श्री के एस मेत्रा, श्री फारुख नाजकी, श्री पी. एन. त्रिसल, श्री फैयाज शहरयार तथा श्री अशोक जैरथ डायरेक्टर के पद पर काम कर चुके हैं। वर्तमान स्टेशन डायरेक्टर डा. जितेन्द्र ऊधमपुरी 28 नवम्बर 2001 ई. से इस पद पर आसीन हैं जो पूरी मेहनत तथा लगन से रेडियो कश्मीर जम्मू के प्रोग्रामों को लोकप्रिय बनाने में व्यस्त रहते हैं। इससे पहले वह इसी स्टेशन में असिस्टैंट स्टेशन डायरेक्टर तथा कठुआ और धर्मशाला स्टेशनों के डायरेक्टर के पद पर काम कर चुके हैं। श्री ऊधमपुरी जी 17 मार्च 1977 ई में यहां एजूकेशन ब्राडकास्ट विभाग में प्रोडयूसर नियुक्त हुए और 1990 ई में यूनियन पब्लिक सर्विस कमीशन द्वारा स्टेशन डायरेक्टर के पद के लिए चुने गये।

इस समय रेडियो कश्मीर जम्मू के कार्यक्रम राज्य के अतिरिक्त देश के अन्य भागों में भी बड़ी दिलचस्पी से सुने जाते हैं। सीमा के उस पार पाकिस्तानी भाईयों के अनगिनित पत्रों से रेडियो कश्मीर जम्मू की लोकप्रियता का अनुमान लगाया जा सकता है। श्री जितेन्द्र ऊधमपुरी भद्रवाह, कठुआ, राजौरी तथा नौशहरा के स्टेशनों का प्रबंध भी देखते हैं। रेडियो कश्मीर के कार्यक्रमों को लोकप्रिय, आकर्षक तथा लाभदायक बनाने तथा अपनी आवाज के जादू से दूर दराज, देश विदेश में बैठे लोगों का दिल बहलाने तथा उनको प्रसिद्ध कलाकारों,से परिचित कराने में कई अनाऊंसरों, संगीतकारों, लोकगायकों, साजिन्दों, बुद्धिजीवियों, कवियों, साहित्यकारों तथा अधिकारियों का योगदान है जिन में श्री महमूद अहमद, ऋषिकुमार नाद, राजेन्द्र गुप्ता, आर. पी. साहनी, बोधराज शर्मा जी. एल. भक्त, गोपी नाथ कोशिक, यश शर्मा, सी. परवाना, श्री बलदेव, कृष्णदत्त, रामकुमार अबरोल, जे.सी. भारती, राजेन्द्र मुतियाल, संतोष सांगड़ा, डा. जतेन्द्र सिंह, जितेन्द्र शर्मा, एडलिन रूही,प्रदुमन सिंह जिन्दराद्विया, नसरीन फिरोज, कमल शर्मा, नरेन्द्र शर्मा, रीता जितेन्द्र, रमा लंगर, विष्णु भारद्वाज, मनमोहन पहाड़ी, स. प्रीतम सिंह, पं. उमा दत्त जी, रीता यूसफ, मैकश कश्मीरी, वेद गुप्ता, भानुदत्त शर्मा, अर्श सहबाई, डी.सी. प्रशांत तथा श्री राम नाथ शास्त्री आदि उल्लेखनीय है।

रेडियो कश्मीर जम्मू राज्य का सबसे पुराना स्टेशन है जो इस समय हिन्दी डोगरी के अतिरिक्त उर्दू, अंग्रेजी, गोजरी, पहाड़ी कश्मीरी, पंजाबी, भद्रवाही तथा मीरपूरी भाषा में उच्च कोटि के कार्यक्रम प्रस्तुत कर रहा है। रेडियो कश्मीर जम्मू के सभी कार्यक्रम प्रशंसनीय हैं परन्तु कुछ कार्यक्रम विशेष रूप से लोकप्रिय हैं और उनके बारे में सुनने वाले अपनी प्रतिक्रियाएं पत्रों द्वारा व्यक्त करते रहते हैं। इन कार्यक्रमों मे वन्दना, शुभ प्रभात, यह जम्मू है, रेडियो अखबार, महिलाओं के लिए , सांझी धरती, पंजाबी प्रोग्राम, फौजी भाईयों के लिए, वक्त की बात, देश सुहावां, मनोरमा, तथा दरीचे आदि विशेष रूप से पसन्द किये जाते हैं। पंजाबी प्रोग्राम में फतेहदीन, मास्टर जी, गुडडी तथा शाह जी की नोक झोंक तथा पंजाबी ड्रामे राज्य के बाहर तथा पाकिस्तान के बहुत बड़े भाग में सुने जाते हें। महमूद अहमद के लिखे ड्रामे ''कुग्गू दा व्याह,'''' असी भी है गेआं'','' पाकिस्तानी थानेदार जालिम खां'''' नूर दीन दियां करामातां,'', विशेष रूप से पसंद किये जाते थे और आज भी श्रोता बार-बार उनको सुनने की फरमाईश करते हैं। इनके अतिरिक्त हिन्दी, उर्दू तथा डोगरी के ड्रामे भी प्रसारित किये जाते हैं। समय-समय पर रेडियो कश्मीर जम्मू के परिसर में स्थानीय तथा देश के प्रसिद्ध कलाकारों को प्रोग्राम पेश करने के लिए आमंत्रित किया जाता है जिन को देखने के लिए बड़ी संख्या में लोग आते है। इस के अतिरिक्त विभिन्न भाषाओं के कवि सम्मेलनों का आयोजन भी किया जाता है।

इस समय रेडियो कश्मीर जम्मू को पूर्ण रूप से स्टेशन का दर्जा प्राप्त है और यहां से उच्चस्तर के कई कार्यक्रम पेश किये जा रहे हैं। 1972 ई. में रेडियो कश्मीर जम्मू के परिसर में नये स्टूडियो का निर्माण किया गया और यहां 50 कि.वा. मीडियम वेव ट्रांसमीटर लगाया गया था परन्तु अब यहां 300 किलोमीटर का मीडियम वेव ट्रांसमीवट लगा है जिस से स्टेशन से प्रसारित प्रोग्राम हजारों मीलों तक सुने जा सकते हैं। 12 मार्च, 1973 को युवावाणी प्रोग्रामों के लिए ऐफ.एम. 3 किलोवाट का ट्रांममीटर लगाया गया ।

शुरु में युवा वाणी से केवल एक घंटे का प्रोग्राम ही प्रसारित किया जाता था परन्तु अब यह अवधि छः घंटे कर दी गई है। 14 अप्रैल 2000 ई से कमर्शियल ब्राडकास्ट की भी शुरुआत की गई है। कुल मिलाकर प्राईमरी सर्विस से प्रतिदिन 10 घंटे, युवावाणी से छः घंटे तथा कमर्शियल सर्विस से भी कार्यक्रम प्रसारित

किये जाते हैं। 1947 से लेकर 1953 तक रेडियो प्रोग्रामों की डिस्क रिकार्डिंग होती थी जिसमें बड़ी कठिनाई आती थी। 1955 ई में टेप रिकार्डिंग शुरु होने से कुछ आसानी हो गई और प्रोग्रामों के स्तर में सुधार भी हुआ। 1955 ई. तक सभी ड्रामे लाईव होते थे और कलाकारों को बड़ी सावधानी से अपने किरदार निभाने पड़ते थे।

1996 से फोन इन प्रोग्राम आरंभ किया गया है जिस में श्रोता अपनी पसन्द के गीत सुनते हैं। हैलो डाक्टर में डाक्टरी मशवरा प्राप्त करते हैं तथा खेती बाड़ी संबंधी जानकारी भी श्रोता फोन द्वारा प्राप्त कर सकते हैं। रेडियो कश्मीर जम्मू के कुछ प्रोग्रामों का लोक बड़ी बेसब्री से इंतजार करते हैं। श्री उधमपुरी जी के नेतृत्व में स्टेशन के सभी अधिकारी यहां से प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों को श्रोताओं की रुचि के अनुकूल बनाने का हर संभव प्रयास करते हैं और कठिनाईयों के बावजूद अपने कर्तव्य का कुशालता पूर्वक पालन करते हैं। अधिकतर कार्यक्रमों में राष्ट्रिय एकता पर जोर दिया जाता है और राज्य तथा देश में हो रहे विकास कार्यों की जानकारी भी लोगों को दी जाती है। उधमपुरी जी के बाद नियुक्त होने वाले स्टेशन डायरेक्टर भी अपने सहयोगियों की सहायता से यहां से प्रसारित होने वाले कार्यक्रमों को लोकप्रिय बनाने में पूरी लगन से काम कर रहे हैं।

डोगरा आर्ट म्यूज़ियज-जम्मू

म्यूजियम अंग्रेजी भाषा का शब्द है जिस का अर्थ अजायबघर यानि ऐसा स्थान जहां प्राचीनकाल की अमूल्य तथा नायाब वस्तुओं का संग्रह किया जाता है। ऐसी वस्तुएं जिनका संबंध हमारे अतीत से होता है। प्राचीन काल की वस्तुओं, शस्त्रों मूर्तियों, वस्त्रों, चित्रों, वरतनों, सिक्कों तथा मोहरों को देखकर हमें उस समय के इतिहास को जानने तथा समझने का अवसर मिलता है। इन वस्तुओं को देखकर हमें उस समय की कलाओं, वास्तुकला, रहन सहन, लोगों की आर्थिक स्थिति, उनके व्यवसाय तथा उस समय की प्रशासनिक व्यवस्था का भी ज्ञान प्राप्त होता है।

प्राचीन इतिहास को जानने में पुराने सिक्के, महल या उनके अवशेषों की विशेष महत्ता है। यह वस्तुएं हमें अपने अतीत से जाड़ने में सहायतक होती हैं और हमें जीवन पथ पर आगे बढ़ने की प्रेरणा देती हैं। देश के बाकी भागों की तरह डोगरों का भी अपना इतिहास है, अपना रहन सहन, अपने रीति रिवाज, अपना खान पान तथा अपनी परम्पराएं हैं जिन पर हर डुग्गरवासी को गर्व है। डोगरे केवल एक जाति या समुदाय का नाम नहीं बल्कि एक विशेष क्षेत्र में रहने वाले डोगरे कहलाते हैं जिन में सभी धर्मों के लोग शामिल हैं और जो शताब्दियों से भाईयों की तरह मिलजुल कर रहते चले आ रहे हैं। कहीं कहीं उनकी भाषा में कुछ परिवर्तन अवश्य देखने को मिलता है परन्तु सभी अपने आप को डोगरा कहलाने में गर्व महसूस करते हैं।

डोगरा आर्ट म्यूजियम मुबारक मंडी जम्मू में रखी गई वस्तुओं का सम्बंध अधिकतर डोगरों की अमूल्य विरासत से है जिनको देखकर इस बात का पता चलता है कि डोगरे युद्ध में अपनी वीरता का सिक्का जमाने के साथ साथ अन्य कलाओं जैसे चित्रकारी, कशीदाकारी, भवन निर्माण तथा हस्थकलाओं में भी निपुण थे जिनं को डोगरा राजाओं की ओर से पूर्ण संरक्षण प्रदान किया जाता था। यही कारण है कि बसोहली चित्रकला विश्व प्रसिद्ध हुई जिसके नमूने आज भी विश्व के बड़े-बड़े अजायब घरों में देखे जा सकते हैं। बसोहली चित्रकला का अपना ही रंग रूप तथा बनावट है। चित्रों में स्थानीय जड़ी बूटियों से तैयार किये गये रंगों का प्रयोग बड़ी खूबी से किया गया है। बसोहली के राजाओं के संरक्षण में इस चित्रकला ने बहुत उन्नति की। उनके शासन काल में ही देवी दास द्वारा 'रस

मंजरी' तथा मानकू द्वारा 'गीत गोविंद' पर आधारित चित्रों का निर्माण किया गया। इनके अतिरिक्त रामायण, शिवपुराण, नलदमयन्ति, बारहमासा तथा अन्य धार्मिक ग्रंथों पर आधारित चित्र भी बनाये गये जिन में शुद्ध सोने चांदी के रंगों का प्रयोग किया गया है। तीन चार सौ साल पहले बने यह चित्र आज भी वैसे ही सुन्दर दिखाई देते हैं।

1947 से पहले यद्यति वर्तमान विधानसभा भवन के स्थान पर एक अजायव घर था परन्तु उसमें बहुत कम कला के नमूने रखे गये थे। 1947 के बाद देश विभाजन के कारण फैली गड़बड़ी के कारण और सत्ता परिर्वतन के कारण सम्बंधित अधिकारी उस अजायबघर में रखी गई प्राचीन वस्तुओं की ठीक ढंग से संभाल न कर सके जिसके कारण बहुत सी चीजें खराब हो गईं और इस अफरातरफरी में डुग्गर की अनमोल विरासत के बहुत से नमूने खराब हो गये। डुग्गर संस्कृति से प्रेम रखने वालों ने सरकार का ध्यान इस ओर दिलाया और उनके यत्नों से जो भी थोड़ा बहुत सामान मिल सका उसे गांधी भवन के पश्चिमी बरामदे में रखा गया ताकि आने वाली पीढ़ियों को डुग्गर की विरासत देखने का अवसर मिल सके। सामान अधिक था जो छोटे से बरामदे में प्रदर्शित नहीं किया जा सकता था इसलिए कुछ चीजों तथा चित्रों को सन्दूकों में ही रखना पड़ता था। बहुत कम लोग डुग्गर विरासत की पूर्ण झलक देख पाते थे। गांधी भवन जम्मू की बाहरी दीवार पर जो बोर्ड लगाया गया उस पर भी डोगरा आर्ट गैलरी लिखा गया था। गोया डुग्गर की समस्त विरासत को गांधी भवन की एक छोटी सी गैलरी तक की सीमित कर दिया गया। स्वर्गीय संसार चंद बड़ू जी डोगरा आर्ट गैलरी के पहले क्यूरेटर थे।

डुग्गर की विरासत तथा उसके संरक्षण में रुचि रखने वाले बुद्धिजीवियों, कलाकारों, कवियों तथा लेखकों को एक बार फिर इस गंभीर समस्या पर सोचने के लिए विवश कर दिया। सभी यह महसूस करने लगे कि डुग्गर की अनमोल विरासत, डोगरों के उज्जवल अतीत, उनकी बहादरी के कारनामों, उनके इतिहास तथा कला को गांधी भवन की छोटी सी गैलरी में प्रदर्शित नहीं किया जा सकता। यह डोगरों के साथ एक मजाक है कि उनकी इतनी शानदार विरासत को बीस पच्चीस फुट लम्बी और सात आठ फुट चौड़ी गैलरी तक ही सीमित कर दिया गया है। सब एकजुट होकर प्रशासन के बड़े अधिकारियों से मिले। यहां के मुख्यमंत्री तथा महाराजा हरि सिंह के पुत्र डा. कर्ण सिंह जी से सम्पर्क स्थापित किया और सब

से प्रार्थना की कि ऐसी व्यवस्था की जाये जहां सभी प्रचीन वस्तुओं को एक साथ दर्शाया जा सकते ताकि जम्मू कश्मीर राज्य, भारत के अन्य भागों तथा विदेशों से आने वाले पर्यटक एक ही स्थान पर समस्त डुग्गर संस्कृति के दर्शन कर सकें और डोगरों के रहन-सहन तथा यहां की कलाकृतियों बारे जानकारी प्राप्त कर सकें।

सभी के यत्नों से मुबारक मंडी में महारानी चाड़की के महल के साथ पांच छ: कमरों का एक कम्पलैक्स डोगरा आर्ट गैलरी के लिए अलाट किया गया। कमरों की अलाटमैंट के बाद उनको बहुत ही सुन्दर ढंग से सजाया गया। उनकी भीतरी तथा बाहरी दीवारों को पिंक रंग किया गया। महाराजाओं के समय पिंक हाल कहलाने वाले इस भाग को पहले जैसा रंग रूप दिया गया और 25 जनवरी 1991 ई. को प्रसिद्ध लेखकों इतिहासकारों, प्रशासन के उच्चअधिकारियों तथा जम्मू के जाने माने व्यक्यिों की उपस्थिति में जम्मू-कश्मीर के राज्यपाल श्री गरीश चंद्र सकसैना ने विधिवत डोगरा आर्ट म्यूजियम का उद्घाटन किया।

श्री संसार चंद बड़ू जी के अतिरिक्त श्री ब्रिजकृष्ण, श्रीबांडे, श्री फाजली तथा श्री विद्यारत्न खजूरिया डोगरा आर्ट गैलरी तथा डोगरा आर्ट म्यूजियम के क्यूरेटर के तौर पर काम कर चुके हैं। डोगरा आर्ट म्यूजियम के पास इस समय एक बड़ा हाल, एक मार्बल हाल, एक अन्डर ग्राउंड हाल, दफ्तर, उसके सामने एक कमरा तथा उस पर एक गैलरी है। सभी कमरों को अच्छे ढंग से सजाया गया है। चित्रों सिक्कों, शस्त्रों, वस्त्रों, मूर्तियों तथा आभूष्णों के लिए विशेष अलमारियां, शोकेस तथा स्टैंड बने हुए हैं जिनमें सभी चीजें बड़े अच्छे ढंग से रखी हुई हैं। हर वस्तु पर उसका नाम तथा पूरा विवरण दिया गया है। म्यूजियम में रखी गई कुछ वस्तुओं को लोगों से भी खरीदा जाता है। कुछ चीजें लोग अपनी इच्छा से भी उपहार के रूप में यहां दे जाते हैं। चीजों का चुनाव करने तथा खरीदने के लिए पांच सदस्यों की एक कमेटी है जिसकी साल में एक बार मीटिंग होती है। डोगरा विरासत के अतिरिक्त अन्य धर्मों तथा शासकों से संबंधित चीजों को खरीदने के लिए समाचार पत्रों में विज्ञापन दिये जाते हैं। लोग यहां चीजें भेजते हैं फिर जो वस्तु कमेटी के सदस्यों को यहां रखने योग्य लगती है उसे खरीद लिया जाता है। डोगरा आर्ट गैलरी में रखी गई वस्तुओं को देखने के लिए प्रतिदिन लगभग 200 व्यक्ति यहां आते हैं। म्यूजियम के अधिकारी यहां आने वालों का यथायोग्य स्वागत करते हैं और यहां रखी गई चीजों के विषय में विस्तार पूर्वक जानकारी देती हैं। म्यूजियम में आने वालों के साथ जहां

के अधिकारियों का व्यवहार बहुत अच्छा है। म्यूजियम के एक अधिकारी ने बताया कि डोगरा आर्ट गैलरी को यहां लाने की आवश्यकता इसलिए महसूस की गई कयोंकि वहां सभी चीजों को एक साथ प्रदर्शित करना संभव नहीं था। वहां जगह बहुत कम थी। म्यूजियम की सभी दीवारों पर पिंक रंग किया गया है। केवल एक हाल है जहां मार्बल लगा हुआ है। उसकी दीवारें तथा फर्श सफेद मार्बल के हैं। महाराजा रणवीर सिंह के शासनकाल में इस हाल को ड्राइंग रूम के तौर पर प्रयोग में लाया जाता था।

म्यूजियम में दाखिल होते ही बड़े हाल की बाई ओर बड़े शोकेसों में मर्दाना तथा जनाना चोले तथा अन्य वस्त्र रखे गये हैं। साथ ही जम्मू की प्रसिद्ध फुलकारी कशीदाकारी तथा चम्बा की कढ़ाई रुमाल के नमूने हैं। एक शोकेश में चोलियां तथा ब्लाऊज आदि हैं जिन पर सुन्दर कढ़ाई के नमूने देखकर दर्शक हैरान रह जाते हैं। दो तीन शोकेसों में डोगरा राजाओं महाराजाओं के समय की बन्दूकें रखी गई हैं जिनमें एक नाली से लेकर आठ नालियों वाली बन्दूकें भी हैं। पेपरमाशी तथा लकड़ी पर खुदाई का काम भी देखने योग्य है। साथ ही आभूषण रखने वाले सुन्दर डिब्बे हैं जिन पर बहुत बारीक नक्शो नगारी की गई है। कई प्रकार के हुक्कों के साथ पुराने समय का एक चर्खा है जो काले रंग की मजबूत लकड़ी का बना हुआ है और जिसकी सुन्दरता में आज तक कोई अन्तर नहीं आया। एक पत्थर पर टाकरी भाषा के शब्द खोदे गये हैं। एक शोकेस में गुर्ज, महाराजाओं के शासनकाल का पीतल का बना हुआ सरकारी चिन्ह, पीतल का ज़रावक्तर, पीतल की टोपी, एक ढाल तथा एक कुल्हाड़ा रखी हुई है। अगले शोकेस में कुछ सितार हैं जिन पर सुन्दर हाथी दांत के नमूने बने हैं। उसके साथ ही एक बड़ा नरसिंघा, आठ दस बड़ी बड़ी खोखरियां तथा तलबारें हैं। तमांचे, बगूगोशे तथा कई प्रकार के प्राचीन पिस्तौल तथा एक छोटी तोप म्यूजियम की शोभा को बढ़ाते हैं।

मूर्तियों में त्रिमुर्ति सूर्य, त्रिमुर्ति विष्णु जो अखनूर से प्राप्त हुई है। भगवान शिव की मूर्ति 18वीं शताब्दी जम्मू से, 9वीं शताब्दी की भगवान शिव की मूर्ति पुरमंडल से चौरी झुलाते एक दरबान,13वीं शताब्दी विष्णु लक्ष्मी की मूर्ति, 10वीं शताब्दी बबोर से दो सिपाही। सभी मूर्तियां काले पत्थर की हैं और सभी लगभग खंडित हैं। एक गोल पत्थर पर पाली भाषा के अक्षर बने हैं। उसके साथ ही भैरव की 11वीं शताब्दी की मूर्ति भी रखी गई है।

एक शोकेस में चार छोटे छोटे स्टैंड बने हुए हैं जिन पर पक्की हुई मिटटी के चार सिर रखे हुए हैं जिन में दो सिर स्त्रियों के, एक बच्चे का तथा एक पुरुष का है। यह सब चौथी-पांचवी शताब्दी के हैं और सभी अखनूर से प्राप्त हुए हैं (अखनूर की बजाय यदि अम्बारां लिखा जाता तो शायद ठीक था। क्योंकि इस प्रकार की मूर्तियां अम्बारां क्षेत्र में खुदाई के समय निकली हैं। उस क्षेत्र में अब भी खुदाई चल रही है। दो साल पहले वहां से महात्मा बुद्ध के समय की कुछ वस्तुएं प्राप्त हुई थीं।)

बड़े हाल के मध्य में बड़े बड़े शोकेसों में कई प्रकार के आभूषण रखे हुए हैं जिनका प्रयोग डुग्गर वासी किया करते थे। कई हस्तलिपियों के नमूने भी म्यूजियम में रखे गये हैं जिन में तकद्दर खान के भाई मुल्ला मसीह की फार्सी भाषा में हाथ से खिली रामायण, आदितय दृश्य स्तोत्र, गीता स्तोत्र, शारदा लीपि, 500 साल पुराना भोज पत्र पर लिखा सकंद पुराण उल्लेखनीय है। यहीं जम्मू, बसोहली, तथा अन्य क्षेत्रों के चित्रों के नमूने तथा सिक्के रखे गये हैं।

सीढ़ियां चढ़कर ऊपर क्यूरेटर के दफ्तर के बिल्कुल सामने एक कमरे में बसोहली चित्र कला के और भी कई चित्र देखने को मिलते हैं इस म्यूजियम में महाराजा गुलाब सिंह, महाराजा रणवीर सिंह, महाराजा प्रताप सिंह, महाराजा हरि सिंह तथा राज परिवार के अन्य सदस्यों के चित्र भी रखे गये हैं। मार्बल हाल में भी कई चित्र हैं। एक छोटी सी सीढ़ी को चढ़ने पर एक छोटी सी गैलरी है इसमें सभी चित्र (कैमरे से खींचे गये) ब्लैक एण्ड वाईट हैं। इन में से कुछ चित्र बबोर के हैं। बावली चित्र-सुद्ध महादेव से। लक्ष्मी नारायण की मूर्ति बबोर, पार्वती का शीशा, भैरव तथा गणेश जी का फुल साईज देवी मन्दिर-बबोर, एक बैल का चित्र सुद्ध महादेव, से काला देहरा मन्दिर बबोर से एक चित्र दसमीं तथा ग्यारहमीं शताब्दी के हैं। यहीं तांबे के सिक्के तथा चांदी के सिक्के (1903 से 1944 तक) हैं। मुगल शासकों के सिक्के, मुगल शहनशाह, शहजहान का धनुष जिस पर कुछ लिखा हुआ है। कम्पास तथा अन्य यन्त्र, गीता स्तोत्र, गुरु महिमा, शारदा शिवा तथा दुर्गा मां की हस्तलिखित किताबें हैं।

यहां काम करने वाले सभी अधिकारी डुग्गर की अनमोल धरोहर की उचित देखभाल करने तथा म्यूजियम के रख रखाव में बहुत रुचि ले रहे हैं परन्तु इस सम्बंध में बहुत कुछ करने की आवश्यकता है। एक तो यहां स्टाफ की कमी है। कमरों में उचित रोशनी का प्रबंध नहीं। सारे म्यूजियम में केवल एक ही असिसटैंट

है। इस महत्वपूर्ण स्थान पर सुरक्षा का भी उचित प्रबंध नहीं। यदि इन महत्वपूर्ण बातों की ओर ध्यान दिया जाये तो यहां अपने वालों की संख्या में वृद्धि हो सकती है।

डोगरा महारानियों की समाधियां

भारत के अन्य भागों की तरह जम्मू कश्मीर के डोगरा महाराजाओं को भी सुन्दर महल देवी देवताओं के मन्दिर बनावाने के अतिरिक्त अपने पूर्वजों तथा राज परिवार के सदस्यों की यादगारें बनवाने का बड़ा शौक था। यही कारण है कि राज्य के हर भाग में उनके बनवाये भवनों, महलों, किलों, समाधियों, पूजा स्थलों, तालाबों, तथा कुओं को देखा जा सकता है। यही नहीं उन्होंने राज्य के लोगों की भलाई बेहतरी, उन की उन्नति, समृद्धि तथा शिक्षा और आर्थिक दशा को सुधारने पर भी विशेष ध्यान दिया। उनका विश्वास था कि हर व्यक्ति को एक न एक दिन इस संसार को छोड़कर जाना है। केवल उसके किए हुए समाज सेवा के काम और धर्म के प्रति उसकी श्रद्धा और मानव जाति से उसके प्यार की भावना ही उसे सदा सदा के लिए अमर कर देती है। उसके द्वारा किये गये नेकी तथा जनहित के कार्यों को आने वाली पीढ़ियां याद रखती हैं और उसका नाम रहती दुनिया तक जीवित रहता है।

आज भी जब हमारी नजर किरमची तथा बिलाबर के मन्दिरों, बसोहली तथा बिलाबर के शिव मन्दिरों, दरबार गढ़ के महलों, बसोहली तथा जसरोटा के राजभवनों की ओर जाती है तो उसको बनाने वाले कारीगरों की प्रशांसा किये बिना नहीं रह सकते जिन्होंने राज्य के दूर दराज भागों में इतने शानदार महलों तथा मन्दिरों का निर्माण किया। मन्दिरों के अतिरिक्त डोगरा महाराजाओं ने राज परिवार के सदस्यों की समाधियों का निर्माण भी करवाया। जिनको मन्दिरों का रूप देकर उनमें से कुछ में शिवलिंगों की स्थापना भी करवाई। इस प्रकार की समाधियां राज्य के कई भागों में हैं। यह समाधियां उन राजाओं तथा राज परिवार के लोगों की हैं जो मात्रभूमि की रक्षा करते हुए वीरगति को प्राप्त हुए या फिर उनकी रानियों की हैं जिनके पति रणक्षेत्र में शहीद हुए। कुछ समाधियां ऐसी भी हैं जो राज परिवार की दासियों की हैं जिनके पति लड़ाईयों में काम आये। बेशक उन दिनों लड़ाई में शहीद होने वाले सैनिकों का अन्तिम संस्कार रणक्षेत्र के निकट ही कर दिया जाता था परन्तु जब उनकी मृत्यु की सूचना उनकी पत्नियों को मिलती थी तो वे अपने पति की तलवार, पगड़ी या उसके किसी वस्त्र को साथ रख कर सती हो जाती थीं। कई बार किसी रानी के सती होने पर प्रेमशव उसकी दासियां भी जलती चिताओं

में बैठकर अपनी जीवन लीला समाप्त कर लेती थीं। उन दिनों कुछ ऐसा ही रिवाज था। इसके अतिरिक्त जम्मू कश्मीर राज्य में कई ऋषियों मुनियों तथा महात्माओं की समाधियों भी हैं जहां समय समय पर मेलों का आयोजन किया जाता है और बड़ी संख्या में लोग वहां जाकर उन महात्माओं का अशीर्वाद प्राप्त करते हैं।

यही नहीं समाधियों के अतिरिक्त कुल देवियों तथा कुल देवताओं की देहरियां भी डुग्गर वासियों की श्रद्ध का केंद्र हैं जहां निश्चित दिनों पर उस जाति के लोग इक्टठे होकर कुल देवताओं तथा देवियों की पूजा करते हैं और परिवार की वृद्धि तथा खुशहाली के लिए प्रार्थना करते हैं। यह देहरियां अथवा समाधियां प्रतीक हैं उस श्रद्धा की जो परिवार के लोगों के दिलों में दिवगंत आत्माओं के लिए होती थी। यह समाधियां तथा वहां होने वाले समारोह हमें उन व्यक्तियों की याद दिलाते हैं जो कभी किसी परिवार के सदस्य थे, पूज्यनीय थे, मार्गदर्शक थे जिनके दिखाये हुए सत्यमार्ग पर चल कर उस परिवार के लोगों ने सफलता प्रास की। जम्मू शहर में भी कई ऐसे समाधि मंदिर हैं जहां किसी महात्मा या प्रतिष्ठित व्यक्ति की समाधि पर शिवलिंग की स्थापना करके वहां मंदिर का निर्माण किया गया हो। दीवान मंदिर परिसर में महाराजा रणवीर सिंह के प्रधान मंत्री ज्वाला सहाय जी की समाधि पर शिवलिंग की स्थापना करके एक बड़े मंदिर का निर्माण किया गया है। ऐसा ही एक मंदिर तालाब तिल्लों में बावा मौज गिरी जी की समाधि पर निर्मित है। श्री रघुनाथ जी मंदिर परिसर में डोगरा महाराजाओं के समाधि मंदिर हैं। पीर खोह परिसर में उन महंतों की समाधियां हैं जो इस पवित्र गद्दी पर विराजमान रहे। सवांखा तथा अन्य कई मंदिरों में भी ऐसी समाधियां हैं आज भी लोग समाधियों पर जाकर श्रद्धा पूर्वक शीश झुकाते और अपनी मनोकामनाएं पूरी करते हैं।

डोगरा महाराजाओं ने पुराने जम्मू नगर से कुछ दूर तवी नदी के दाएं किनारे पर रानियों तथा महारानियों के सुंदर समाधि मंदिरों का निर्माण करवाया ताकि उन की याद सदा सदा के लिए कायम रहे और उन रानियों के प्रति डोगरा राज परिवार के सदस्यों तथा डुग्गर वासियों की श्रद्धा बनी रहे। यह समाधियां वास्तु कला का बहतरीन नमूना हैं और डेढ़ दो सौ साल गुजर जाने पर भी उन की सुंदरता में कोई कमी नहीं आई। यह समाधियां इस समय धर्मार्थ ट्रस्ट के अधीन हैं और उनकी मरम्मत तथा रख रखाव की पूरी जिम्मेदारी उसी पर है। समाधियों की पूजा के लिए एक पुजारी तथा रखवाली के लिए चौकीदार नियुक्त किया गया है। समय समय

पर धर्मार्थ ट्रस्ट के अधिकारी, प्रबंधक तथा चेयरमैन ट्रस्टी डा. कर्ण सिंह जी भी सपरिवार यहां आकर पूजा करते हैं। इन समाधियों की सफाई, रंग रोगन तथा मरम्मत की ओर विशेष ध्यान दिया जाता है।

किसी समय यह समाधियां शहर से बहुत दूर थीं इसलिए बहुत कम लोग यहां आते थे परन्तु अब इस क्षेत्र में बड़ी रौनक है। समाधियों के आस पास बड़े-बड़े भवन तथा सरकारी दफ्तर बन जाने से बड़ी संख्या में लोग डुग्गर की विरासत की प्रतीक इन समाधियों को देखने के लिए आते हैं। मुख्य सड़क से 32 सीढ़ियां उतरने के बाद समाधियों का सुंदर परिसर दिखाई देता है जहां चारों ओर रंग बिरंगे फूलों की महक यहां आने वालों का स्वागत करती है। चारों ओर फैली हरियाली से आंखों को ठंडक महसूस होती है। हवा में झूमती फूलों की डालियां यहां आने वालों को अपनी ओर बुलाती प्रतीत होती हैं। इसी परिसर में एक बहुत बड़ा वट वृक्ष है जो शायद उतना ही पुराना है जितनी यह समाधियां। पर्वों के अवसर पर यहां विशेष पूजा का आयोजन किया जाता है। समाधि मंदिरों, सीढ़ियों तथा आस पास को सफेद, लाल तथा पीले रंगों से सजाया गया है। यहां दो शिव मंदिरों के अतिरिक्त 10 समाधियां हैं जो केवल रानियों तथा महारानियों की ही हैं। हर एक समाधि के भीतर शिवलिंग की स्थापना की गई है। कई समाधियों की दीवारों पर बने आलों में प्राचीन मोहरे भी हैं। शिवलिंगों पर पवित्र जल से भरी गागरें रखी हुई हैं जिन से बूंद बूंद जल शिवलिंगों पर गिरता रहता है। एक चौकी पर पूजा का सामान, धूप, दीप आदि रखे हुए हैं। पहली समाधि रानी बुआ की है जो महाराजा रणवीर सिंह के बड़े भाई उधम सिंह की पत्नी थी। दूसरी समाधि महाराजा रणवीर सिंह की पत्नी महारानी बन्द्राल की है जिन्होंने पुरानी मंडी के नीचे एक नाले के किनारे मंदिर का निर्माण करवाया था जिसमें भगवान श्री कृष्ण जी की काले रंग की मूर्ति स्थापित है। इस समाधि के साथ ही कोने में श्री रणवीरेश्वर जी का मंदिर है जिसमें लगभग 4 फुट ऊंचा शिवलिंग स्थापित है जिसकी बनावट रणवीरेश्वर मंदिर शालीमार में स्थापति शिवलिंग से मिलती है। तीसरी समाधि महाराजा रणवीर सिंह की पहली रानी सीबा की है जो जिला कांगड़ा के राजा बिजे सिंह की राजकुमारी थी। महारानी सीबा से तीन लड़के प्रताप सिंह, राम सिंह, अमर सिंह और दो लड़कियां पैदा हुई। चौथी समाधि जम्मू कश्मीर राज्य के संस्थापक महाराजा गुलाब सिंह की रानी इकबाल की है। पांचवी समाधि रानी कल्हूरी की है जो कल्हूर (बिलासपुर) के

राजा हीराचंद की बहन थी। छठी समाधि महाराजा रणवीर सिंह की पांचवीं रानी चाड़क की है जिससे लक्ष्मण सिंह ने जन्म लिया था परन्तु वह बचपन में ही भगवान को प्यारा हो गया। सातवीं समाधि महाराजा रणवीर सिंह की तीसरी रानी बिलौरी की है। आठवीं समाधि महाराजा गुलाब सिंह की रानी कटोच की है। उसके साथ ही दूसरा रणवीरेश्वर मंदिर है। इसमें पहले मंदिर के मकाबले छोटा लिंग स्थापित है। नौमी समाधि महाराजा गुलाब सिंह के भाई सुचेत सिंह की रानी भुतियाल की है और दसवीं समाधि जम्मू कश्मीर राज्य के भूतपूर्व सदरे रियासत, केंद्रीय मंत्री तथा वर्तमान राज्य सभा सदस्य डां. कर्ण सिंह की माता जी तथा जम्मू कश्मीर के स्वर्गवासी महाराजा हरि सिंह जी की पत्नी महारानी तारादेवी जी की है। बनावट में यह समाधि भी बाकी समाधियों से मिलती जुलती है परन्तु इसकी भीतरी सजावट बाकी समाधियों से हट कर है। बाकी समाधियों की तरह इसमें भी शिवलिंग की स्थापना की गई है जिसकी प्रतिदिन पूजा की जाती है। इस के अतिरिक्त यहां शिवलिंग की एक ओर राधाकृष्ण जी तथा दूसरी ओर महाकाली जी की मूर्तियों की स्थापना की गई है जिनको सुंदर वस्त्रों तथा गहनों से सजाया गया है। इस समाधि का निर्माण डां. कर्ण सिंह जी ने 25 सितंबर 1995 को करवाया था।

धर्मार्थ ट्रस्ट की ओर से शिव मंदिरों तथा समाधियों की पूजा के लिए पं. रामपाल को पुजारी नियुक्त किया गया है जो प्रतिदिन सुबह शाम यहां पूजा करते हैं। कृष्ण लाल चौकीदार अपने परिवार के साथ इसी परिसर में रहता है जो समाधियों की देखरेख में पूरी रुचि लेता है और यहां आने वालों को समाधियों के विषय में थोड़ी बहुत जानकारी भी देता है। कहीं कहीं समाधियों की बाहरी दीवारों पर कुछ जानकारी अंकित है परन्तु यह साफ तौर पर नहीं पढ़ी जाती है। आवश्यकता इस बात की है कि हर समाधि के बाहर या किसी विशेष स्थान पर इन तमाम, समाधियों के बारे में पूरी जानकारी दर्ज की जाए ताकि यहां आने वालों को डोगरा राजाओं के इतिहास का पता चल सके। इसमें शक नहीं कि धर्मार्थ ट्रस्ट के अधिकारी अपना काम पूरी निष्ठा से करते है परन्तु अभी बहुत कुछ करना बाकी है ताकि जम्मू कश्मीर के पवित्र स्थानों की अधिक से अधिक जानकारी लोगों को उपलब्ध हो सके।

इस समय धर्मार्थ का प्रबंध चेयरमैन ट्रस्टी डा. कर्ण सिंह, ट्रस्टी युवराज विक्रमादित्य तथा महाराज कुमार अजात शत्रु सिंह के हाथ में है। धर्मार्थ ट्रस्ट के

अध्यक्ष ठाकुर दिवाकर सिंह तथा सचिव सुश्री विजय गंदोत्रा तथा धर्मार्थ ट्रस्ट कौंसल के सदस्य प्रो. हरि ओम, श्री बी.एल. भगत, श्री राम दास डोगरा तथा डां. विमला धर हैं।

काली जन्नी-जम्मू

जम्मू शहर में एक बहुत ही बारौनक महल्ला 'काली जन्नी' के नाम से प्रसिद्ध है जो सब्जी मण्डी से शुरू होकर चोगान फत्तू के करीब से होता हुआ पक्का डंगा तक चला गया है। शहर के मध्य में होने के कारण यहां हर समय चहल पहल रहती है। इस महल्ले में एक स्थान पर काले रंग का बहुत बड़ा पत्थर है। इसी काले पत्थर के कारण इस महल्ले का नाम 'काली जन्नी' पड़ा। क्योंकि डोगरी भाषा मे 'जन्न पत्थर को कहते है इसी कारण यह महल्ला काली जन्नी कहलाया। यहां अब एक छोटा सा मन्दिर भी बना दिया गया है जहां कई देवी देवताओं की मूर्तियां रखी गई हैं। महल्ले के लोग यहां इन देवी देवताओं की पूजा अर्चना करते है। महल्ले के लोग इस पत्थर को भी पवित्र मानकर इसकी पूजा करते हैं।

इस पत्थर को जम्मू के राजा मालदेव ने तवी नदी से उठाकर यहां रखा था। यही नहीं उसने और भी कई ऐसे पत्थर तवी नदी से लाकर जम्मू के विभिन्न भागों में रखे परन्तु उनमें केवल इसी पत्थर को अधिक प्रसिद्धि मिली। राजा मालदेव ने चौदहवीं शताब्दी के दूसरे भाग में जम्मू पर शासन किया। वह बड़ा बलवान था।

मल्ल युद्ध करना तथा चार छः आदमियों को उठाकर जमीन पर फैंकना उसके लिए कोई मुश्किल बात नहीं थी। इस दौर में तो वही व्यक्ति सफल समझा जाता है जो अधिक चालाक तथा होशियार हो। आज की राजनीति अधिकतर झूठ और फरेब पर आधारित है परन्तु पुराने वक्तों में राजा महाराजा अपनी शक्ति तथा बाहुबल से लोगों को अपनी ओर आकर्षित करते थे और लोग उनकी बहादरी की प्रशंसा करते थे। उन राजाओं महाराजाओं को दिल से प्यार करते थे। उनको विश्वास होता था कि यह राजा हमें पूर्ण सुरक्षा प्रदान कर सकता है और किसी भी आक्रमण का मुंहतोड़ जवाब दे सकता है।

क्योंकि उन दिनों जम्मू में पानी के नल नहीं थे इसलिए यहां रहने वालों को नहाने तथा कपड़े धोने के लिए तवी नदी पर जाना पड़ता था जो वापसी पर पानी के घड़े या गागरें कंधों या सिरों पर उठाकर घरों को लाते थे। उन दिनों पीर खोह के कुएं पर पानी भरने वालों की बहुत भीड़ होती थी। उस समय जम्मू के राजाओं के महल पुरानी मंडी में होते थे। राजा मालदेव भी पुरानी मंडी स्थित अपने महलों में रहता था और बाकी लोगों की तरह अपने एहलकारों तथा दरवारियों के साथ तवी

नदी पर स्नान करने जाता था। तवी नदी के किनारे पहलवानों से कुश्ती करना उसे पसंद था। वापसी पर शौकिया तौर पर तवी से कोई बड़ा पत्थर उठाकर ले आता था और महल के आस पास किसी टीले पर फैंक देता था। आजकल तो सड़कें हैं और जम्मू का बहुत विकास हो चुका है परन्तु उन दिनों ऐसा न था। यह पत्थर राजा मालदेव ने अपने महल के पिछले भाग में एक टीले पर रख दिया था। उसे क्या मालूम था कि इस पत्थर के नाम पर एक दिन एक महल्ला बनेगा जो उसके नाम को सदा के लिए अमर कर देगा। राजा मालदेव लोगों की भलाई बेहतरी की ओर बड़ा ध्यान देता था और आमलोगों से मिल कर उनकी समस्याऐं सुनता था। प्रजा उस पर अति प्रसन्न थी इसलिए दूसरे स्थानों से आकर लोग जम्मू में बसने लगे और उसके शासन काल में जम्मू की जनसंख्या में कई गुना वृद्धि हो गई। राजा मालदेव एक सफल शासक होने के साथ साथ धार्मिक विचारों का व्यक्ति भी था और सभी धर्मों का आदर करता था। उसके शासन काल में हिन्दू संतों के अतिरिक्त मुसलमान पीर फकीर भी यहां आए। राजा मालदेव उनका भी यथा योग्य आदर सतकार करता था।

महल्ला काली जन्नी को महल्ला राजेयां भी कहा जाता था क्योंकि पुरानी मंडी में महल होने के कारण राजाओं के दरबारी तथा दूसरे बड़े-बड़े अधिकारी भी यहां रहते थे इस लिए आवश्यकता पड़ने पर उनको बुलाया जा सकता था और प्रशासन सम्बंधी आदेश या सलाह मश्वरा किया जा सकता था। इस महल्ले में कुछ पुराने मकान आज भी देखे जा सकते हैं जिन में शाही खानदान से सम्बंधित अधिकारी रहते थे। पुरानी मंडी स्थित अपने महलों के साथ राजा मालदेव ने बारहदरी भी बनवाई थी जहां वह अपना दरबार लगाया करता था और जम्मू के राजाओं को राजतिलक भी वहीं दिया जाता था। इस स्थान पर आजकल अमर क्षत्रीय राजपूत सभा का मुख्य कार्यलय है। यहां राजा मालदेव की पिंडी स्थापित की गई है जिसको देवता के रूप में पूजा जाता है। समय-समय पर यहां भण्डारों का आयोजन करके इस बहादर राजाको का याद किया जाता है। लोग यहां मन्नतें मांगते तथा चढ़ावे चढ़ाते हैं। राजा मालदेव की बहादरी के चर्चे दूर-दूर तक फैले हुए थे और कांगड़ा के आस-पास के कई राजाओं को उसने अपने अधीन किया हुआ था।

राजा मालदेव का विवाह कांगड़ा के जसवाल वंश में हुआ था। यह बात मशहूर है कि विवाह के बाद जब वह पहली बार दुल्हन को लेने गया तो वहां के लोगों ने

उसकी बहादरी की परीक्षा लेने का निश्चय किया। इसके लिए बहाना यह बनाया कि हमारे यहां नियम है कि दुल्हन को ले जाने से पहले दुल्हा बहादरी का प्रदर्शन करता है। यह बात तो वहां फैल चुकी थी कि राजा मालदेव बड़ा बहादर राजा है लोगों के साथ-साथ राजा जसवाल भी राजकुमारी को विदा करने से पहले अपने दामाद की बहादरी देखना चाहता था। एक कीकर के वृक्ष को उपर से क़ाटकर किल्ले का रूप दिया गया। वृक्ष की सारी जड़े जमीन में ही रहीं। राजा जसवाल ने कहा कि हमारी इस रस्म को पूरा कर दीजिए फिर आप दुल्हन ले जा सकते हैं। हमारा यह नियम पूरा होने से लोगों को यह पता भी चल जायेगा कि हमने अपनी राजकुमारी का विवाह एक बलवान राजा से किया है। आप को तेज़ दौड़ते घोड़े पर सवार होकर जमीन में बने किल्ले को नेज़े से उखाड़ना है। राजा मालदेव घोड़े पर सवार हुआ और घोड़े को दूर से दौड़ा कर तेजी के साथ नेज़ा किल्ले को मार उसे जड़ों समेत जमीन से उखाड़ कर दूर फैंक दिया। ऐसा करने में राजा मालदेव को तो कोई चोट न आई परन्तु घोड़ा कुछ फासले पर जाकर गिर पड़ा और थोड़ी देर तड़पने के बाद वहीं पर ढ़ेर हो गया। राजा मालदेव को यह भद्दा मज़ाक पसंद न आया क्योंकि इससे वह भी जख्मी हो सकता था। उसने कसम खाई और कहा कि भविष्य में मेरे वंश का कोई व्यक्ति जसवाल वंश में विवाह नहीं करेगा। कुछ समय तक जम्वाल वंश के राजगान इस कसम पर कायम रहे।

राजा मालदेव से पहले जम्मू राज्य की राजधानी बबोर या बबापुर थी। यह स्थान बड़ा सुरक्षित था परन्तु जम्मू राज्य की सीमाओं पर बार-बार विदेशी आक्रमणों के कारण इतनी दूर से सुरक्षा प्रबंधों की निगरानी करना मुश्किल था इसलिए राजा मालदेव ने 1370 ई के करीब जम्मू को पुनः राज्य की राजधानी बनाया इसके बाद जम्मू लगातार राज्य की राजधानी रहा और आज भी है। जोगी लोग अपनी बारों तथा कार्कों में भी राजा मालदेव की वीरता का वर्णन करते हैं। उनके अनुसार राजा मालदेव ने तैमूर से चार लड़ाईयां लड़ीं जिन में दो तीन जम्मू के आस-पास ही लड़ी गईं। कार्कों से पता चलता है कि वह चौथी लड़ाई में तैमूर से मारा गया और तैमूर का जम्मू पर अधिकार हो गया परन्तु हशमत उल्ला की तारीख में लिखा है कि राजा मालदेव का जम्मू पर अधिकार बना रहा। ठीक तरह से नहीं कहा जा सकता कि तैमूर से लड़ाई में राजा मालदेव मारा गया या उसने तैमूर को रोककर वापस भेज दिया।

राजा मालदेव ने स्यालकोट तक अपना राज्य फैलाया और इसके बाद लाहौर के इलाके में भी लूटमार की और अपनी वीरता का सिक्का जमाया। उधर भिम्बर से लेकर रावी नदी के इलाके में छोटे-छोटे राजाओं तथा जागीरदारों को भी अपने अधीन कर लिया था। यहां तक कि उसने रावी के पार भी लड़ने के लिए अपनी सेनाएं भेजीं। मालदेव की बहन का विवाह नूरपुर के राणा कैलाश पठानिया से हुआ था। एक बार कैलाश पठानिया ने जम्वालों के बारे में कुछ निंदनीय शब्द बोले। मालदेव की बहन ने जब यह बात अपने भाई को सुनाई तो वह यह अपमान सहन न कर सका और अपने बहनोई पर आक्रमण कर दिया। उस लड़ाई में राणा कैलाश पठानिया मारा गया। मालदेव की बहन अपने पति के साथ सती हो गई। मालदेव की सेना ने पठानकोट के किले को पूरी तरह तवाह कर दिया और उस की ईंटें भी वह जम्मू ले जाया जिस से उसने पुरानी मंडी में अपना महल तथा बारहदरी बनाई जो आज भी उसकी यादगार के तौर पर कायम है। यह तैमूर के आक्रमण के एक साल बाद की बात है।

एक लेख के अनुसार काली जन्नी महल्ले में ही जिसे महल्ला राजेयां कहते थे महाराजा रणवीर सिंह जी को मारने की साजिश तैयार की गई थी। महाराजा रणवीर सिंह जी महालक्ष्मी के मंदिर में पूजा करने के लिए आए तो उनके दर्शनों के लिए बहुत बड़ी संख्या में लोग वहां उपस्थित थे। लोग मकानों की छत्तों पर खड़े होकर महाराजा की एक झलक देखने के लिए बेकरार थे। जब महाराजा रणवीर सिंह जी मंदिर के पास पहुंचे तो किसी ने बंदूक से उन पर गोली चला दी। गोली सनसनाती हुई उनके पास से निकल गई और वह ईश्वर की कृपा से बाल-बाल बच गए। भीड़ में खलबली मच गई और गोली चलाने वाले की तलाश शुरु हो गई। उसी रात काली जन्नी के एक मकान से साजिश तैयार करने वालों को पकड़ा गया और सजा के तौर पर कुछ को आजीवन कारावास और कुछ को फांसी दे दी गई।

नई मंडी या दरबार गढ़ के महलों को बनाने का काम ध्रुवदेव के समय में आरंभ हुआ था। उसके बाद राजा रंजीत देव के समय जम्मू में गुमट दरवाजे से लेकर दरबार गढ़ तक डेढ़ मील लम्बा बाजार था जो गुमट से शुरू होकर रघुनाथ बाजार पुरानी मंडी, मोती बाजार, पक्का डंगा से दरबादगढ़ तक फैला हुआ था। राजा मलदेव 1680 ई तक पुरानी मंडी के महलों में रहे इस के बाद वह नई मंडी या दरबार गढ़ के महलों में रहने लगे और उसके पुराने महल और उसके आस-

पास का इलाका पुरानी मंडी के नाम से प्रसिद्ध हो गया। उसके बाद महाराजा गुलाब सिंह, महाराजा रणवीर सिंह, महाराजा प्रताप सिंह, तथा रानी चाड़की जो बीरपुर की रहने वाली थी ने भी दरबार गढ़ में कई महल बनवाए। जिन इलाकों में सामन्त तथा सरकारी अधिकारी रहते थे उनको मंडियां कहा जाता था।

इस तरह राजा मालदेव तथा काली जन्नी का निकटतम सम्बंध है। यह पत्थर हमें जम्मू में उस महान राजा की याद दिलाता है जिस ने प्रजा की उन्नति तथा समृद्धि के लिए हर संभव प्रयत्न किया और जम्मू राज्य की सीमाओं को दूर-दूर तक पहुंचाया जिस पर गर्व किया जा सकता है।

जम्मू शहर का रमनीक स्थल 'बागे-ए-बाहु'

मंदिरों का शहर जम्मू अपनी सुन्दरता के लिए विश्व प्रसिद्ध है। तवी नदी के किनारे एक छोटी सी पहाड़ी पर स्थित यह प्राचीन नगर दूर से ही यहां आने वालों के दिल को मोह लेता है। युंही पर्यटक या यात्री इस नगर के निकट पहुंचते हैं उन के दिलों की धड़कनें तेज हो जाती हैं और वे जम्मू नगर के बाजारों, गलियों मंदिरों, मस्जिदों तथा अन्य धार्मिक स्थानों की यात्रा करने तथा उन को करीब से देखने के लिए उतावले हो जाते है। उनका जी चाहता है कि वे उड़ कर शीघ्र अति शीघ्र वहां पहुंच जायें। यहीं से शिवालक की पहाड़ियों का सिलसिला आरम्भ होता है।

उत्तरी भारत के तमाम शहरों में जम्मू को इसलिए भी महत्व प्राप्त है क्यों कि इस क्षेत्र में बहुत से तीर्थ स्थान हैं जिन की यात्रा के लिए लाखों की संख्या में श्रद्धालु यहां आते हैं। माता वैष्णो देवी तथा श्री अमर नाथ स्वामी जी की यात्रा पर आने वाले भक्त जम्मू में कुछ दिन ठहरते हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानो प्रकृति ने इसे छोटी सी पहड़ी पर एक मुक्ट के रूप में सजा कर रखा हो। लोग इस पावन क्षेत्र में आध्यात्मिक शांति प्राप्त करने के साथ साथ यहां के शांत वातावरण, हरे भरे जंगलों, ऊंचे ऊंचे पहाड़ों की बर्फ से लदी चोटियों तथा झरनों के मधुर संगीत का आनन्द लेने यहां आते हैं। जम्मू शहर के पूर्व तथा दक्षिण में सूर्यपुत्री (तवी नदी) की निर्मल जल धारा बाहु दुर्ग तथा महा माया के वनों का सुहावना वातावरण तथा आस-पास के सुन्दर दृश्य सब को अपनी ओर आकर्षित करते हैं और एक बार जो यहां आकर चंद दिन गुजारता है उसके दिल में बार-बार यहां आने की इच्छा पैदा होती है। जम्मू शहर सदियों से आपसी भाई चारे तथा राष्ट्रीय एकता की एक मिसाल रहा है जहां हिन्दू मुसलमान, सिख, ईसाई तथा अन्य धर्मों के मानने वाले सदियों से एक साथ रहते चलते आ रहे हैं। जम्मू को न केवल धार्मिक बल्कि ऐतिहासिक दृष्टि से भी बड़ा महत्व प्राप्त है। कई विदेशी आक्रमण कारियों ने इस पर आक्रमण कर के इसे तबाह करने का यत्न किया परन्तु यहां के वीर शासकों तथा लोगों ने अपनी जान की बाजी लगाकर इस की शान को कायम रखा।

जम्मू शहर कब और कैसे आबाद हुआ इस बारे में इतिहासकारों का अपना-अपना मत है परन्तु इस बात पर अधिक लोग सहमत हैं कि जिस स्थान पर जम्मू शहर आबाद है वहां किसी समय जंगल हुआ करता था। इसे राजा जाम्बूलोचन ने बसाया था जो बाहु राज्य के शासक राजा बाहुलोचन का भाई था। कुछ लोगों का यह भी मत है कि जम्मू इससे पहले भी आबाद था परन्तु वह किसी अन्य नाम से पुकारा जाता था। जम्मू जो 1775 ई में केवल साढ़े तीन मील क्षेत्र फल में ही फैला हुआ था जिस की आबादी कुछ हज़ार तक थी और जो गुमट से लेकर पुरानी मंडी तक या उस से कुछ दूर तक ही था आज एक बहुत बड़ा शहर बन गया है जिस के आस पास मीलों तक नई बस्तियां आबाद हो गई हैं और जिस की जनसंख्या अब दस बारह लाख के करीब है विकास की ओर अग्रसर है। लाखों की संख्या में पर्यटक तथा यात्री विभिन्न स्थानों की यात्रा तथा सैर के लिए यहां आते हैं। जम्मू क्षेत्र में कुद, बटोत, मानसर, पत्नीटाप, सन्नासर तथा अन्य कई स्थानों पर गर्मियों तथा सर्दियों में पर्यटकों की भीड़ रहती है। यह स्थान जम्मू से दूर हैं इस लिए कुछ लोग जम्मू में ही कुछ दिन रह कर वापस अपने घरों को चले जाते थे। जम्मू शहर में ऐसे स्थान की कमी थी जहां जम्मू वासी या पर्यटक कुछ देर सैर करके अपना मनोरंजन तथा दिन भर की थकावट को दूर कर सकें। जहां वे अपने परिवार के साथ घूम फिर सकें। कोई ऐसा बाग नहीं था जहां वे गर्मियों के दिनों में वृक्षों की छाया तले कुछ क्षण आराम कर सकें। तेजी से उन्नति तथा विकास की ओर अग्रसर जम्मू शहर में कोई ऐसा स्थान न था जहां लोग भाग दौड़ तथा तनाव पूर्ण जीवन से छुटकारा पा सकें। जहां हरी भरी घास, रंग बिरंगे फूल तथा फौवारे हों जिन्हें देखकर उन की सारी थकान दूर हो जाये और वह तरो ताजा होकर अपने घरों को लौट सकें। यहां ऐसा कोई स्थान न था जो शहर के पास हो और जहां सब आसानी से पहुंच सकें। जहां मनोरंजन की सुविधा हो और जहां पहुंचने में किसी को कोई आर्थिक कठिनाई भी न हो। जो अमीर गरीब सब की पहुंच के अंदर हो। यहां इंसान अपने तमाम दुखों को भूल कर मानसिक शांति का अनुभव कर सके। शेरे कश्मीर शेख मुहम्मद अब्दुल्ला जब 1975 ई में इन्दरा गांधी एकार्ड के अन्तर्गत जम्मू-कश्मीर राज्य के मुख्य मंत्री बने तो उन के दिल में एक विचार

आया कि क्यों न कश्मीर की तरह जम्मू शहर के रंग रूप को भी संवारा जाये। इस प्राचीन नगर की शोभा में चार चांद लगाये जायें ताकि यहां आने वाले यात्रियों तथा पर्यटकों की गिनती में वृद्धि हो और यह नगर विकास की ओर आगे बढ़े। यहां आने वाले माता वैष्णों देवी के यात्री माता के दर्शनों के साथ साथ स्थानों की सैर भी कर सकें और अपने मन को प्रसन्न चित भी कर सकें। जम्मू नगर को सुन्दर बनाने के लिए सड़कों को चौड़ा किया गया और चौराहों पर फौवारे तथा रंग बिंरगी रोशनियां लगाई गईं। पार्क भी बनाये गये परन्तु जम्मू में किसी पिकनिक स्पाट की कमी को बहुत हद तक महसूस किया जाता रहा। जम्मू तथा इस के आस-पास गांवों तथा कस्बों में रहने वालों को गर्मी से राहत पाने तथा मन बहलाव के लिए मानसर पत्नीटाप, और सन्नासर तक़ जाना पड़ता था। इन सब स्थानों की सैर और वहां जा कर ठहरना हर आदमी के बस की बात नहीं थी। उनके दिल में जम्मू में कोई ऐसा पिकनिक स्पाट बनाने की इच्छा उत्पन्न हुई जहां मनोरंजन तथा विश्राम की सभी सुविधाएं सब को मामूली खर्च करने पर मिल जायें। उन्होंने अपने साथियों से अपनी इस योजना का उल्लेख किया तो सब ने उचित स्थान की खोज शुरू कर दी ताकि इस योजना को कार्य रूप दिया जा सके।

उस समय श्री जी. एम. शाह मुख्य मंत्री शेख सहिब के मंत्री मंडल में निर्माण मंत्री थे। शेख साहिब ने उन के साथ-खास तौर पर इस योजन पर विचार किया। एक बार श्री शाह सिंचाई विभाग द्वारा तवी नदी के बाऐं किनारे पर निर्मित विश्राम गृह में कुछ समय के लिए ठहरे। उन दिनों यह स्थान कांटे दार झाड़ियों, पत्थरों तथा अन्य जंगली पेड़ पौधों से भरा था और दूर दूर तक हरियाली का नामो निशान न था। इस विश्राम गृह के बरामदे में बैठकर शाह साहिब ने चारों ओर नजर दौड़ाई तो उन को यह स्थान बड़ा पसंद आया। आस-पास के वातावरण तथा स्थिति से वह बड़े प्रभावित हुए। विश्राम गृह से बाहर आकर चारों ओर नजर दौड़ाई। उनके साथ राज्य सरकार के अधिकारी भी थे। उन्होंने देखा कि उन की दाई ओर सूर्यपुत्री तवी अपने सुन्दर जल प्रवाह से मधुर संगीत बखेरती दूर पश्चिम की ओर चली गई है। सामने जम्मू शहर का सुन्दर दृश्य जिसमें शहर का एक एक घर, डुग्गर की बहुमूल्य विरासत के प्रतीक

शाही महल, मन्दिरों के कलश, मस्जिदों के ऊंचे-ऊंचे मिनार, गुरद्वारे तथा गिरजाघर, सरकारी कार्यालय, बल खाती सडकें तथा चौराहे जिन में महान विभूतियों के बुत लगे हैं नजर आए। पीछे ऐतिहासिक बाहु दुर्ग और उस में निर्मित माता महा काली का मंदिर दुर्ग के मुख्य द्वार के सामने मैदान में शाही मस्जिद और दूर उत्तर की ओर माता वैष्णों देवी की ऊंची ऊंची बर्फ से लदी पहाड़ियों की चोटियां देखकर उन के दिल में खुशी की लहर दौड़ गई। उनके दिल में विचार आया कि इस से बढ़ कर सुन्दर स्थान और कौन सा हो सकता है जहां प्राकृतिक सुन्दरता महामाया के हरे भरे वन, डुग्गर वास्तु कला के नमूने मंदिर तथा मस्जिद का एक स्थान पर निर्माण किया गया हो। यह ऐसा स्थान था जहां आस पास के प्राकृतिक दृश्यों का आनंद उठाया जा सकता है। श्री शाह ने माता महाकाली मन्दिर के नीचे ढलवान में एक बाग बनाने का निश्चय कर लिया जो तमाम आधुनिक सुविधाओं से पूर्ण हो। जहां पहुंच कर मनुष्य स्वच्छ वातावरण में खोकर अपने तमाम दुखों को भूल जाये। उन्होंने इस स्थान के विषय में शेख साहिब से बात की तो शेख साहिब ने भी अपनी सहमती प्रगट कर दी और इस योजना पर काम शुरू हो गया। श्री शाह ने इस योजना को पूर्ण रूप देने के लिए स्वर्गीय श्री एच.एस. बाली को प्रौजेक्ट आफिसर नियुक्त किया। डिप्टी कमीशनर जम्मू से इस के लिए जमीन प्राप्त की गई और केंद्रीय सरकार के संबंधित मंत्री से भी बात चीत की गई और पत्र व्यवहार तथा अन्य कार्यवाईयां पूरी करने के बाद योजना पर कार्य आरंभ कर दिया गया। बाहु फोर्ट की ढलान पर स्थित होने से बाग का नाम 'बागे-ए-बाहु' रखा गया। राजा जाम्बू लोचन के भाई राजा बाहु लोचन ने तवी नदी के किनारे बहुत बड़े जंगल को साफ करके एक विशाल दुर्ग का निर्माण किया था। इस दुर्ग का नाम उस ने अपने ही नाम पर बाहु दुर्ग रखा था। उस ने अपने महल भी इस दुर्ग में बनवाये थे। उस के बाद जम्मू तथा बाहु राज्य पर कई राजाओं ने शासन किया और कई बार इस की मरम्मत हुई। वे राजे, महाराजे तो आज रहे नहीं परन्तु राजा बाहु लोचन द्वारा निर्मित यह दुर्ग आज भी यहां मौजूद है। देवी महाकाली के मन्दिर तथा दुर्ग के कारण राजा बाहु लोचन का नाम आज भी अमर है। 'बाहु फोर्ट' तथा 'बावे वाली माता' यह दोनों नाम बड़े प्रसिद्ध हैं। इतना ही नहीं यह दोनों नाम जम्मू

शहर की पहचान बन चुके हैं और अब इन में तीसरा नाम 'बागे-ए-बाहु' भी जुड़ चुका हैं। राज्य के सभी विभागों के सहयोग तथा परिश्रम से पांच साल की अवधि में ही जब यह सुन्दर तथा आकर्षक 'बागे-ए-बाहु' बन कर तैयार हुआ तो जम्मू के लोगों ने बड़ी प्रसन्नता व्यक्त की। जम्मू वासी खुशी से झूम उठे। निर्माण मंत्री श्री शाह ने 26 अगस्त 1981 को यह सुन्दर 'बागे-ए-बाहु' उस समय के मुख्य मंत्री शेख मुहम्मद अब्दुल्ला को भेंट किया और शेख साहिब ने अपने कर कमलों द्वारा यह बाग जनता के लिए खोल दिया। सुन्दरता तथा आकर्षण के कारण 'बागे-ए-बाहु' की गिनती जम्मू के दर्शनीय स्थानों में होने लगी।

'बागे-ए-बाहु' में नीचे से लेकर ऊपर बाहु फोर्ट तक एक नहर का निर्माण किया गया जिस में फौवारे लगाये गये। दोनों ओर ऊपर नीचे आने जाने के लिए सिढ़ियां बनाई गई तथा सरू के वृक्ष लगाये गये। स्थान स्थान पर फूलों की क्यारियां, हरी भरी घास तथा छाया दार वृक्ष देखकर यहां आने वालों को असीम आनन्द का अनुभव होता है। रात के समय रंग बिरंगी रोशनियों से बागे-ए-बाहु का दृश्य और भी आकर्षक हो जाता है। जम्मू तथा आस-पास के लोग दिन ढलते ही अपने काम काज से फारग हो कर 'बागे-ए-बाहु' की सैर करने तथा माता महाकाली के मन्दिर में पूजा अर्चना करने के लिए चल देते हैं। वे यहां अपने बाल बच्चों के साथ देर रात तक ठंडी वायु का आनन्द लेते हैं। यहां काम करने वाले अधिकारियों ने भी जी जान से इस बाग को बनाने संवारने का यत्न किया और वहां चारों ओर हरियाली तथा रंग बिंरगे फूलों की पंक्तियों को देखकर आने वालों को ऐसा प्रतीत होता मानो वे स्वर्ग लोक की सैर कर रहे हैं। इस बाग का निर्माण करने बालों को भी प्रसन्नता होती थी कि वे अपने अभिप्राय में सफल हुए हैं और उन के परिश्रम से जम्मू में एक सुन्दर तथा आकर्षक स्थान का निर्माण हो सका। जम्मू वासियों तथा यहां ठहरने वाले यात्रियों तथा पर्यटकों की जुबान पर बस एक ही नाम था 'बागे-ए-बाहु'। किसी समय यहां की रंग बिरंगी रोशनियों से जगमगाता बाग बाहु ऐसा प्रतीत होता था मानो आकाश अपने सितारों के साथ धरती पर उत्तर आया हो। 'बागे-ए-बाहु' को देखने यहां की सैर करने तथा यहां की ठंडी ठंडी हवा का आनन्द लेने देर रात तक लोगों

की भीड़ रहती थी।

इन दिनों यहां पर्यटकों तथा माता वैष्णों देवी की यात्रा पर आने वाले श्रद्धालुओं में कमी हुई है परन्तु यह भी सच्च है कि यहां आने वालों के लिए यहां पर्यास सुविधाओं के अभाव में अब लोग यहां आना पसंद भी नहीं करते। पिछले दिनों 'बागे-ए-बाहु' में दिल्ली के दीपक जैन अपने कुछ मित्रों के साथ 'बागे-ए-बाहु' में सैर के लिए आए थे। जब उन से 'बागे-ए-बाहु' के बारे में पूछा गया तो उन्होंने कहा, अब इस बाग में वह बात नजर नहीं आती जो तीन चार साल पहले थी। उस समय बहुत रौनक होती थी। यहां आते थे तो वापस जाने को जी नहीं चाहता था। अब तो जैसे सारी रौनक समास हो गई है। उस समय के मकाबले अब केवल 5 प्रतिशत आकर्षण ही बाकी रह गया है।

सब जानते है कि 'बागे-ए-बाहु' जम्मू का एक मात्र पिकनिक स्पाट है जहां आम जनता तथा स्कूलों के विद्यार्थी सैर करने के लिए आते हैं इस के बावजूद इस के विकास तथा देख भाल की ओर उचित ध्यान नहीं दिया जा रहा 'बागे-ए-बाहु' को अधिक आकर्षक बनाने की ओर कितना यत्न किया जा रहा है इस का अनुमान इस बात से लगाया जा सकता है कि यहां गर्मियों के दिनों में भी पीने के पानी का उचित प्रबंध नहीं। नल तो हैं परन्तु उनमें पानी नहीं, फौवारे तो हैं परन्तु टूट चुके हैं और काम नहीं कर रहे, नहर तो है परन्तु सूखी हुई, झील तो है परन्तु वह भी सूख चुकी है और किश्तियां किनारों की शोभा बढ़ा रही हैं। चिल्ड्रन पार्क के झूले भी टूट चुके हैं। उन के बिखरे टुकड़े, फौवारों के टूटे फूटे रंगीन बल्ब जैसे यहां आने वालों की नादानी पर हंस रहे है और चिल्ला चिल्ला कर उन से कह रहे हों कि आप यहां सैर करने क्यो आये, चले जाओ यहां से हमारी हालत देख रहे हो। यहां वरिष्ठ अतिथियों के लिए बंगला तो है परन्तु गर्मी तथा धूप से बचने के लिए हाम लोगों के लिए कोई शैड भी नहीं। हो सकता है कि उच्च अधिकारियों, मंत्रियों या मुख्य मंत्री के आने पर बाग में रौनक आती हो और फौवारे भी चलते हों, किश्तियां भी चलती हों झील में परन्तु आम दिनों में तो हालत संतोष जनक नहीं होती। एक नई योजना के अंतर्गत म्यूजिकल फौवारे तो लग रहे हैं परन्तु जो पहले लगे हैं और जो अपनी बेबसी पर आंसू बहा रहे हैं उन की ओर उचित ध्यान नहीं दिया जा रहा। बेशक

अब इसे विकसित करने के प्रयास हो रहे हैं परन्तु अभी बहुत कुछ करना बाकी है।

आवश्यकता इस बात की है कि संबंधित विभाग जम्मू के एकमात्र पिकनिक स्पाट के विकास तथा उस की देख भाल की ओर ध्यान दे ताकि अधिक से अधिक जम्मू वासी, पर्यटक तथा माता वैष्णों देवी के दर्शन को आने वाले श्रद्धालु यहां आएं और राहत अनुभव करें और अपने अपने क्षेत्र या शहर में जाकर 'बागे-ए-बाहु' की देखभाल तथा इस का प्रबंध चलाने वाले अधिकारियों की प्रशंसा करें।

बाहु फोर्ट-जम्मू

प्राचीन काल में दुर्ग, महल तथा राजाओं द्वारा निर्मित बड़े-बड़े भवन उस राज्य की उन्नति तथा समृद्धि के प्रतीक माने जाते थे। जिस राजा के पास इन की संख्या अधिक होती थी वह उस क्षेत्र का सबसे बड़ा और शक्तिशाली राजा माना जाता था। प्राचीन काल में शत्रु से युद्ध करने तथा क्षेत्र की सुरक्षा के लिए इन दुर्गों का बहुत महत्त्व था। इन भवनों तथा दुर्गों का निर्माण तो उसी समय संभव होता था जब किसी बाहरी आक्रमण की संभावना नहीं होती थी क्यों कि ऐसे कामों के लिए समय, धन तथा शांत वातावरण की आवश्यकता होती थी। देश के अन्य भागों की तरह डुग्गर देश में भी इन दुर्गों की अधिक संख्या है। जम्मू क्षेत्र में स्थान स्थान पर नदियों के तटों, जंगलों, तथा ऊंचे ऊंचे टीलों पर बड़े छोटे कई किले बने हुए हैं जिन में बाहु फोर्ट अधिक प्रसिद्ध है। इन किलों में सैनिकों के रहने तथा गोला बारूद रखने का उचित प्रबंध होता था। बाहु फोर्ट का निर्माण राजा बाहु लोचन ने किया था।

जम्मू के राजा अपने आप को भगवान राम के वंशज मानते हैं। भगवान राम के लव कुश दो पुत्रों में से कुश के अनेक पुत्रों में से सुदर्शन के दो पुत्र थे अग्निवर्ण तथा अग्निगिर। अग्नि वर्ण ने लम्बे समय तक शासन किया। उस के तेज स्वभाव से दुखी होकर अग्निगिर अपने कुछ साथियों के साथ अयोध्या छोड़ कर विभिन्न पहाड़ी क्षेत्रों से होता हुआ इस क्षेत्र में स्थाई रूप से रहने लगा और अपनी सुरक्षा के लिए छोटे छोटे दुर्ग बना लिए। दुर्ग के मुखिया को दुर्गराज कहते थे जो आहिस्ता आहिस्ता दुर्गर और फिर डुग्गर कहलाने लगा। इस प्रकार चिनाब तथा रावी नदी के मध्य का क्षेत्र डुग्गर तथा यहां के रहने वाले डोगरा कहलाने लगे।

जाम्बू लोचन आठवीं शताब्दी में इस प्रदेश का राजा बना और उस ने ही तवी नदी के किनारे एक किला बनवाया जिस का नाम बाहुदुर्ग या बाहुफोर्ट रखा। उन दिनों इस क्षेत्र में छोटे बड़े कई राज्य थे और सब ने ही अपनी तथा प्रजा की सुरक्षा के लिए किलों का निर्माण किया हुआ था ताकि आवश्यकता पड़ने पर उन का प्रयोग किया जा सके।

उन दिनों राजनीतिक उथल पुथल के कारण भी इन किलों का बड़ा महत्त्व था और बाहु किला इस सारे क्षेत्र में अन्य किलों से बड़ा था। बाहु लोचन ने किले के

अंदर महल भी बनवाये। उन दिनों इस क्षेत्र में विदेशियों के आक्रमण भी हुआ करते थे और शायद इस बात को ध्यान में रखते हुए डोगरा राजाओं ने अपनी राजधानी बब्बापुर या बबोर को बनाया हो। कश्मीर में रचित कल्हण, जोनराज तथा श्रीधर की राज तंरगिणियों में जम्मू का उल्लेख नहीं मिलता इस लिये हो सकता है कि उस समय तक जम्मू नगर की स्थापना न की गई हो या इसे किसी और नाम से जाना जाता हो। बबोर ग्यारहवीं सदी तक जम्मू राज्य की राजधानी रहा।

किले के अतिरिक्त बाहुलोचन ने यहां बाहु नगर का निर्माण भी करवाया। यह किला तवी नदी के बाएं किनारे पहाड़ी के ऊपर बनवाया गया। किले के तीनों ओर बियाबान जंगल था। यहां आकर तवी नदी पश्चिम की ओर मुड़ जाती है। चंद्रभागा तथा तवी डुग्गर देश की पवित्र नदियां हैं जो इसी क्षेत्र से निकलती हैं और इस की सीमा के अंदर ही एक दूसरी में समा जाती हैं। इस किले की बाहरी दीवारें बहुत मोटी हैं जिन के अंतिम भाग में झरोके तथा सुराख रखे गये हैं ताकि वहां पहरा देने वाले सैनिक शत्रु की गतिविधियों पर नजर रख सकें। किले की इन दीवारों की लंबाई लगभग 150 गज और चौड़ाई 100 गज के करीब है। इस किले की महत्ता इसलिए भी बढ़ गई है क्योंकि इस में माता महाकाली जिसे बावे वाली माता भी कहते है का मंदिर है जिसके दर्शन करने के लिए श्रद्धालु दूर दूर से आते हैं। यहां हर ऐतवार तथा मंगलवार को भक्तों की भीड़ होती है। परन्तु नवरात्रों में तो यहां खास तौर पर मेलों का आयोजन किया जाता है।

यद्यपि वर्तमान किले को बने शताब्दियां बीत चुकी हैं परन्तु इस की सुन्दरता तथा मजबूती में कोई फर्क नहीं पड़ा। बाहर से देखने पर आज भी यह बड़ा आकर्षक लगता है। किले के अंदर बने महलों की छतें तो टूट चुकी हैं परन्तु दीवारें वैसी की वैसी कायम हैं और उन पर की गई नक्शोनिगारी आज भी देखने योग्य है। बाहु लोचन के बाद शायद इस को दूसरी बार राजा मालदेव ने बनवाया था इस से पहले भी कई बार इस की मरम्मत हो चुकी थी और कई राजाओं का यह निवास स्थान भी रहा होगा।

राजा मालदेव ने ही शायद बाहु को फिर से जम्मू की राजधारी बनाया और पहले स्थान पर ही किले को दोबारा बनवाया था क्योंकि बाहुलोचन के कोई संतान न थी इसलिए उस की मृत्यु के बाद बाहुराज्य का शासन उस के छोटे भाई जाम्बू लोचन को मिल गया। बाहु लोचन ने अपने भाई के खून का बदला राजा चंद्रहास से लेकर

पंजाब पर अधिकार कर लिए। उन दिनों जम्मू का सारा क्षेत्र जंगल बियाबान था जहां शेर चीते तथा अन्य जंगली जानवर घूमते रहते थे। बाहु राज्य के राजा अक्सर यहां शिकार खेलने आया करते थे। एक बार जाम्बू लोचन शिकार खेलने इस जंगल में आया तो यहां एक तालाब पर शेर और बकरी को पानी पीते देख हैरान रह गया। बकरी बिना किसी डर के पानी पी रही थी। पानी पीने के बाद दोनों वापस चले गये। यह दृश्य देखर जाम्बू लोचन शिकार करना भूल गया और अपने सिपाहियों के साथ महल में आ गया। महल में आकर उस ने अपने मंत्रियों तथा अन्य अधिकारियों से विचार विमर्श के बाद उस स्थान पर एक नगर बसाया जिस का नाम जाम्बू नगर रखा जो अब जम्मू के नाम से प्रसिद्ध है। जिस स्थान पर तालाब था और जिस स्थान पर जाम्बू लोचन ने अपना महल बनवाया वह स्थान आज पुरानी मंडी के नाम से जाना जाता है। इस के बाद जाम्बू लोचन ने जम्मू को ही राज्य की राजधानी बना दिया। उस के शासन काल में प्रजा बड़ी सुखी तथा सुरक्षित थी उस ने यहां कई कुएं, धर्मशालाएं तथा चिकित्सालय प्रजा की भलाई के लिए बनवाए। उसने जम्मू शहर को सुन्दर स्वच्छ तथा आकर्षक बनाने का पूरा यत्न किया। जम्मू को राजधानी बनाने के बाद बाकी लोग भी बाहु से उठकर जम्मू में ही रहने लगे और बाहु जम्मू राज्य का एक छोटा सा गांव बन कर रह गया।

आरम्भ में जम्मू तथा बाहु एक ही राज्य था। जम्मू के राजा कपूर देव की जब 1592 ई में मृत्यु हुई तो उस का बेटा जगदेव गद्‌दी पर बैठा। उसे अकबर बादशाह की ओर से दक्षिण में लड़ने के लिए भेजा गया। वह लड़ाई में मारा गया तो कपूर देव के छोटे बेटे राजा समैल देव ने जम्मू का शासन संभाल लिया। राजा जगदेव का बेटा परसराम देव जब जवान हुआ तो उस ने जम्मू राज्य को प्राप्त करने के लिए शहन शाह अकबर के पास दावा कर दिया। अकबर ने झगड़े को बढ़ाना उचित न समझा इसलिए उसने जम्मू का राज समैल देव और बाहु का राज्य परसराम देव को दे दिया। दोनों राज्यों की सीमा तवी नदी मानी गई। तवी के इस तरफ का क्षेत्र जम्मू राज्य तथा दूसरी ओर का क्षेत्र बाहु में शामिल किया गया।

दोनों राज्यों के राजाओं की शत्रुता बड़े समय तक बनी रही। कभी कभी आपस में लड़ाई भी हो जाती थी।

कभी बाहु क्षेत्र के गांव जम्मू वाले दबा लेते थे और कभी जम्मू के गांव बाहु में मिला लिए जाते थे। यहां तक कि यदि कोई जम्मू का रहने वाला तवी नदी को पार

कर के बाहु क्षेत्र में जाता तो उसे लूट लिया जाता था। इसी प्रकार यदि बाहु क्षेत्र से कोई आदमी तवी पार करके जम्मू आता तो उसको भी लूट लिया जाता था।

ऐसा अक्सर होता रहता था। अन्त में एक जबरदस्त लड़ाई हुई जिसमें बहुत से लोग मारे गये। इसके बाद बातचीत द्वारा शान्ति के साथ रहने का निर्णय लिया गया परन्तु दिलों से एक दूसरे के लिए घृणा समाप्त न हुई। इस प्रकार की स्थिति जम्मू के राजा हरिदेव के समय तक रही। उसके शासनकाल में जम्मू तथा बाहु को फिर मिला दिया गया और जम्मू इसकी राजधानी बना।

जम्मू के राजा ध्रुव देव ने भी इस किले की मरम्मत का काम शुरु किया जो उसके बेटे रंजीत देव के शासन काल में समाप्त हुआ। उसके बाद महाराजा गुलाब सिंह ने इस किले में आवश्यकता के अनुसार कुछ परिवर्तन किये। महाराजा रणवीर सिंह तथा प्रताप सिंह के शासन काल में भी इस किले का बहुत महत्व था। महाराजा प्रताप सिंह इस किले के अन्दर बने महलों में कुछ परिवर्तन करके उसको मुश्किल समय में राज परिवार के सदस्यों की सुरक्षा के लिए प्रयोग में लाना चाहते थे। कई बार योजना बनाई गईपरन्तु उस पर कार्य न हो सका। इस किले में माता महाकाली की मूर्ति की स्थापना के कारण राज परिवार के लोग भी समय समय पर यहां माता का आशीर्वाद लेने आते थे। डुग्गर वासियों का विश्वास है कि यहां के लोगों तथा राज परिवारों की उन्नति तथा समृद्धि माता के ही आशीर्वाद से है। माता महाकाली इस क्षेत्र की रक्षा करती है और जब कभी किसी शत्रु ने इस क्षेत्र पर आक्रमण किया उसको मुंह की खानी पड़ी। डुग्गर के राजा लड़ाई पर जाने से पहले मां काली की आराधना करते थे इसलिए निश्चित रूप से उनकी विजय होती थी।

महाराजा गुलाब सिंह से लेकर महाराजा हरि सिंह तक इस किले में शासन के विरुद्ध विद्रोह करने वालों को कैद किया जाता था। महाराजा प्रताप सिंह के समय चूंकि जम्मू पर बाहरी आक्रमणों का डर रहता था और जम्मू कश्मीर राज्य अक्सर षड्यंत्रों का शिकार रहा इसलिए जनता की सुरक्षा के लिए कुछ पग उठाये गये जिनमें एक यह भी था कि 24 घण्टों में तीन बार बाहुकिले से तोप चलाई जाती थी। एक तो सुरक्षा कारणों से दूसरा लोगों को समय की सूचना भी मिल जाती थी। पहली तोप सुबह 4 बजे चलती थी जो इस बात का संकेत देती थी कि लोग अपने घरों से निकलकर कामकाज पर जा सकते हैं।

आम तौर पर उन दिनों लोग स्नान करने के लिए तवी पर ही जाते और स्नान के बाद मन्दिरों में भगवान की पूजा अर्चना के लिए जाते थे। इसके बाद वे अपने काम में जुट जाते थे। सुबह 4 बजे से पहले किसी को भी अपने घर से निकलने की अनुमति नहीं थी। बाहु फोर्ट से दूसरी तोप दोपहर बारह बजे चलती थी जिससे आम लोगों खासकर दफ्तरों, खेतों और मजदूरी पर काम करने वालों को पता चल जाता था कि आधा दिन बीत गया है उसके अनुसार वे खाना आदि खाते थे। तीसरी तोप रात को दस बजे चलती थी। उससे पहले सभी जम्मू वासी अपने अपने घरों में चले जाते थे। रात दस बजे के बाद शहर के सभी दरवाजे बंद कर दिए जाते थे और शहर में भी किसी को घूमने फिरने की इजाज़त नहीं होती थी। रात को दस बजे के बाद यहां आने वालों को शहर से बाहर ही रात काटनी पड़ती थी। शहर के मुख्य प्रवेश द्वारों पर कड़ा पहरा होता था। रात दस बजे से लेकर सुबह 4 बजे तक नगर वासियों को घर के अन्दर ही रहना पड़ता था।

महाराजा हरि सिंह के शासनकाल में जब ऐसी कोई समस्या न रही तो रात को चलने वाली तोप बन्द करवा दी गई। केवल दोपहर को ही तोप चलाई जाती थी। बाहु फोर्ट से चलने वाली इस तोप की आवाज जम्मू के आस पास 20 मील के फासले तक सुनी जा सकती थी। ऐसा 1947 तक होता रहा। यहां से तोप चलने पर लोगों के दिलों में बाहु फोर्ट की याद बनी रहती थी और लोगों का ध्यान बाहु फोर्ट में स्थापित माता महाकाली के दरबार में चला जाता था और वे दिल ही दिल में भगवती को याद कर लेते थे। 1947 ई के बाद दोपहर को चलने वाली तोप भी बंद कर दी गई।

कुछ साल पहले बाहु फोर्ट के सर्वे का काम भारत सरकार के पुरातत्त्व विभाग ने किया था। इस विभाग ने यहां थोड़ा बहुत काम भी किया परन्तु थोड़े समय के बाद ही काम बंद कर दिया गया। इसके पीछे क्या कारण है यह मालूम नहीं हो सका। बेशक किले के बाहरी तथा कुछ भीतरी भाग को ठीक किय गया है और उस में फूल भी लगाए गए हैं परन्तु इतना ही काफी नहीं। जम्मू के लोगों के लिए इस किले का जो महत्त्व है और डुग्गर की अनमोल विरासत में इस किले का जो स्थान है उसको देखते हुए इसका रख रखाव ठीक ढंग से नहीं किया जा रहा। आवश्यकता इस बात की है कि सरकार, स्वयं सेवी संस्थाएं तथा स्थानीय लोग इस की सुरक्षा तथा देखभाल के लिए मिलकर कोई योजना बनाएं, और इसे पहले जैसा

सुन्दर तथा आकर्षक बनाने का यत्न किया जाये वरना चंद, सालों के बाद यह भी खंडरता में बदल जाएगा। यह बाहु फोर्ट हमें याद दिलाता है उन वीरों की जिन्होंने जम्मू की धरती की रक्षा के लिए अपना बलिदान दिया। उन धर्म निर्पेक्ष राजाओं की जिन्होंने जम्मू तथा बाहु राज्यों पर शासन किया और जो वास्तव में जनता के हितैषी थे। उन रणबांकुरों की जिन्होंने जम्मू राज्य की सीमाओं को दूर दूर तक पहुंचाया और अंत में एक विशाल जम्मू कश्मीर राज्य की स्थापना की।

बाहु फोर्ट राष्ट्रीय एकता की भी एक मिसाल है। इस किले के मुख्य द्वार के सामने कुछ मीटर दूर एक मस्जिद का निर्माण किया गया है। तारीख डोगरा देश के अनुसार राजा परस राम देव के बेटे राजा किशन देव ने सोलहवीं शताब्दी के अन्त में मुगल शहनशाह जहांगीर तथा मलिका नूर जहां के स्वागत के लिए इस मस्जिद का निर्माण करवाया था। दिल्ली से श्रीनगर जाते हुए उनका विचार जम्मू में रुकने का था। राजा किशन देव को जब पता चला तो उसने उनके स्वागत तथा अन्य तैयारियों के साथ-साथ मस्जिद का निर्माण भी करवाया ताकि आवश्यकता पड़ने पर जहांगीर तथा उनके साथी यहां नमाज पढ़ सकें। परन्तु शहनशाह को यह कार्य क्रम रद करना पड़ा और वह राजौरी की मुगल रोड़ से होते हुए श्रीनगर चले गये। बाद में यहां फौज के लिए गोला बारुद रखा जाता था। 1975 के बाद इस मस्जिद की मरम्मत करके इसे सजाया संवारा गया। अब यहां बड़ी संख्या में मुसलमान भाई नमाज अदा करने के लिए प्रतिदिन आते हैं और यहां खूब चहल पहल होती है।

बाहु फोर्ट जम्मू की आन तथा शान का भी प्रतीक है। जम्मू नगर की सुन्दरता, जम्मू की शोभा, जम्मू का चित्र इसके बिना अधूरा प्रतीत होता है। विक्रम चौक की ओर से तवी नदी के पुल को पार करके जब पर्यटक, माता वैष्णों देवी की यात्रा पर आने वाले श्रद्धालु या जम्मू वासी जम्मू शहर में प्रवेश करते हैं तो सब से पहले उनकी नजर दाई ओर बने विशाल बाहु फोर्ट पर पड़ती है जिसके अन्दर एक छोटे से मन्दिर में माता महाकाली की सुन्दर मूर्ति की स्थापना की गई है। एक ओर बाहु फोर्ट दूसरी ओर पहाड़ी पर बसा सुन्दर नगर जम्मू और इन दोनों के मध्य बहती सूर्य पुत्री तवी नदी की जल धारा, बाहु फोर्ट के पीछे दूर दूर तक फैले महामाया के हरे भरे जंगलात बहुत ही सुन्दर तथा आकर्षक दृष्य पेश करते हैं। बाहु फोर्ट के सामने तवी नदी के दायें किनारे पर जम्मू के राजाओं तथा महाराजाओं द्वारा निर्मित

खंडहर होते महलों को देख कर आज भी प्रत्येक डुग्गर वासी का सर गर्व से ऊंचा हो जाता है। परन्तु हैरानगी की बात है कि कोई भी डुग्गर की इस अमूल्य विरासत की सुरक्षा के लिए आगे नहीं आ रहा। अफसोस इस बात का है कि प्रशासन, डोगरा राज परिवार तथा उन से जुड़े संगठन, स्वयं सेवी संस्थायें अन्य धार्मिक, सामाजिक तथा राजनीतिक संस्थाएं और डुग्गर धरती की शान तथा उज्जवल अतीत का ढंडोरा पीटने वाले सभी अपनी आंखों के सामने डुग्गर की इस विरासत को मिट्टी में मिलते देख रहे हैं। यदि यही हाल रहा और समय रहते कोई कार्यवाई नहीं की गई तो सब कुछ, समाप्त हो जाएगा जिस पर हमें गर्व है। यदि समय रहते इसकी सुरक्षा न की गई तो वे तमाम भवन, महल किले तथा यहां की चित्र कला के नमूने समाप्त हो जायेंगे जिन से डुग्गर देश का नाम दुनिया भर में प्रसिद्ध है।

बसोहली का राजमहल

बसोहली, रावी नदी के दायें किनारे प्रकृति की गोद में बसा एक बहुत ही सुन्दर नगर है। दूर दूर तक फैले ऊंचे ऊंचे पहाड़, घने जंगलात, बर्फ से लदी पहाड़ों की चोटियां, रावी नदी की लहरों से निकलता मधुर संगीत तथा आकर्षक वातावरण इस नगर की शोभा को चार चांद लगाते हैं।

बसोहली को राज्य की राजधानी बनाने से पहले पाल वंश के राजाओं ने बिलावर को अपनी राजधानी बनया था। पाल वंश के पहले राजा भोगपाल थे जिन का सम्बंध चंद्रवंश की शाखा तोमर राजपूतों से था। बिलावर में रहने के कारण उनकी संतान बिलावरिया कहलाई। इसी वंश के आठवें राजा मानशकेय ने बिलावर से 22 मील दूर पूर्व की ओर रावी के किनारे पर बसोहली नगर बसाया। रावी नदी के दूसरे किनारे नूरपुर तथा चम्बा के राज्य थे जिन से बसोहली के राजाओं के सम्बंध अच्छे न थे इसलिए हर समय उनके आक्रमण का डर रहता था इसलिए राजा भूपत पाल ने चार फरलांग ऊपर जंगल कटवा कर वर्तमान बसोहली नगर बसाया और यहीं अपने महल बनवाऐ।

बसोहली नगर उस समय बसोहली राज्य की राजधानी होने के अतिरिक्त 22 पहाड़ी राज्यों में महत्वपूर्ण स्थान रखता था। 17वीं और 18वीं शताब्दी में बसोहली की समृद्धि का कारण यह था कि यह नगर प्रसिद्ध व्यापारिक मार्ग में स्थित था जो नाहन, विलासपुर, गुलेर और नूरपुर से होकर जम्मू जाता था।

यहां का राजमहल खास तौर पर अपनी सुन्दरता के लिए बाकी पहाड़ी राज्यों के राजाओं के महलों से अधिक सुन्दर तथा वास्तुकला की दृष्टी से अच्छा समझा जाता था। यह भी कहा जाता है कि बसोहली का राजमहल बनाने का काम राजा मानाशकेय ने आरम्भ किया था और बाद में राजा भूपतपाल ने नया रंग रूप देकर इसे मकमल किया।

स्थानीय लोगों में एक दंत कथा बड़ी प्रसिद्ध है कि राजा भूपत पाल ने राज महल को बनवाने के लिए देश के चुने हुए निपुण कारीगर काम पर लगाये और उन को कहा गया कि इस राज महल को इतना सुन्दर तथा आकर्षक बनाया जाए कि देखने वाले हैरान रह जायें। कहते है कि इस महल को बनाने में पंद्राह वर्ष लगे और जो पिता पुत्र इस को बना रहे थे वे पूरे पंद्राह साल के बाद एक दूसरे से मिले। एक

ने महल का काम पूर्व और दूसरे ने पश्चिम से आरम्भ किया था। महल का काम पूरा होने पर पिता पुत्र बड़े प्रसन्न थे। उन्होंने राजा भूपत पाल से प्रार्थना की कि राज महल तैयार है आकर देख लें।

महल की दीवारों पर रंग दार चित्र तथा नक्शो नगारी देखकर राजा दंग रह गया क्योंकि राजमहल उसकी आशा से अधिक सुन्दर था। उसने कारीगिरों को मुंह मांगा इनाम दिया और उन की जी भर का प्रशंसा की।

कुछ दिनों के बाद राजा ने पिता पुत्र दोनों को दरबार में बुलाया और उन से पूछा यदि कोई दूसरा राजा इस प्रकार का महल बनाने के लिए आप से कहे तो क्या आप बना देंगे। उत्तर मिला क्यों नहीं सरकार इस से भी अधिक सुन्दर महल बना सकते हैं। परन्तु इस के लिए अधिक धन की आवश्यकता होगी। राजा ने कहा यदि आप को कोई मुंह मांगा धन दे तो ? उत्तर मिला क्यों नहीं सरकार यह तो हमारा काम है और हम वास्तुकाल में जितनी अच्छी महारत प्रदर्शित करेंगे उतना ही हमारा नाम होगा। हम इससे भी कई गुणा अच्छा महल बनाने की योग्यता रखते हैं। यह सुन कर राजा के दिल को धक्का सा लगा। उस ने सोचा कहीं यह किसी दूसरे राजा के कहने पर इससे अच्छा महल न बना दें इसलिए उसने पिता पुत्र दोनों के हाथ कटवा दिए परन्तु इस का लिखित प्रमाण नहीं मिलता।

इस राजमहल में दरबार हाल, शीश महल, रंगमहल आदि बहुत ही सुन्दर भवन बने हुए थे। राजमहल के एक भाग को पुराना महल तथा दूसरे भाग को नया महल कहते हैं। राजा भूपतपाल के बाद उसके उत्तराधिकारियों संग्रामपाल, हिन्दालपात, कृपाल पाल, धीरजपाल, मेदनी पाल तथा अमृतपाल ने समय समय पर राजमहल में नये भवन बनवाये। महेंद्र पाल ने रंगमहल तथा शीश महल बनवा कर उनकी दीवारों पर उस समय के प्रसिद्ध चित्रकारों से नायक-नायिका तथा प्रेम से संबंधित विषयों पर चित्र बनवाये। इस महल की दीवारों पर नाच करती सुन्दरियों, श्री कृष्ण तथा गोपियों की लीला, प्रेम कहानियों, रस मंजरी तथा रामायण के अतिरिक्त कई धार्मिक चित्र बने हुए थे जो देखने वालों का मन मोह लेते थे। आज सारे चित्र पूरे तौर पर लुप्त हैं परन्तु इतने वर्ष बीत जाने पर भी टूटी हुई दीवारों पर कहीं कहीं चित्रकला के कुछ नमूने नजर आते हैं। इस महल की महत्ता इस लिए भी अधिक थी क्योंकि इस की दीवारों पर बसोहली चित्रकला के बहुत से चित्र देखने को मिलते थे जिन के कारण बसोहली नगर विश्व भर में प्रसिद्ध था। महल के बनाने

में पक्की ईंटों, देवदार, चूने तथा सुर्खी का प्रयोग किया गया था। दरवाजों पर भी बेल-बूटे तथा फूल बनाये गये थे। फ्रांसीसी पर्यटक जी.टी. विगन 1835 में पहली बार बसोहली से उस समय गुज़रा जब बसोहली का अन्तिम राजा कल्याण पाल बच्चा ही था। उसे महल में प्रवेश करने की अनुमति नहीं दी गई परन्तु राजा भोपेन्द्र पाल की विधवा ने तोहफे के तौर पर विगन को फल आदि भेजे। 1839 में उस ने दूसरी बार बसोहली का दौरा किया। ऐसा प्रतीत होता है कि इस बार वह महल के अन्दर गया और ध्यान पूर्वक हर स्थान को देखा। बसोहली और राजमहल के बारे में वह लिखता है। ''बसोहली में एक लम्बा बाजार है और जहां तक मेरा विचार है यहां कोई ऐसा स्थान नहीं जो पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित कर सके यदि यहां पुराने राजाओं का नवाबों जैसा महल न होता जो अपनी किस्म का बेहतरीन भवन है जितने भी मैं ने पूर्व में देखे हैं। इस की वर्गाकार बुर्जीयां, खाई के पास किले की चौड़ी दीवारों में बन्दूकें चलाने के लिए बने सुराख, बाहिर की ओर बढ़ी हुई खिड़कियां, चीनी ढंग की छत्तों वाली बालकोनियां, सामने एक तालाब, जो अधिक व्याख्या में न जाते हुए मुझे अपने देश की प्राचीन लाल ईंटों से बने भवनों की याद दिलाता है। जम्मू जाने वाले रास्ते से कुछ मील के फैसले से इसे देखा तो मुझे सुन्दरता में यह भवन हेडलबर्ग से कम सुन्दर दिखाई नहीं दिया। जब यहां से दूर बर्फानी चोटियों पर नजर डाली तो वे पहाड़ों के आस पास उसी तरह नज़र आई जैसे मैं हेडलबर्ग की सुन्दरता को निहार रहा हूं।'' पाल वंश के राजाओं को वास्तुकला और खासकर चित्रकला से बहुत लगाव था। उन्होंने अपने समय के चित्रकारों को प्रोत्साहित किया। राजा कृपाल पाल ने चित्रकला को बढ़ावा दिया जिस कारण उस समय उच्च कोटि के चित्रकार पैदा हुए जिन की कृतियां विश्व के प्रसिद्ध अजायबघरों की शोभा बढ़ा रही हैं। जब तक उन की हकूमत रही इस राज महल की देख-भाल ठीक ढंग से होती रही परन्तु 1846 ई में जब गुलाब सिंह जम्मू कश्मीर राज्य के महाराजा बने तो बसोहली राज्य का वजूद खत्म हो गया। पाल वंश के अन्तिम राजा टिक्का कल्याण पाल को पेंशन देकर उसे राज गद्दी से हटाकर बसोहली का प्रबंध महाराजा गुलाब सिंह ने अपने एक सूबेदार को सौंप दिया। तब से ही इस राजमहल की नगरानी और रख-रखाव की ओर कोई ध्यान न दिया गया। यह राजमहल जो कभी जम्मू की पहाड़ियों के सात अजूबों में गिना जाता था गिरना आरंभ हो गया और जो हिस्सा एक बार गिरा उसकी मरम्मत का कोई प्रबंध

न किया गया।

राजमहल के अधिकतर भाग पर इन दिनों बंदरों का अधिकार है और ऐसा दिखाई देता है कि कुछ ही सालों में इस राज महल का निशान भी मिट जायेगा और उसका उल्लेख एक कहानी बनकर केवल किताबों तक ही सीमित रहेगा।

विदेशी पर्यटकों ने इस राजमहल की बहुत प्रशंसा की है परन्तु बड़े दुख की बात है कि यह ऐतिहासिक यादगार तथा बहुमूल्य विरासत इनसान के बेरहम हाथों से बरबाद हो गयी और अब केवल उस के खंडरात ही दिखाई देते हैं। एक दो छत्रियों के सिवाये कुछ बाकी नहीं रहा। दीवारें स्थान स्थान से टूट चुकी हैं परन्तु इस ओर न प्रशासन का ध्यान जाता है और न ही स्थानीय लोगों ने इसे बचाने का यत्न किया। सब से निचली मंजिल में कुछ कमरे हैं परन्तु वे भी अब खस्ता हाली का शिकार हो चुके हैं। कुछ स्थानीय किसानों तथा दुकानदारों ने अपने लिए बड़े-बड़े निवास स्थान इसी राज महल की ईंटों को उखाड़ कर बनाये हैं। इसके अतिरिक्त जिसे आवश्यकता पड़ी राज महल की ईंटों का बड़ी दलेरी से अपने लाभ के लिए प्रयोग किया परन्तु किसी ने रोकने का यत्न भी नहीं किया। इस राजमहल की सुन्दरता को बरबाद करने वाला कोई बाहिर से नहीं आया। यह उन लोगों का काम है जो शायद अपने अतीत तथा डुग्गर की विरासत के शत्रु थे जिनको आने वाली पीढ़ियां कभी क्षमा नहीं करेंगी। यदि प्रशासन तथा स्थानीय लोग मिलकर यत्न करें तो इस संबंध में अब भी बहुत कुछ किया जा सकता है।

डुग्गर का गौरव-बसोहली चित्रकला

जम्मू से भगभग 125 किलोमीटर दूर बसोहली जिला कठुआ की तहसील और एक छोटा सा कस्बा है। 1846 ई. से पहले बसोहली एक स्वतंत्र राज्य था जो बाईस पहाड़ी राज्यों में विशेष स्थान रखता था। व्यापार का केंद्र होने के कारण बसोहली [illegible] के लोग बड़े समृद्ध थे। बसोहली राज्य पर पाल वंश के राजाओं ने शासन किया। इस वंश का पहला राजा भोगपाल था जो आठवीं शताब्दी के आरंभ में अलमोड़ा से यहां आए। बसोहली से पहले पाल वंश के राजाओं ने बिलावर को अपने राज्य की राजधानी बनाया था।

बसोहली राज्य चित्रकला के लिए भी विश्व प्रसिद्ध था। बसोहली कलम के चित्र न केवल भारत अपितु विश्व के प्रसिद्ध अजायब घरों की शोभा बड़ा रहे हैं। बसोहली कलम का आरंभ कब हुआ इस बारे में कला विशेषज्ञों की अपनी अपनी राय है। आर्चर के अनुसार सतारवीं शताब्दी के मध्य तक देश के इस दूर दराज भाग में किसी प्रकार की कोई पेंटिंग न थी। राजा भूपत पाल के बाद जब राजा संग्राम पाल 1635 ई. में राजगद्दी पर बैठे तो उनको मुगल शहनशाह शाहजहान ने दरबार में हजार होने का आदेश दिया। वह कुछ समय तक मुगल दरबार में रहे और वहां मुगल दरबार के चित्रकारों की बनाई गई तस्वीरों से बहुत प्रभावित हुए। जब वह दिल्ली से वापस आए तो अपने साथ मुगल दरबार के चित्रकार को भी ले आए और उसे स्थाई रूप से बसोहली में रहने को कहा। उसे कहा गया कि वह स्थानीय चित्रकारों को इस संबंध में उचित ज्ञान दें। संग्राम पाल के बाद उस का भाई हिंदाल पाल राज गद्दी पर बैठा। उसने केवल पांच साल तक ही राज किया और 45 साल की आयु में स्वर्ग सिधार गये। उनकी मृत्यु के पश्चात कृपालपाल-बसोहली के राजा बने जो एक अच्छे विद्वान होने के साथ साथ कला प्रेमी भी थे। उन्होंने बसोहली कलम की सरप्रस्ती की जिस के कारण उनके शासनकाल में उच्चकोटि के चित्रकार पैदा हुए जिन्होंने बसोहली का नाम दूर तक प्रसिद्ध किया। राजा कृपालपाल अक्सर दिल्ली दरबार जाया करते थे और वहां के चित्रकारों से भेंट करके उनकी कलाकृतियों के बारे में जानकारी प्राप्त किया करते थे। कभी-कभी वह अपने साथ बसोहली के स्थानीय चित्रकारों को भी दिल्ली ले जाकर मुगल दरबार के चित्रकारों से उनकी भेंट करवाते थे। यही कारण है कि बसोहली कलम

पर मुगल दरबार की चित्रकारी का प्रभाव साफ तौर पर दिखाई देता है। एक विचार यह भी है कि बसोहली चित्रकला राजस्थान के प्रभाव से वजूद में आई इसलिए बसोहली कलम को राजस्थानी कलम की एक शाख भी समझा जाता है। क्योंकि मुगल शासकों के राजस्थानी राजाओं से बहुत ही निकट संबंध थे इसलिए इन सामाजिक तथा राजनैतिक संबंधों के कारण राजस्थानी कला पर मुग़ल चित्रकला का प्रभाव पड़ना यकीनी था। हम देखते हैं कि उस समय छोटे चित्र बनाने का जो सिलसिला आरंभ हुआ उस में मुगल चित्रकला की नकल साफ तौर पर दिखाई देती थी। राजस्थान के राजपूत शासक हिमालय के आस-पास के पहाड़ी इलाकों के सरदार, पंजाब की पहाड़ी रियासतें तथा कांगड़ा, गुलेर, चम्बा, बसोहली, कुल्लू, मंडी, सकेत, घड़वाल और जम्मू में पहाड़ी सरदारों के छोटे छोटे राज्य मुगल साम्राज्य के अधीन थे। इन सब के आपसी मेल-मिलाप से ही पहाड़ी कलम को बढ़ावा मिला। राजा कृपाल पाल के शासन काल में बसोहली कलम ने बहुत उन्नति की। वह स्वयं चित्रकला में रुचि रखते थे और अपने समय के चित्रकारों को प्रोत्साहित करते थे। उसी के शासन काल में संस्कृत के विद्वान भानुदत्त की किताब (पंद्रहवीं शताब्दी) ''रसमंजरी'' के शलोकों पर आधारित उस समय के प्रसिद्ध चित्रकार देवी दास ने चित्र बनाये। यद्यपि रसमंजरी में राधा कृष्ण का उल्लेख नहीं परन्तु राजा कृपाल पाल ने चित्रकारों से कहा कि वे श्री कृष्ण को एक आदर्श प्रेमी और नायक के रूप में प्रस्तुत करें। राधा तथा श्री कृष्ण के प्रेम को इस तरह चित्रों में दिखायें कि लोगों के दिलों पर प्रभाव पड़े ताकि यह कलाकृतियां रहती दुनियां तक लोगों के आकर्षण का केंद्र बनी रहें। रसमंजरी चित्रों में भगवान कृष्ण को सृष्टि रचने वाले के रूप में दिखाया गया है जो एक पिता की भांति अपने भक्तों से प्यार करते हैं। कहते हैं कि इस सैट में अधिकतर चित्र देवीदास के बनाये हुए हैं। इन चित्रों में नायक तथा नायिका की उनकी आयु, अनुभव, शारीरिक, मानसिक तथा जजबाती तौर पर दरजाबंदी की गई है। रसमंजरी में उस समय के सामाजिक हालात पर भी रोशनी डाली गई है। रस मंजरी जैसी पुस्तकें उस समय केवल ऊंचे वर्ग के लोगों के मनोरंजन के लिए लिखी जाती थीं और उन लोगों की खुशी तथा दिल बहलावे के लिए चित्रकार राजाओं के कहने पर उनको चित्रों में ढालते थे। दूसरी पुस्तक 'गीतगोविंद' भी संस्कृत में लिखी गई कविता है जिसे बंगाल के हिन्दू राजा लक्ष्मण सैन के दरबारी कवि जयदेव ने बारहवीं शताब्दी में लिखा था।

इस लंबी कविता में राधा-कृष्ण के प्यार का वर्णन किया गया है। जयदेव की इस कविता को भारत वासियों ने बहुत पसंद किया। बसोहली के राजा मेदनी पाल के शासन काल में बसोहली के चित्रकार मानकू ने गीत गोविंद कविता पर आधारित चित्र बनाये। गीत गोविंद में राधा कृष्ण के प्यार को दिखाया गया है वह प्यार जो दिल की गहराईयों से किया जाता है। इन चित्रों में दिखाया गया है कि किस प्रकार जमना के किनारे उन दोनों के प्यार का श्रीगणेश होता है। बसंत ऋतु के दृश्य, गोपियां तथा गवालों के साथ कृष्ण लीला, राधा की सहेलियों से रासलीला तथा इस प्रकार के कई चित्र बनाये गये हैं जो देखने वालों का दिल मोह लेते हैं।

इसके बाद चित्रकारों ने राजा जीत पाल के शासन-काल में कवि विद्यापति की लिखी धार्मिक पुस्तक 'भागवत पुराण' पर आधारित चित्र बनाये। इसमें भी कृष्ण लीला, कृष्ण जन्म, गोप तथा गोपियों के खेल, राधा से प्रेम तथा भगवान कृष्ण के चमत्कारों को दिखाया गया है। बसोहली के पश्चात मनकोट तथा तीरा सुलतानपुर के चित्रकारों ने भी 'भागवत पुराण' पर आधारित चित्र बनाये जो आम लोगों में बेहद लोकप्रिय हुए।

इसके अतिरिक्त नलदम्यन्ति, रागमाला, बारह मासा, रासमाला तथा रामायण पर आधारित चित्र भी बनाये गये। अठारहवीं शताब्दी में कुल्लू में चित्रकारों का एक वर्ग था जिसे रागमाला के नाम से पुकारा जाता था। बसोहली में भी रागमाला पर बहुत से चित्र बनाये गये जिन में राग-रागनियों तथा गाने बजाने के ढंगों को दर्शाया गया है। चित्रों की सादगी तथा रंगों के अनुपम प्रयोग से इन चित्रों की सुंदरता तथा आकर्षण में वृद्धि हुई है।

बसोहली कलम के चित्रों के रंग अधिक गहरे हैं। उनमें सफेद तथा दूसरे रंगों की मलावट नहीं की गई और आम रंगों को ही महत्त्व दिया गया है। यह चित्र तीखे और चुभने वाले प्राईमरी रंगों से बनाए गए हैं। रंगों की शोखी और चुभन के कारण यह बाकी चित्रकारों के बनाए हुए चित्रों से विभिन्न दिखाई देते हैं। इन बातों से सिद्ध होता है कि बसोहली चित्रकला का आरंभ स्थानीय चित्रकारों ने ही किया था। यह चित्र लाहौर तथा अमृतसर की मार्किट में धड़ा धड़ बिक रहे थे परन्तु व्यापारियों को यह मालूम नहीं था कि यह चित्र कहां से लाये जा रहे हैं। व्यापारी इन को तिब्बती चित्र कह कर पुकारते थे।

यद्यपि इन चित्रों का तिब्बत या नेपाल से कोई संबंध न था सिवाये इसके कि

रंगों की खास स्कीम दोनों से मिलती-जुलती है। दरअसल यह चित्र बसोहली के ही थे जो अपने स्थानीय रंगों, सुंदरता तथा आकर्षण के कारण लोगों को पसंद आते थे। बसोहली के चित्रकारों ने राधा कृष्ण के प्रेम को जजबाती रंगों तथा लकीरों में समाया है इसके साथ ही इन चित्रों में उस समय के ग्रामीण जीवन को भी बड़े सुंदर ढंग से चित्रित किया गया है। बसोहली चित्रों के रंग यद्यति बड़े भड़कीले तथा चमकदार हैं फिर भी उनका प्रयोग नपे तुले नियमों के अनुसार ही किया गया है। जैसे पीला रंग मौसम बहार, सूर्य की धूप और आमों के शगूफों को दर्शाता है। यह रंग प्यार करने वालों के जोश और जज़बात की भी तरजमानी करता है। नीला रंग कृष्ण का है। लाल रंग कामदेव का है जो बसोहली चित्रों के केंद्रीय विचार से मेल खाता है। प्राईमरी रंगों का कंट्रास्ट खास कर नीला और पीला, लाल और नीला जो हम बसोहली कलम में देखते हैं प्रशांसनीय है। 'गीत गोविंद' में पीले, लाल, नीले, गहरे सब्ज तथा ब्राऊन रंग के चौड़े मैदान दिखाये गये हैं। बसोहली कलम की एक और विशेषता यह है कि इसमें सोने तथा चांदी के रंगों का खुला प्रयोग किया गया है। बेल-बूटों तथा आभूषणों में सोने के रंगों और नक्शोनिगारी, वस्त्र, खिड़कियों, खम्बों, तथा तंबुओं को बनाने में चांदी के रंगों का प्रयोग किया गया है। मोतियों और गले के हारों को उभरे हुए सफेद रंग से दिखाया गया है जैसे कि कुछ राजस्थानी चित्रों में नजर आता है। बसोहली चित्रों में आभूषणों पर अधिक जोर दिया गया है। यहां तक कि भूतों और राक्षसों को भी हार और सोने के मुकट पहने हुए दिखाया गया है। खाली स्थानों में सादा लाल, पीला या सफेद रंग भर दिया गया है। नीलम का रंग दिखाने के लिए एक प्रकार की मक्खी के परों का प्रयोग किया गया है।

बसोहली कलम के चित्रों में पुरुष तथा स्त्रियों का कद एक जैसा दिखाया गया है। सर लम्बा और पीछे को मुड़ा हुआ है जिसमें केवल एक ही आंख दिखाई देती है। पुरुष तथा स्त्रियां आभूषणों से लदे हुए हैं। पुरुषों के सिरों पर राजस्थानी पगड़ी कमर में बंद और चूड़ीदार पाजामा पहने हुए जबकि स्त्रियों को चोली,घाघरा, घाघरे के अंदर तंग चूड़ीदार मुगलाई ढंग का पाजामा तथा जालीदार बारीक चादर में दिखाया गया है। हिन्दू अवतारों, जैसे भगवान राम तथा कृष्ण को सर पर मुकट पहने दिखाया गया है। बसोहली कलम के नमूने डोगरा आर्ट गैलरी जम्मू तथा अमर पेलस जम्मू में देखे जा सकते हैं। उस समय के बने हुए चित्रों की सुंदरता आज तक कायम है। सैंकड़ों वर्ष बीत जाने पर भी इन चित्रों के रंगों में वैसी चमक

दिखाई देती हैं।

बसोहली कलम जिस के कारण बसोहली का नाम विश्व प्रसिद्ध हुआ को बढ़ावा देने के लिए सरकार की ओर से बहुत कम ध्यान दिया जा रहा है। इस में कोई शक नहीं कि चंद स्थानीय चित्रकार जिन में ललित डोगरा तथा सुरेंद्र बलोरिया आदि शामिल हैं बसोहली कलम को जिन्दा रखने और उसे बढ़ावा देने के प्रयत्न कर रहे हैं परंतु सरकार की ओर से उचित सहायता न मिलने के कारण उन्हें भी कई प्रकार की मुश्किलों का सामना करना पड़ रहा है। यदि समय रहते बसोहली चित्रकला को प्रोत्साहित न किया गया और सरकार के साथ साथ स्थानीय लोगों ने इस महत्वपूर्ण जिम्मेदारी की ओर ध्यान न दिया तो बसोहली चित्रकला केवल किताबों तक ही सीमित होकर रह जायेगी। हैरानगी की बात है कि विश्व प्रसिद्ध बसोहली कलम को बढ़ावा देने के लिए बसोहली में कोई शिक्षा केंद्र नहीं और न ही वहां इन चित्रों की कोई गैलरी ही बनाई गई है जहां चित्रकला में रुचि रखने वाले बसोहली चित्रों को देख सकें जो वास्तव में डुग्गर का गौरव तथा अमूल्य विरासत है।

समाधि रानी सुचेत सिंह-रामनगर

जम्मू क्षेत्र का चप्पा-चप्पा प्राकृतिक सुन्दरता तथा मनमोहक दृश्यों से भरा पड़ा है जिन का आनन्द लेने के लिए भारत तथा विश्व के अन्य भागों से पर्यटक यहां आते हैं। इस के अतिरिक्त यहां कई तीर्थ स्थान भी हैं जिन की यात्रा करने के लिए सारा साल श्रद्धालुओं का आना जाना लगा रहता है। यहां के रहने वाले धार्मिक विचारों के हैं और प्रभु भक्ति पर पूर्ण विश्वास रखते हैं और उसे ही सभी सुखों का दाता मानते हैं। सदियों से यहां हिन्दू, मुस्लमान भाईयों की तरह रहते चले आ रहे हैं और इस क्षेत्र की उन्नति तथा समृद्धि के लिए मिलजुल कर काम कर रहे हैं। यद्यपि इस पहाड़ी क्षेत्र के राज्यों के साधन बहुत ही सीमित थे फिर भी यहां के लोग अपने परिश्रम से अपनी आवश्यकताओं को पूरा करने में समर्थ थे। सारा क्षेत्र छोटे-छोटे राजवाड़ों तथा जागीरों में बंटा हुआ था और सब अपने अपने ढंग से वहां का शासन चलाते थे। कुछ जागीरदारों तथा राजाओं ने अपने अपने राज्य में बड़े बड़े महल बनवाये थे जिन की शोभा देखते ही बनती थी। यह महल उन राजाओं की समृद्धि के प्रतीक माने जाते थे। महलों के साथ-साथ उन राजाओं ने किले, बावलियां, मन्दिर, तालाब तथा सरायें भी बनवाईं जो उस समय की वास्तुकला के अदभुत नमूनों में गिने जाते हैं। प्राचीन काल के यह स्मारक डुग्गर की अमूल्य विरासत का अभूतपूर्व चिन्ह हैं जिन पर हर डुग्गर वासी को गर्व है। इन स्मारकों में कुछ तो समय की गति और कुछ शासन तथा स्थानीय लोगों की लापरवाही के कारण खण्डरात में बदल चुके हैं और जो बाकी बचे हैं वे भी समाप्त होते जा रहे हैं।

जब 1846ई. में अमृतसर सन्धि के अन्तर्गत महाराजा गुलाब सिंह ने जम्मू कश्मीर राज्य की नींव रखी तो उस से पहले डोगरा देश के 22 राजगान थे जिनको दिल्ली के शासक मुबारक शाह ने पट्टा दिया हुआ था। इन में से 11 रावी नदी के पार और 11 रावी नदी तथा चिनाब नदी के मध्य थे।

जम्मू कश्मीर राज्य का क्षेत्रफल 84 हजार वर्गमील था। इस सन्धि के अन्तर्गत रावी पार के 11 राजवाड़े अंग्रेजी क्षेत्र में शामिल हो गये और महाराजा गुलाब सिंह को रावी तथा चिनाव नदी के मध्य का क्षेत्र तथा चिनाव पार पुंछ तक के राज्यों पर पूर्ण अधिकार मिल गया।

22 पहाड़ी राज्यों में बन्दरालता राज्य का महत्वपूर्ण स्थान था। शताब्दियों पहले

इस क्षेत्र में गांव गांव का अलग अलग राज्य होता था और वहां जो व्यक्ति सब से अधिक ताकतवर होता था राणा के नाम से शासन कारता था। लोग राणाओं के अत्याचारों से तंग आ गये थे। कुछ गांवों के लोगों ने राजा चम्बा बचित्र देव के पास जाकर प्रार्थना की कि इन राणाओं ने उन का जीना मुश्किल कर दिया है। ईश्वर के लिए उन की रक्षा की जाये। राजा बचित्र देव ने अपने छोटे भाई बेहतर देव को बहुत बड़ी सेना दे कर भेजा जिसने राणाओं को मार भगाया और रामनगर के स्थान पर अपनी राजधानी बना ली। बेहर देव से पहले इस स्थान का नाम नगर था। उस ने इस क्षेत्र का नाम बन्दरालता रखा और उसी के नाम से उस के वंशज बन्दराल राजपूत प्रसिद्ध हुए। यहां के राजा चन्द्रधर देव के समय महाराजा रंजीत सिंह ने इस राज्य को अपने अधिकार में ले लिया और जब 17 जून 1822 को महाराजा रंजीत सिंह ने गुलाब सिंह को जम्मू का राज दिया तो उस के छोटे भाई सुचेत सिंह को बन्दरालता, साम्बा तथा सुमरता का क्षेत्र जागीर के तौर पर देकर उसे राजा की उपाधि प्रदान की। ध्यान सिंह को पुंछ का क्षेत्र देकर उसे पुंछ का राजा बना दिया। बन्दरालता का राज परिवार इस परिवर्तन के बाद राज्य को छोड़ कर चला गया और फिर कभी लौट कर वहां नहीं आया।

''डुग्गर का इतिहास'' के अनुसार राजा सुचेत सिंह भी अपने बड़े भाई गुलाब सिंह की तरह बड़ा बहादुर था। उसने महाराजा रंजीत सिंह की अटक, कच्छ तथा हजारा क्षेत्रों को जीतने में सहायता की थी इसलिए सुचेत सिंह को बन्दरालता का राजा बनाया गया। सुचेत सिंह ने बन्दरालता का नाम बदल कर राम नगर रख दिया और हर प्रकार से इस राज्य की उन्नति तथा समृद्धि के लिए काम करने लगा। राजा सुचेत सिंह ने नगर के पास ही ऊंचे स्थान पर महल बनवाया जो कारीगरी का अदभुत नमूना समझा जाता है। रामनगर के चोगान में एक बहुत बड़ा किला बनवाया जो उस समय की मुगल वास्तुकला से प्रभावित नजर आता है। इस किले में और भी कई कमरे बनाये गये जहां सैनिकों के रहने तथा गोला बारूद रखने का उचित प्रबंध था। किले के चारों ओर गहरी खाई खोदी गई। खाई समेत यह किला लगभग 10 कनाल भूमि पर बना हुआ है। राज्य के आर्थिक विकास के लिए भी उसने बहुत काम किया। बाहर से कारीगरों को बुला कर रामनगर में बसाया जिस से रामनगर ऊनी कम्बल बनाने की मंडी बन गया और इस क्षेत्र के व्यापार में वृद्धि हुई। लोगों का जीवन स्तर भी ऊंचा हो गया और वे समृद्ध हो गये। अपने राज्य में

शांति बनाये रखने तथा विद्रोहियों को कुचलने के लिए प्रशिक्षित सेना का गठन किया और राज्य की सीमाओं की रक्षा के लिए सैनिकों को सीमावर्ती क्षेत्रों में नियुक्त किया। उसकी सैन्य शक्ति की धाक आसपास के क्षेत्रों में जमी हुई थी और कोई भी उस से टक्कर लेने की हिम्मत नहीं करता था। उसने राज्य की सीमाओं को बढ़ाने के लिए सब से पहले हिमता (चनैनी) के एक गांव मरोठी पर अधिकार कर लिया। हिमता के राजा ने सुचेत सिंह को ललकारा तो सुचेत सिंह ने उस पर आक्रमण कर दिया और चचैनी स्थित उस का महल फूंक दिया। डर के मारे हिमता का राजा भाग कर लाहौर चला गया और महाराजा रंजीत सिंह से न्याय मांगा। महाराजा रंजीत सिंह ने अपने विश्वास पात्र राजा गुलाब सिंह को कहा कि हिमता के राजा दयाल सिंह तथा सुचेत सिंह में सुलाह कराये। गुलाब सिंह ने दयाल सिंह के राज्य का कुछ भाग राजा सुचेत सिंह को दे दिया और कुछ अपने पास रख लिया और बाकी दयाल सिंह को दे दिया।

इस से हिमता का राज्य बहुत ही छोटा हो गया। राजा सुचेत सिंह के महल को पुराना महल भी कहते हैं क्योंकि उस के बाद जो महल महाराजा रणवीर सिंह के पुत्र राम सिंह ने बनवाया था वह नया महल कहलाने लगा। सुचेत सिंह की मृत्यु के बाद रामनगर का क्षेत्र महाराजा रणवीर सिंह ने अपने बेटे राम सिंह को जागीर के तौर पर दिया था। सुचेत सिंह का महल बड़ा सुन्दर तथा मजबूत है। इसकी दीवारें बहुत ऊंची है जिन पर बुर्ज बने हुए हैं जहां तक पहुंचने के लिए सीढ़िया बनाई गई हैं। महल के मध्य एक खुला आंगन है जिस के चारों ओर कमरे बने हुए हैं। कमरों की दीवारों पर बहुत ही सुन्दर तथा आकर्षक चित्र वने हुए हैं। यह महल तीन मंजिला है सर्दी के मौसम में कमरों को गर्म रखने के लिए अंगीठियां बनी हुई हैं। महल की छत से रामनगर के आस पास दूर तक का क्षेत्र दिखाई देता है। गुलाब सिंह, सुचेत सिंह तथा ध्यान सिंह तीनों भाई लाहौर दरबार में ऊंचे पदों पर नियुक्त थे। राजा सुचेत सिंह की सात रानियां थीं परन्तु कोई संतान नहीं थी। उस के पास रामनगर तथा साम्बा के अतिरिक्त पंजाब में भी कई जागीरें थीं। राजा ध्यान सिंह की मृत्यु के बाद वह लाहौर दरबार में प्रधान मंत्री बनना चाहता था परन्तु न बन सका क्योंकि यह पद ध्यान सिंह के पुत्र हीरा सिंह को दिया गया। राजा हीरा सिंह ने सुचेत सिंह की दो डोगरा बटालियनों को लाहौर दरबार से निकाल दिया। लाहौर दरबार में हीरा सिंह के भी कई शत्रु थे जिन्होनें सुचेत सिंह से कहा कि हीरा सिंह

को सबक सिखाना चाहिए। रंजीत सिंह की मृत्यु के बाद लाहौर दरबार में फैली अफरा-तफरी के कारण सुचेत सिंह कुछ समय के लिये तो चुप रहा परन्तु उसने निश्चय कर लिया था कि लड़ाई करके वह हीरा सिंह को प्रधान मंत्री के पद से हटा देगा। वह अपने कुछ सिपाहियों के साथ लाहौर के बाहर आकर ठहर गया और अपने बाकी सैनिकों की प्रतीक्षा करने लगा। हीरा सिंह के साथियों ने खबर दी कि राजा सुचेत सिंह के ईरादे अच्छे नहीं। वह गड़बड़ करने के निश्चय से आया है। उसने खासला सेना को आदेश दिया कि सुचेत सिंह को जंजीरों में जकड़कर लाया जाये। 20 हजार सिख सैनिकों ने राजा सुचेत सिंह के कैम्प को घेरे में ले लिया। राजा सुचेते सिंह के सैनिकों की संख्या केवल 300 थी। दिवान भीम सैन भी खालसा सैनिकों पर टूट पड़े और बहुत से सिपाहियों को मारने के बाद स्वयं भी मारे गये। इसके बाद राय केसरी सिंह भी मारे गये। कुछ समय के बाद राजा सुचेत सिंह भी रणभूमि में प्रवेश कर गये और सिख सैनिकों को मारना शुरु कर दिया। सिख सैनिकों ने राजा सुचेत सिंह को चारों ओर से घेर लिया और उनका बध कर दिया। मित्रों तथा शत्रुओं ने उस की मृत्यु पर शोक प्रकट किया। अपने चाचा की मृत्यु का समाचार सुन कर हीरा सिंह की आंखों से भी आंसू बह निकले। राजा सुचेत सिंह तथा उनके साथियों की मृत्यु का समाचार सुनकर सारे रामनगर में शोक की लहर दौड़ गई। साम्बा, जम्मू, रामनगर तथा काहनाचक में कई स्त्रियां सती हो गई। जो रानियां तथा दासियां रामनगर में थीं वह भी सती हो गईं। रामनगर के नर, नारियां, बच्चे, बूढ़े सभी विलाप करने लगे और अपने प्रिय राजा की मृत्यु पर आंसू बहाने लगे। सुचेत सिंह की आयु उस समय केवल 44 वर्ष की थी। सुचेत सिंह की दोनों रानियां, रानी बन्दराल तथा रानी गुलेरी 30 गोलियों (दासियों) के साथ रामनगर के चोगान में सती हो गई। उनकी समाधि वहीं बनी है। सती होने की यह घटना बैसाख 1901 को हुई। उस दिन की याद में आज भी रामनगर तथा आस पास के लोग समाधि पर आकर सती होने वाली रानियों तथा दासियों को श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं। क्योंकि सुचेत सिंह का कोई पुत्र न था इसलिए यह समाधि महाराजा रणवीर सिंह ने बनवाई थी। समाधि के आंगन में भी दो छोटी छोटी समाधियां है जिन में एक गांव माढ़ता के निहाल सिंह गोरिये की पत्नी तथा दूसरी समाधि शामा नौकर की पत्नी की है। निहाल सिंह तथा शामा दोनों राजा सुचेत सिंह के साथ ही लाहौर में मारे गये थे। कहते हैं कि सती होने से पहले रानियों ने धन

दौलत हीरे जवाहरात तथा अनगिनत गहने तालाब में फैंक दिये और कुछ दान में दे दिये। वहां विधि पूर्वक हवन यज्ञ भी किया गया। धार्मिक रीति रिवाज के अनुसार वेद मंत्रों का जाप हुआ जिस के बाद सती की रस्म अदा की गई। उस समय पूजा का लोटा मोती राम पुरोहित को सौंपा गया। समाधि परिसार 3 कनाल तथा 6 मरले में है। समाधि मुंडेर तथा कोनों पर सुन्दर तथा आकर्षक कमल के फूल बने हैं। समाधि की भीतरी दीवारों को भी सुन्दर धार्मिक चित्रों से सजाया गया है। इन चित्रों में रामायण, महाभारत, कृष्ण लीला तथा अन्य धार्मिक चित्र शामिल हैं। 150 वर्ष गुजर जाने पर भी इन चित्रों की चमक तथा सुन्दरता वैसी ही बनी हुई है। समाधि के अन्दर शिव तथा शक्ति की पिंडी के दर्शन करके मन को शांति प्राप्त होती है।

अब इस समाधि के साथ साथ रामनगर के सभी प्राचीन स्मारक भारत सरकार के पुरातत्व विभाग की देख रेख में हैं और यह विभाग डोगरा राजाओं के स्मारकों की मरम्मत आदि करके उनको पहले जैसा रंग रूप देने का यत्न कर रहा है ताकि डुग्गर की बहुमूल्य विरासम को खण्डरात में तबदील होने से बचाया जा सके। यह वे स्मारक हैं जिनकी एक एक ईंट से हमें प्राचीन इतिहास की जानकारी प्राप्त होती है। समाधि के प्रांगन में पुरातत्व विभाग की ओर से लगाये गये एक बोर्ड पर दिये गये संक्षिप्त परिचय के अनुसार, ''इस समाधि का लोग बड़ा आदर करते हैं। यह उसी स्थान पर बनी है जहां राजा सुचेत सिंह की पत्नी अपने पति की लाहौर में मार्च 1884 को मौत के बाद सती हुई थी। राजा सुचेत सिंह के भतीचे महाराजा रणवीर सिंह ने इस समाधि को पहाड़ी आस्ताने की तरज पर बनवाया है। इस में बेहतरीन पत्थर का काम किया गया है तथा जददारी तसावीर की आमेजी की गई है। ऊंची-ऊंची दीवारों के अन्दर बनी यह समाधि परदक्षण पथ और मदखल के दोनों तरफ बनी कोठियों पर मुश्तमिल है। दीवार पर बनी जद्दारी तस्वीर में राजा सुचेत सिंह को सजे हुए दरबार में दिखाया गया है। असल आस्ताने में एक हशंत पहलू शिखर है जिस के चार रुखों पर सन्यासी तथा कृष्ण लीला के चित्र बनाये गये हैं। ''

रामनगर में राजा सुचेत सिंह द्वारा निर्मित पुराना महल, किला, राजा राम सिंह द्वारा निर्मित नया महल, शीश महल, रंग महल, रानी की समाधि के अतिरिक्त मन्दिर आदि शक्ति, अमर कुटिया, अक्षर कुण्ड, बावली भटियाड़ी, नृसिंह मन्दिर शिव मन्दिर, मन्दिर पुरातन भगवान शिव, (चेहगली चौरी) मन्दिर कुडियारां, स्वयं भू, शिव मन्दिर, डालसर शिव मन्दिर, कुटिया महात्मा टोप वाले, राधा कृष्ण मन्दिर

तथा अन्य कई स्थान देखने योग्य है।

रामनगर में पहुंच कर ऐसा प्रतीत होता है मानो हम किसी धर्म नगरी का भ्रमण कर रहे हैं जहां की पवित्र धरती साधु संतों तथा पीरों फकीरों के स्पर्श से स्वर्ग, समान हो गई है।

आवश्यकता इस बात की है कि इन प्राचीन तथा ऐतिहासिक स्मारकों की सुरक्षा की ओर उचित ध्यान दिया जाये। इस संबंध में स्थानीय प्रशासन तथा रामनगर की जनता को चाहिए कि वे सम्बंधित अधिकारियों का ध्यान इस ओर दिलाने का यत्न करते रहें ताकि इन स्माराकों की शोभा बनी रहे। यह स्मारक हमारे उज्जवल अतीत के चिन्ह हैं।

रामनगर के राजमहल

जम्मू-कश्मीर प्राकृतिक सुन्दरता से माला माल है और इसी कारण इसे धरती का स्वर्ग कहा जाता है। यहां के शांत वातावरण तथा मनहोहक दृश्यों का आनन्द उठाने के लिए विश्व के कोने काने से पर्यटक यहां आते हैं। यहां के ऊंचे-ऊंचे पर्वत, नदियां, नाले, झरने तथा पहाड़ियों को देख कर हर कोई खुशी से झूम उठता है यही कारण है कि ऋषियों मुनियों तथा पीरों फकीरों ने भी इसी पवित्र भूखण्ड को ईश्वर की आराधना के लिए चुना। इसी पवित्र धरती पर उनको ईश्वर के दर्शन हुए और यहीं उन्होंने अपनी मीठी वाणी से प्यार तथा आपसी भाईचारे का संदेश यहां के लोगों को दिया।

इसी राज्य के जम्मू क्षेत्र में एक सुन्दर कस्बा है राम नगर जो प्रकृति की गोद में छोटी छोटी पहाड़ियों तथा हरे भरे वनों के मध्य बसा हुआ है और जो हर किसी को अपनी ओर आकर्षित करता है। इस कस्बे में देखने योग्य कई ऐसे स्थान तथा प्राचीन स्मारक हैं जिनको देखने के लिए न केवल जम्मू-कश्मीर बल्कि भारत तथा विश्व के कई भागों से लोग यहां आते हैं। रामनगर जम्मू से 103 किलो मीटर तथा ऊधमपुर से 38 किलो मीटर की दूरी पर स्थित है। गर्मियों के दिनों में जब मैदानी क्षेत्रों में सख्त गर्मी पड़ती है तो कई लोग यहां के शीतल जलवायु में कुछ दिन गुजारे के लिए भी यहां आते हैं। यूं तो रामनगर में बहुत से स्थान देखने योग्य है परन्तु यहां के राज महल जो डोगरा राजाओं ने बनवाये हैं हमारी अमूल्य विरासत का एक महत्वपूर्ण भाग हैं जिनको देखकर उस समय की वास्तुकला के बारे में बहुत अधिक ज्ञान प्राप्त होता है। रामनगर का पुराना नाम बन्दरालता था। बन्दरालता एक पहाड़ी राज्य था जिस पर बंदराल राजपूतों का शासन था। इस राज्य की स्थापना चम्बा के राजाओं ने की और इस का पहला राजा बेहतर देव था जो चम्बा के राजा विचित्र देव का भाई था। जिन बाईस पहाड़ी राज्यों को सब से बड़ा माना गया था उनमें बंदरालता का राज्य भी शामिल था। बंदराल राजपूत तब तक बंदरालता पर शासन करते रहे जब तब कि सिखों की सेना ने उनको 1821 ई में वहां से हटा कर बंदरालता पर पूर्ण अधिकार नहीं कर लिया जिसे कुछ समय तक महाराजा रंजीत सिंह ने अपने अधिकार में रखा और उसके बाद, 17 जून 1822 ई को यह राज्य महाराजा गुलाब सिंह के सब से छोटे भाई सुचेत सिंह को देकर उसे

इस राज्य का राजा बना दिया। बंदराल राजपूत चम्बा के रहने वाले थे जिनका सम्बंध चंद्रवंशी राजपूतों से था और जो हालात से मजबूर होकर यहां बस गये थे। इस सम्बंध में एक लोक कथा बड़ी प्रसिद्ध है। कहते हैं कि रामनगर के पास एक गांव है कुर्त्ता जिस पर एक राजा राज करता था। उसके मंत्री का नाम घरू था वह उस क्षेत्र में एक प्रतिष्ठित व्यक्ति के रूप में जाना जाता था। कुछ लोग उसकी प्रसिद्धि से जलते भी थे। वे चाहते थे कि कब उनको मौका मिले और राजा को उसके विरुद्ध भड़काऐं। उन्होंने राजा से शिकायत की कि आप का मंत्री अपने पास जो तलवार रखता है वह लकड़ी की है। यदि विश्वास न हो तो स्वयं परख लें। उन दिनों दशहरे पर दुर्गा को भैंसे की बली चढ़ाते थे। कुछ लोग दशहरे के दिन राजा के पास गये और उससे कहा कि वह अपने मंत्री को उस तलवार के साथ भैंसे का सिर काटने के लिए कहें। घरू ने उत्तर दिया, महाराज राजपूतों का काम भैंसे काटना नहीं, कोई बहादरी का काम करने के लिए कहें। लोगों ने राजा के कान भरे हुए थे इसलिए राजा ने कहा कि इस भैंसे का सिर तो आप को इसी तलवार के साथ काटना होगा जो आप के पास है। आखिर मंत्री ने अपनी तलवार म्यान से निकाली और लोगों की चिंता किये बिना भैंसे का सिर काट दिया। मंत्री घरू यह अपमान सहन न कर सका और चम्बा के राजा के भाई वेतहर देव से मिलकर बंदरालता पर आक्रमण करके उसे जीत लिया। इस प्रकार उस क्षेत्र पर चम्बा के राजाओं का अधिकार हो गया और उस वंश के बंदराल राजपूतों ने बंदरालता राज्य की स्थापना की।

सुचेत सिंह ने 1844 ई तक बंदरालता पर शासन किया। बंदराल राजपूत चित्रकला में बड़ी रुचि रखते थे। अपने शासन काल में उन्होंने चित्रकारों को प्रोत्साहित किया। बंदरालता चित्रकला की बुनियाद उसी समय रखी गई जो सुचेत सिंह के समय में बहुत फली फूली। राजा सुचेत सिंह के शासनकाल में बहुत सी यादगारें महल तथा दुर्गों का निर्माण हुआ जिनमें उस समय के चित्रकारों ने अपनी कला के जोहर दिखाये और उन महलों तथा भवनों की सुन्दरता में कई गुणा वृद्धि की। सुचेत सिंह ने रामनगर कस्बे के पूर्व में एक ऊंचे स्थान पर महल का निर्माण किया और उसके सामने एक बड़े चौगान में एक दुर्ग भी बनवाया। सुचेत सिंह का यह महल वास्तुकला का अद्‌भुत नमूना समझा जाता है। यह दुर्ग मुगल वास्तुकला से प्रभावित नजर आता है। इस दुर्ग के भीतर कमरों का निर्माण भी किया गया है

जहां हथियार तथा गोला बारूद रखने तथा सैनिकों के रहने का उचित प्रबंध था।

26 मार्च 1844 ई को राजा सुचेत सिंह की मृत्यु के बाद महाराजा गुलाब सिंह ने रामनगर की जागीर को जम्मू के साथ मिला लिया। उन्होंने अपने जीवन काल में ही अपने पुत्र रणवीर सिंह को जम्मू-कश्मीर का महाराजा बना दिया था। महाराजा रणवीर सिंह ने अपने मंजले पुत्र राम सिंह को छोटी आयु में ही रामनगर की जागीर सौंप दी। राम सिंह ने रामनगर में राजा सुचेत सिंह के महल के साथ ही नीचे एक और महल बनवाया और उसमें शीश महल, रंग महल तथा दिवान खाना भी बनवाया जिनकी दीवारों पर बेहतरीन किसम के भित्ति-चित्र बनाये गये जो कला प्रेमियों के लिए प्रेरणा स्रोत हैं। राजा सुचेत सिंह द्वारा निर्मित महल को पुराना महल तथा राजा राम सिंह द्वारा निर्मित महल को नया महल कहा जाने लगा। राजा सुचेत सिंह ने रामनगर को अपनी जागीर की राजधानी बनाया था। इस कस्बे के विकास तथा इसे और अधिक सुन्दर तथा आकर्षक बनाने के लिए उन्होंने बहुत काम किया। दूर दूर से कारीगर बुलाकर यहां ऊनी कम्बल बनाने के उद्योग को बढ़ावा दिया। कस्बे में स्थान स्थान पर बाग लगवाए, मन्दिरों तथा बावलियों के निर्माण के साथ-साथ प्रजा की भलाई के लिए भी कई काम किये।

राजा सुचेत सिंह तथा राजा राम सिंह द्वारा निर्मित महलों की सुन्दरता देखते ही बनती है। इन महलों की बनावट देखकर हैरानगी होती है कि उस समय भी इतने अच्छे कारीगर थे। लगभग दो सौ साल गुजर जाने के बाद भी उनकी सुन्दरता वैसी की वैसी बनी हुई है। यह महल अब भारत सरकार के पुरातत्त्व विभाग की देख रेख में हैं। जो इनको पहले जैसा रूप देने में प्रयत्नशील हैं।

महलों तक जाने के लिए कुछ सीढ़ियों को चढ़ना पड़ता है। सीढ़ियों के दोनों ओर सुन्दर फूल खिले हुए हैं जो यहां आने वाले पर्यटकों का स्वागत करते प्रतीत होते हैं। सारे परिसर को तीन भागों में बांटा जा सकता है पहले भाग में पुराना महल है, जो पिछली ओर है। भारत के पुरतत्त्व विभाग के अनुसार।

इस महल को राजा सुचेत सिंह (1801-1844) ने बनवाया था। राजा सुचेत सिंह को महाराजा रणजीत सिंह ने बंदरालता की जागरी तथा राजा की उपाधि दी थी। बहुत से कमरों पर आधारित यह महल एक बड़े आंगन के सामने बना है। महल के चारों ओर बनी दीवार पर जगह-जगह घंटाघर बने हैं। तीन मंजला इस महल के बाहर निकाले गये छत के कोने कमल के फूल जैसे दिखाई देते हैं। कमरों

की दीवारों को बेहतरीन तसावीर तथा फूलों के खाकों से रंग आमेजी की गई है। कमरों को सर्दियों के मौसम में गर्म करने के लिए आग जलाने की जगहें बनी हुई हैं। कमरों की छतों पर भी नकशो निगारी की गई है।

दूसरे भाग में नया महल है जो राजा राम सिंह ने बनवाया था और तीसरे भाग में शीश महल है। नये तथा पुराने महलों में निचली तथा ऊपरी मंजिलों में कई कमरे बने हुए हैं जो बनावट में एक दूसरे से विभिन्न हैं जिनमें कुछ छोटे महल दरबारियों के लिए, कुछ स्त्रियों के लिए, कहीं खुले बरामदे तथा कहीं कहीं गर्मी से बचाव के लिए मंडप बने हुए हैं। ठंडी हवा का आनंद लेने के लिए राज परिवार के सदस्य इन मंडपों में बैठते थे। आम तौर पर महलों का निचला भाग पत्थरों का और ऊपरी भाग ईन्टों का बना हुआ है जिसमें लकड़ी का प्रयोग भी किया गया है।

तीसरे भाग में शीश महल है जिसमें विभिन्न प्रकार के रंग बिरंगे शीशों को दीवारों पर इस ढंग से लगाया गया है कि देखने वाला उन बेनाम कलाकारों की प्रशंसा किये बिना नहीं रह सकता जिन्होंने पूरे दिल व जान से काम करके शीश महल की शान में निखार पैदा किया है। शीश महल की दीवारों पर पहाड़ी चित्र कला के अद्भूत नमूने देखने को मिलते हैं। जिन विषयों या ग्रन्थों पर यह चित्र बने हैं उनमें महाराजा रंजीत सिंह तथा उनके दरबारी, महाराजा गुलाब सिंह तथा डोगरा राजपरिवार के सदस्य। राजपरिवार के सदस्यों के वस्त्र तथा आभूषण तथा अस्त्र-शस्त्र, राजाओं के जीवन सम्बंधी चित्र, उन की वीरता के कार्यों की झलक, राज परिवार के सदस्यों द्वारा मनाये जाने वाले पर्वों के चित्रों के अतिरिक्त रामायण, महाभारत, भागवत तथा पुराणों की कथाओं पर आधारित चित्र बने हुए हैं। हर चित्र के चारों ओर सुन्दर फूलों तथा बेलों को बनाया गया है जिनमें सूझ बूझ के साथ उचित रंगों का प्रयोग किया है। पुरातत्त्व विभाग के अनुसार शीश महल (शीशों का महल) को राजा राम सिंह ने बनवाया था जो 1885 ई में रामनगर का राजा नियुक्त हुआ। महल की भीतरी परिक्रमा के दोनों बाजुओं पर कमरे बने हुए हैं। दरवाजे की बाईं ओर दरबार हाल, शीश महल तथा रंग महल हैं। 13.55 मीटर लम्बे तथा 5.50 मीटर चौड़े दरबार हाल में बने भित्ति चित्रों में बहुत अधिक रंगों का प्रयोग किया गया है। इन पहाड़ी चित्रों में पहाड़ी चित्रकला का प्रभाव दिखाई देता है। चित्रों में रामायण तथा भागवत, राजा राम सिंह तथा सुचेत सिंह का दरबार तथा लड़ाइयों के दृश्य दिखाये गये हैं। दरबार हाल के साथ ही शीश महल है। चकोर कमरे पर

आधारित इस महल को विभिन्न प्रकार के रंगदार शीशों के टुकड़ों को बहुत ही सुन्दर ढंग से सजाया गया है। शीशों की इस सजावट में कहीं कहीं यूरोप के चित्रों के नमूने भी दिखाई देते हैं। जो शायद बाद में लगाये गये हैं।

शीश महल के पास रंग महल है। इसकी दीवारों पर भी बहुत सुन्दर भित्ति चित्र बने हैं जिनमें नायक, नायिका, रागनी, कृष्ण लीला, शिकार तथा दरबार के दृश्य दिखाये गये हैं। चित्रों में हल्के रंगों का प्रयोग किया गया है। लकीरें बारीक, तरतीबबार, आकर्षक तथा उनमें सोने तथा चांदी के रंगों का भी प्रयोग किया गया है जिनकी चमक आज तक वैसी है।

रंग महल के चित्रों में एक प्रसिद्ध चित्र में राजा सुचेत सिंह को घोड़े पर सवार दिखाया गया है। उस के साथ कुछ घोड़ सवार दरबारी तथा पैदल सिपाहियों का एक दल है। एक चित्र में सुचेत सिंह घोड़े पर सवार, पीछे एक दरबारी ने राजा को धूप से बचाने के लिए छाता उठाया हुआ है और साथ ही एक कुत्ता चल रहा है। एक चित्र में सुचेत सिंह दरबार में संगीत सुन रहा है दूसरे में नौकर राजा को स्नान करा रहा है। सुचेत सिंह को दरबारियों के साथ होली खेलते और हाथी पर सवार लड़ाई करते भी दिखाया गया है। सिखों तथा पाठनों की लड़ाई का चित्र, राधा कृष्ण जी का चित्र, श्री कृष्ण जी का चित्र, तथा श्री कृष्ण जी को गोपियों के साथ रास लीला करते भी चित्रों में दिखाया गया है।

इसी प्रकार रामायण के कुछ चित्र बने हैं जिनमें रामवनवास, रावण के साथ युद्ध, एक चित्र में राजा सुचेत सिंह की शादी का दृश्य दिखाया गया है। इन के अतिरिक्त देवी देवताओं के चित्र भी हैं जिनको देखकर दिल अति प्रसन्न होता है। कुछ चित्र खराब हो चुके हैं परन्तु पुरातत्व विभाग के कर्मचारी उनको पहले जैसा रंग रूप देने में लगे हैं ताकि डुग्गर की यह अमूल्य विरासत आने वाली पीढ़ी के लिए प्रेरणा का स्त्रोत सिद्ध हो और वे अपने अतीत तथा प्राचीन इतिहास की जानकारी प्राप्त कर सके और उस समय की वास्तुकला तथा चित्रकला से परिचित हो सके। हम सब का भी यह कर्तव्य है कि हर संभव तरीके से अपनी दरोहर की रक्षा करें।

हमारी ऐतिहासिक विरासत-जसरोटा महल

जम्मू कश्मीर राज्य के कोने कोने में पुराने महलों, बावलियां कुओं तथा भवनों के खण्डरात मिलते हैं जो हमें उस समय के इतिहास को जानने में सहायता करते हैं जब इन का निर्माण किया गया था। इन खण्डरात की सहायता से हमें उस समय के राजाओं तथा महाराजाओं की शासन प्रणाली, जनता के प्रति उनका व्यवहार तथा लोगों के रहन सहन, रीति रिवाजों तथा उनकी आर्थिक दशा का भी ज्ञान होता है। इसके अतिरिक्त उस जमाने की वास्तुकला, चित्रकारी, व्यापार तथा और कई बातों की जानकारी भी प्राप्त होती है। यह पुराने भवन हमारी बहुमूल्य विरासत का भाग हैं जिन से हमारा वर्तमान तथा भविष्य जुड़ा हुआ है और जिन की सहायता के बिना हमें अपना अतीत जानने तथा समझने में बड़ी कठिनाई होती है। अतीत, जो हमें आगे बढ़ने तथा अपने भविष्य को उज्जवल बनाने में महत्वपूर्ण योगदान देता है। जो लोग अपने अतीत अर्थात अपनी विरासत की संभाल नहीं कर सकते उन का भविष्य भी अंधकार मय हो जाता है। जसरोटा के राजमहल भी हमारी डुग्गर संस्कृति की अमूल्य विरासत के चिन्ह हैं जिन की एक एक दीवार, बावली तथा तालाब अपने अतीत की कहानी विस्तार पूर्वक सुनाते हुए प्रतीत होते हैं जिसे सुन कर हमारा सिर गर्व से ऊंचा हो जाता है। इन खण्डरात को देखकर यह अनुमान लगाना कठिन नहीं कि किसी सयम यहां खूब रौनक होती होगी।

जम्मू से लगभग 80 किलो मीटर पूर्व जम्मू पठानकोट राजमार्ग पर राजबाग से पांच किलोमीटर उत्तर की ओर उझ नदी के दायें किनारे पहाड़ी के दामन में बसा जसरोट गांव बहुत सुन्दर दिखाई देता है। दूर दूर तक फैले पहाड़ और घने वन उझ नदी की लहरों से निकलता मधुर संगीत तथा आस पास का प्राकृतिक वातावरण गांव के आकर्षण में वृद्धि करता है।

आज तो जसरोटा मात्र एक गांव बन कर रह गया है और इसके मूल निवासी भी अधिक संख्या में इसे छोड़ कर चले गये हैं परन्तु किसी समय इस की शोभा देखते ही बनती होगी क्यों कि यह जसरोटा राज्य की राजधानी और व्यापार का बहुत बड़ा केंद्र था। जम्मू से पंजाब, हिमाचल प्रदेश (नूर पुर, चम्बा, कांगड़ा) के रास्ते में जसरोट को विशेष महत्व प्राप्त था क्योंकि सारा व्यापार इसी रास्ते से होता था। लोगों के रहन-सहन का स्तर ऊंचा था और वह हर प्रकार से खुशहाल थे। उस समय

जम्मू क्षेत्र में कई छोटे बड़े पहाड़ी राज्य थे जहां हर राजा अपने अपने ढंग से शासन करता था। इसके अतिरिक्त कई, छोटे बड़े जागीरदार भी थे जो इन राजाओं के अधीन थे और लड़ाई के समय सिपाही तथा घुड़सवार भेजकर उन राजाओं की सहायता करते थे। 1419 ई में दिल्ली के राजा मबारक शाह ने जिन बाईस पहाड़ी राजाओं को पट्टे भेंट किये उनमें जसरोटा का राज्य भी शामिल था। यह राज्य उन बाईस राज्यों में एक उच्च स्थान रखता था जो बाद में 1846 में अमृतसर संधि के अन्तर्गत जम्मू और कश्मीर राज्य का एक भाग बना और महाराजा गुलाब सिंह जम्मू तथा कश्मीर के एक मात्र शासक बनकर उभरे।

जसरोटा राज्य की स्थापना आज से कोई एक हजार वर्ष पूर्व सूर्यवंशी राजा जसदेव ने की और इसी नाम पर एक नगर बसाकर उसे राज्य की राजधानी बनाया। बाद में राजा जसदेव ने इस राज्य को अपने भाई कर्णदेव के हवाले कर दिया। इस वंश से सम्बंध रखने वाले राजपूत जसरोटिये कहलाऐ। इसके बाद जिन राजाओं ने जसरोटा पर शासन किया उन्होंने अपनी योग्यता तथा बहादरी से इस राज्य की सीमाओं को बढ़ावा दिया और बहुत थोड़े समय में ही आस पास के छोटे-छोटे राजाओं को अपने अधीन कर लिया। उस समय क्योंकि हर समय विदेशी आक्रमणों का डर रहता था इस लिहाज से जसरोटा सुरक्षित स्थान नहीं था। इस बात को ध्यान में रखते हुए पंद्रहवीं सोलहवीं शताब्दी के करीब राजा प्रताप देव ने साथ ही पहाड़ी पर एक दुर्ग का निर्माण करवाया और उसके अन्दर ही अपने रहने के लिए महल बनवाये। (एक और लेख के अनुसार इन महलों की नींव जम्मू के राजा रंजीत देव के समकालीन राजा रत्नदेव ने रखी) तारीख डोगरा देश के अनुसार यह महल राजा ध्रुव देव ने जसरोटा के पास जंगल को साफ करवा कर जम्मू शहर की भांति बनवाये। अन्तर केवल इतना था कि जम्मू के महल तवी नदी के दायें किनारे पर जब कि जसरोटा के यह महल उझ नदी के दायें किनारे पर हैं। जो भी हो इन महलों की सुन्दरता देखते ही बनती है। यह महल जम्मू राजाओं के महलों की तरह ही बनवाए गये जो उस समय की वास्तुकला का शानदार नमूना समझे जाते थे। उन महलों से उझ नदी का दृश्य देख कर ऐसा प्रतीत होता है मानो हम जम्मू के महलों से तवी नदी का दृश्य देख रहे हों। समय समय पर राजाओं ने अपनी इच्छा तथा अपनी आवश्यकता के अनुसार इन महलों का विस्तार किया। महल बनने के बाद राजा तथा राज परिवार के सदस्य, मंत्री तथा उच्च अधिकारी भी यहां आ गये तो

उनकी देखा देखी व्यापारी लोगों ने भी अपनी दुकानें तथा रहने के लिए महलों के आस पास ही मकान बना लिए। वह पहाड़ी जहां कभी बियाबान जंगल था और जहां शेर तथा चीते घुमते थे एक बारौनक नगर में बदल गई। शहर में दाखिल होने के लिए एक बड़ी डयोढ़ी बनाई गई जिसे दिल्ली दरवाजा का ना दिया गया। दिल्ली दरवाजा से महलों तक के लगभग दो किलो मीटर रास्ते को पक्का बनाया गया जिसकी चौड़ाई 12 फुट के करीब थी। रास्ते पर लगे हुए पत्थर आज भी कई स्थानों पर वैसे ही दिखाई दे रहे हैं। सड़क के दोनों ओर मकानों तथा दुकानों के खण्डरात आज भी दिखाई देते हैं। कहीं कहीं बड़ी बड़ी दीवारों के कुछ हिस्से दिखाई देते हैं जो छोटी ईंटों की बनी हुई हैं। दुर्ग, महलों, मकानों, दुकानों गलियों, बाजारों, मन्दिरों तथा बुर्जों को बड़े ही योजना बद्ध ढंग से बनाया गया था।

जसरोटा के राजपरिवार के लोग जम्मू में भी रहते थे। दोनों राजघरानों के बड़े अच्छे सम्बंध थे। प्रसिद्ध डोगरी कवि दित्तू का सम्बंध भी जसरोटा से रहा है। नैन सुख तथा मानकू जैसे उच्च कोटी के चित्रकारों ने भी जसरोटा दरबार में रहकर अपनी चित्रकला के माध्यम से महलों की दीवारों में जान डाली है।

राजा जसदेव से लेकर राजा भूरी सिंह तक सत्ताईस पीढ़ियों ने जसरोटा पर शासन किया। इस वंश के अन्तिम राजा भूरी सिंह ने 1825 ई से 1834 ई तक जसरोटा पर शासन किया। यह महल तीन हिस्सों में बंटे हैं। महलों के साथ तालाब, बावलियां, बरामदे, बारह दरियां, सरायें तथा फौजी छावनियां भी बनाई गई जो आज खस्ता हाली में अपने अतीत की कहानी ब्यान कर रही हैं। महलों की भीतरी तथा बाहरी दीवारों तथा छत्तों को सुन्दर पहाड़ी चित्रों से सजाया गया है जो उस समय की चित्रकला के बेहतरीन नमूने समझे जाते हैं। इन चित्रों के रंग आज फीके पड़ चुके हैं परन्तु किसी समय उनकी सुन्दरता देखते ही बनती होगी। महलों की छत्तें तो बिल्कुल उड़ चुकी हैं और केवल दीवारें ही बाकी रह गई हैं जो अपनी बेबसी पर आंसू बहाती हुई प्रतीत होती हैं। इन टूटे फूटे महलों की हर ईंट अपनी दर्द भरी कहानी सुनाने के लिए बेताब है पर कोई आकर सुने तो।

पारीवरिक झगड़ों के कारण जसरोटा राज्य के दो भाग हो गये और यहीं से इसका पतन आरम्भ हुआ। सोलहवीं शताब्दी के अंत में मुगलों के हमलों के

कारण भी जसरोटा को भारी हानि उठानी पड़ी। 1834ई. में महाराजा रंजीत सिंह ने ध्यान सिंह के लड़के हीरा सिंह को जसरोटा राज्य जागीर के रूप में दे दिया।

यद्यपि जसरोटा राज्य बहुत समृद्ध था परन्तु लाहौर दरबार के अधीन होने और फिर कठुआ का महत्त्व बढ़ने से इस राज्य का पतन निश्चित हो गया। वह सड़क जो जसरोटा से होकर जम्मू जाती थी उसे भी बंद कर दिया गया। 1920-21 तक जिला होने के कारण भी जसरोटा को बहुत महत्त्व प्राप्त था। इसके बाद कठुआ को जिला का दर्जा दिया गया और जसरोटा केवल जिला कठुआ का एक छोटा सा गांव बनकर रह गया।

जसरोटा का महत्त्व घट जाने से जसरोटिया बरादरी के लगभग सभी लोग गांव को छोड़ कर जम्मू, कठुआ तथा हीरानगर आदि बड़े बड़े कस्बों में जाकर रहने लगे। यातायात की सुविधा न होने के कारण भी जसरोटा वासियों को बहुत सी कठिनाईयों से दो चार होना पड़ा।

एक बार फिर यत्न किया जा रहा है कि जसरोटा को उसका खोया हुआ स्थान तथा महत्त्व वापस दिलाया जाये। इस संबंध में जसरोटिया बरादरी के राजपूत भाईयों ने ले. कर्नल खजूर सिंह जी के नेतृत्व में इकटठे मिल कर काम करने का बीड़ा उठाया। 22 मार्च 1992 ई को जसरोटिया सभा के युवाओं ने यह निश्चय किया कि वे जसरोटा के महलों तक जाने वाले रास्ते को साफ करेंगे ताकि अधिक लोगों को यहां आने में सुविधा हो और वे अपना पुराना इतिहास, अपनी विरासत, तथा उस समय की चित्रकला और वास्तुकला का करीब से अध्ययन कर सकें जो जिंदा कोमों की निशानियां होती हैं। महलों की एक एक दीवार वहां के बाजार, गलियां, मन्दिर तथा तालाब अपने अन्दर अतीत की कई कहानियां छुपाऐ हुए हैं जिन को देखने से इतिहास के कई पन्ने स्वयं खुल कर हमारे सामने आ सकते हैं जिन्हें पढ़ने की आज तक किसी ने कोशिश नहीं की। इन युवकों ने जंगल को साफ किया और दिल्ली दरवाजा से लेकर महलों के अन्तिम सिरे तक सारे रास्ते में उगी झाड़ियों को भी काट दिया। परिणाम स्वरूप अब महलों तक जाने के लिए रास्ता बिलकुल साफ है। शिव मन्दिर को अब नया रूप दिया गया है। 16 अप्रैल 1995 ई. को शिव मन्दिर के पास ही

जसरोटिया बरादरी का एक सम्मेलन हुआ जिस में एक प्रस्ताव द्वारा सरकार से प्रार्थना की गई कि टेलीविजन तथा रेडियो में जसरोटा के प्राचीन इतिहास, यहां के महलों तथा यहां के लोगों के रहन सहन के विषय में प्रोग्राम प्रसारित किये जायें ताकि लोगों और खासकर नई पीढी को जसरोटा के बारे में जानकारी प्राप्त हो सके। पर्यटन विभाग से भी प्रार्थना की गई कि जसरोटा को पर्यटन स्थल घोषित कर के इस के विकास तथा यहां के महलों को सुरक्षित किया जाये। इस संबंध में पुरातत्त्व विभाग भी महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है।

लखनपुर का किला

प्राचीन काल में किलों का बड़ा महत्व था। हर राजा, महाराजा जागीरदार तथा नवाब अपने राज्य या क्षेत्र की सुरक्षा के लिए किसी ऊंचे स्थान या किसी नदी के किनारे दुर्गों का निर्माण करवाता था जहां सैनिकों के रहने का उचित प्रबंध किया जाता था। वहीं हथियार तथा गोला बारूद भी रखा जाता था। किलों के चारों ओर मिनार बनाये जाते थे जहां बैठ कर सैनिक आस पास के क्षेत्र पर नजर रखते थे। यह किले ऐसे स्थानों पर बनाये जाते थे जो सुरक्षित हों और जहां से सैनिकों की नजर शत्रुओं की गतिविधियों पर भी रह सके। इन किलों का निर्माण आवश्यकता के अनुसार किया जाता था बड़े बड़े राज्यों के किले बड़े होते थे और छोटे राज्यों या जागीरदारों के किले छोटे होते थे। यह किले अधिकतर उत्तरी भारत में ही देखने को मिलते थे क्योंकि भारत के पूर्व, दक्षिण तथा पश्चिम में समुद्र होने के कारण इन दिशाओं से किसी भी आक्रमण का खतरा बहुत कम होता था। भारत पर अधिकतर विदेशी आक्रमण उत्तर या उत्तरपूर्व से ही हुए हैं। इसलिए इस क्षेत्र में शासकों को अपने राज्य की सीमाओं की सुरक्षा के लिए किलों का निर्माण करना पड़ता था जहां सैनिकों, युद्ध शस्त्रों तथा खाद्य सामग्री रखी जाती थी ताकि लड़ाई के समय आवश्यकताएं किले के अन्दर से ही पूरी हो सकें। यदि किला बनाने के लिए कोई ऊंचा स्थान न मिले तो किले के चारों ओर गहरी खाई खोद दी जाती थी ताकि शत्रु के सैनिक किले के अन्दर न जा सकें। किले के अन्दर प्रवेश करने का एक ही रास्ता रखा जाता था जहां सख्त पहरा होता था। यह किले कभी कभी घने जंगलों में भी बनाए जाते थे ताकि शत्रु की नजर से बचा जा सके। इन किलों में सैनिकों के प्रशिक्षण का पूरा प्रबंध भी होता था। कई राजा, महाराजा तथा जागीरदार भी इन ही किलों के अन्दर रहते थे, किले किसी भी राज्य की समृद्धि के प्रतीक भी माने जाते थे। जिन राजाओं या जागीरदारों का शासन केवल कुछ गिने चुने गांवों पर ही होता था उन की आवश्यकता छोटे किलों से भी पूरी हो जाती थी परन्तु विशाल क्षेत्र पर शासन करने वाले राजाओं को बड़े-बड़े किलों का निर्माण करवाना पड़ता था।

वर्तमान युग में किलों का महत्व लगभग समाप्त हो गया है। प्राचीन काल के किले खण्डरात में तबदील होते जा रहे हैं जिनकी ओर किसी का ध्यान नहीं जा रहा या वे किले जो किसी समय किसी राज्य की समृद्धि का प्रतीक माने जाते थे

जिन की सहायता से राजाओं ने बड़े बड़े, युद्धों में विजय प्राप्त की थी आज उन की ईंटें एक एक करके गिरती जा रही हैं। वे किले जिन पर हमें गर्व था और जो हमारी अमूल्य विरासत के प्रतीक थे आज हमारी नजरों से ओझल होते जा रहे हैं।

भारत के अन्य भागों की तरह जम्मू के पहाड़ी क्षेत्र में भी कई किले हैं जिन में रावी नदी के दायें किनारे पर स्थित लखनपुर का किला बेशक छोटा है परन्तु अपने समय में बड़ा महत्वपूर्ण था यहां से लखनपुर राज्य की सीमाओं की सुरक्षा की जाती थी। मैदानी क्षेत्र होने के कारण दूर दूर तक पहरेदारों की नजर जा सकती थी। 1846 तक लखनपुर राज्य डोगरा देश के बाईस राज्यों में से एक था। इस राज्य की नींव उस समय पड़ी जब जसरोटा राज्य दो भागों में बंट गया।

तारीख डोगरा देश के अनुसार 1019 ई. में जम्मू के राजा जसदेव ने जम्मू के पूर्व में 45 मील दूर उझ नदी के दायें तट पर जसरोटा नाम का एक नगर बसाया और उसे एक स्वतंत्र राज्य के रूप में अपने चाचा राजा कर्ण देव को दे दिया। जसरोटा में रहने के कारण कर्ण देव के वंशज जसरोटिये कहलाने लगे। राजा कर्ण देव बहुत वीर तथा बुद्धिमान राजा था। उस ने उझ नदी के दायें किनारे पर अपने महल बनवाये और महल के नीचे जो मैदान था उसे छावनी का नाम दिया गया जहां सैनिक परेड़ करते थे। जसरोटा के राजा कलस देव के दो बेटे थे जिन का नाम प्रताप देव तथा संग्राम देव था। जब 1325 ई. में कलस देव का देहान्त हुआ तो राजतिलक राजा प्रतापदेव को मिला। दूसरा भाई संग्राम देव यह सहन न कर सका इसलिए उसने अपने भाई के विरुद्ध विद्रोह कर दिया। उसने आधे राज्य की मांग की और उसे प्राप्त करने के लिए हर संभव प्रयास करने लगा। दोनों भाईयों की शत्रुता दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी। राजगद्दी पर दोनों भाई अपना अपना हक जता रहे थे। अन्त में पड़ोसी राजाओं तथा बिरादरी के अन्य लोगों के समझाने भुझाने पर दोनों भाईयों में सुलाह हो गई और जसरोटा राज्य के दो भाग हो गये। उझ नदी के पार सारा पूर्वी भाग रावी नदी तक संग्राम देव को मिल गया और उस ने लखनपुर के स्थान पर अपने महल तथा एक छोटा सा किला बनवाया।

आज राजा संग्राम देव के महलों के निशान तो मिट चुके हैं परन्तु किला अब तक अच्छी हालत में है। एक टीले पर कहीं कहीं महलों के खण्डर देखे जा सकते हैं। राजा संग्राम देव प्रताप देव से अलग हो गया और उस के वंशज लखनपुरिये कहलाये। उस दिन से लखनपुर भी बाईस पहाड़ी राज्यों में शामिल हो गया।

लखनपुर की पहाड़ी रियासत को थींन के नाम से भी जाना जाता था। असल में किला थींन एक पहाड़ी पर बनाया गया था जो लखनपुर राज्य की सीमा पर था। थींन किला बड़ा महत्वपूर्ण था क्योंकि उस किले से उस समय के भडडू, बसोहली तथा नूरपुर के राज्य के सैनिकों तथा शासकों की गतिविधियों पर नजर रखी जा सकती थी। लखनपुर राज्य की स्थापना के बाद राजा संग्राम देव ने सबसे पहले इस किले का निर्माण करवाया था और यहीं से वह अपना शासन चलाता था। रावी के किनारे पर होने के कारण इस स्थान का जलवायु बड़ा शीतल तथा सुहावना था। यही कारण है कि लखनपुर का किला बनने के बाद भी राज परिवार के सदस्य गर्मियों के दिनों में लखनपुर से थींन आ जाते थे। यह किला अब खण्डरात में तबदील हो चुका है। अठारहवीं शताब्दी में इस किले को नूरपुर के राजा पृथ्वी सिंह ने अपने अधिकार में कर लिया। 1815 ई. में यह किला सिख राजा के अधीन आ गया। थीन से शासन चलाने के कारण लखनपुर क्षेत्र पर अच्छी तरह नजर नहीं रखी जा सकती थी इसलिए संग्राम देव ने पठानिया शासकों की गतिविधियों पर नजर रखने के लिए लखनपुर में भी किला बनवाया और उसे राज्य का केंद्र मानते हुए अपनी राजधानी बना लिया। यह किला कारिगरी का अद्‌भुत नमूना समझा जाता है। किले में राज परिवार के रहने के लिए महल भी बनाया गया। उच्च अधिकारियों के रहने का प्रबंध भी किया गया तथा वहीं घोड़ों के लिए अस्तबल का निर्माण भी किया गया। किले के अन्दर कुलदेवी के मन्दिर का निर्माण भी किया गया जहां समय समय पर भजन कीर्तन हुआ करता था और पर्वों पर हवन यज्ञ तथा भण्डारों का आयोजन किया जाता था। कोई भी शुभकार्य करने से पहले या सैनिकों को युद्ध में भेजने से पहले कुल देवी के दरबार में उपस्थित होकर अपने कार्य की सफलता तथा युद्ध में विजय के लिए प्रार्थना की जाती थी।

प्रो.-शिव निर्मोही द्वारा लिखित डुग्गर का इतिहास के अनुसार लखनपुर राज्य का उल्लेखे मुगल सम्राट अकबर के संदर्भ में भी होता है 1588-89 में जिन राजाओं ने अकबर के विरुद्ध विद्रोह किया था उन में लखनपुर का राजा बलभद्र भी था। दोबारा जब 1595-96 में पहाड़ी राजाओं ने विद्रोह किया तो उसे कुचलने के लिए अकबर ने शेख फरीद के नेतृत्व में सैना भेजी। लखनपुर के राजा ने साम्बा में शेख फरीद के आगे आत्मसमर्पण किया। मुगल सेनापति ने लखनपुर का क्षेत्र मुहम्मद कुर्बान को दे दिया और रावी नदी को पार करके पठानकोट की ओर चला

गया। इस के बाद लखनपुर की स्वायतता समाप्त हो गई और वह मुगल सम्रराज्य के अधीन आ गया। 1846 ई. में अंग्रेजों ताथा महाराजा गुलाब सिंह के मध्य होने वाली सन्धि के अन्तर्गत चम्बा का क्षेत्र गुलाब सिंह को मिला था परन्तु बाद में अंग्रेजों ने चम्बा अपने पास रख लिया और महाराजा गुलाब सिंह को लखनपुर तथा पंजग्राई का क्षेत्र दे दिया। अब यह क्षेत्र तहसील कठुआ में है।

लखनपुर का यह किला कठुआ से लगभग तीन किलो मीटर की दूरी पर है और आज भी अच्छी हालत में है। भारत के विभाजन के बाद देश के अन्य भागों से जम्मू कश्मीर राज्य में प्रवेश करने का यही एक मात्र मार्ग तथा मुख्य द्वार है। कुछ समय तक इस किले में राज्य सरकार के कस्टम विभाग का कार्यालय भी रहा। इस समय यहां दिन रात खूब चहल पहल रहती है। मोटरों, ट्रकों तथा बसों की लम्बी लम्बी कतारें हर समय यहां देखी जा सकती है।

इस छोटे से किले में दो कोठरियां तथा एक बरामदा है। किले के प्रांगन में एक देवी मन्दिर है। 1970 ई. में महात्मा पूर्ण गिरी जी ने इस मन्दिर को दत्ता स्वामी को समर्पित करके देवी का मन्दिर किले के बाहर एक चबूतरे पर बनवाया और यहां विभिन्न देवी देवताओं की मूर्तियां स्थापित कीं। इसके सामने एक शिव मन्दिर का निर्माण करवाया और वहां शिवलिंग की स्थापना की। इस मन्दिर में सुबह शाम श्रद्धालुओं की भीड़ रहती है। पर्वों के समय पर तो यहां की रौनक देखते ही बनती है। महात्मा संत शिरोमणि 108 पूर्ण गिरि जी महाराजा देश के विभिन्न भागों में देवस्थान बनाते हुए जब ऐरावती गंगा के तट पर लखनपुर पहुंचे तो उन को यह स्थान बहुत पसंद आया। यहां की प्राकृतिक सुन्दरता तथा शांत वातावरण को देख वह बहुत प्रभावित हुए। लखनपुर किले तथा इस के आसपास के खण्डरात तथा धार्मिक स्थानों का उन्होंने पुनः जीर्णोद्वार किया। इस शुभकार्य में यहां की धर्म प्रेमी जनता ने उन को पूर्ण सहयोग दिया। महात्मा पूर्ण गिरि जी के यत्नों से यहां यात्रियों तथा संत महात्माओं के ठहरने के लिए एक सराय का निर्माण भी करवाया गया। इसके अतिरिक्त यहां शंकराचार्य जी का मठ, दिवान मन्दिर, शिवालय तथा कुछ और भूमि खरीद कर पंच कुण्डी यज्ञ शाला का निर्माण भी करवाया। महात्मा जी लम्बे समय तक यहां रहे। विक्रमी संवत 2046 को निजी समाधिस्थल निर्माण कर श्रावण कृष्ण अमावस्या की रात्रि के पुण्य प्रहारान्त श्रवण शुक्ल प्रतिपदा बुधवार प्रातः 6 बजे कर्क लग्न समाधिम्य हो शुद्ध महादेव में सायुज्य भाव को प्राप्त कर

कैलाश वासी हो गये। आप सीधे सादे सरल स्वभाव के सच्चे सुच्चे साधु थे। बेशक वर्तमान काल में लखनपुर किले की महत्ता कम हो गई है परन्तु इस किले की शोभा तथा गौरव आज भी वैसा ही है। आज भी उसे देख कर हमें डुग्गर की वास्तुकला पर गर्व होता है। इस क़िले के प्रांगन में बने विभिन्न देवी देवताओं के मन्दिरों में पूजा अर्चना कर के श्रद्धालुओं को असीम आध्यात्मिक सुख का अनुभव होता है। जरूरत इस बात की है कि स्थानीय लोग तथा राज्य प्रशासन इस किले की सुरक्षा तथा रख रखाव की ओर उचित ध्यान दें ताकि डुग्गर की इस अमूल्य विरासत को खण्डरात में तबदील होने से बचाया जा सके। इसके लिए स्थानीय नेता समाज सेवी तथा अन्य संगठन महत्व पूर्ण भूमिका निभा सकते हैं। यदि समय रहते ऐसा न किया गया तो लखनपुर का यह किला भी बाकी ऐतिहासिक स्मारकों की तरह शीघ्र ही मलबे के ढेर में तबदील हो जायेगा।

मुग़ल सराय-चिंगस

मुगलिया वंश के राजाओं ने लगभग तीन सौ साल तक भारत पर शासन किया। यहां रहने वाले हिन्दू तथा मुसलमान उन से बहुत प्यार करते थे और उनके दिलों में भी अपनी प्रजा के लिए असीम प्यार था। वे पहले मुस्लिम शासक थे जिन्होंने स्थाई रूप से यहां अपनी हकूमत कायम की। मुगल शहन शाहों में अकबर सब से प्रसिद्ध हुआ जिस ने हिन्दूओं के तीर्थ स्थानों तथा अन्य धार्मिक स्थानों पर लगे टैक्स माफ कर दिये और हिन्दुओं तथा मुसलमानों से मधुर सम्बंध स्थापित किये। वह स्वयं तो इतना पढ़ा लिखा नहीं था परन्तु विद्वानों का आदर करता था। उस के दरबार में हिन्दू मंत्री भी थे और उस की सेना के कई कमांडर भी हिन्दू थे।

1526 ई में मुगल वंश के बानी बाबर ने पानीपत की पहली लड़ाई में लोधी वंश के अन्तिम राजा इब्राहीम लोधी को पराजित कर के भारत में अपना शासन स्थापित किया परन्तु उस को स्थिरता दी उन के पोते अकबर ने। मुगल सम्राट जहां शासन चलाने में निपुण थे वहीं उन्हें वास्तुकला में बेहद रुचि थी। उन्होंने कई बड़े बड़े भवनों, महलों, दुर्गों तथा इमारतों का निर्माण किया जो हिन्दू-मुस्लिम वास्तुकला के अदभुत नमूने समझे जाते हैं। कई सौ साल बीत जाने पर भी उन की सुन्दरता में कोई कमी नहीं आई।

मुगल बादशाहों को जम्मू कश्मीर की धरती से भी बेहद प्यार था। वे यहां की सुन्दरता तथा प्रकृतिक दृश्यों के दिवाने थे। वे हर वर्ष अपने दरबारियों के साथ सपरिवार यहां आते और यहां के सुहाने प्राकृतिक दृश्यों का आनन्द लेते थे। भारत के अन्य स्थानों की भांति यहां भी उन्होंने बहुत से भवन तथा बाग लगवाये जिन में शालीमार बाग तथा निशात बाग विश्व प्रसिद्ध हैं।

भारत भर में उन की बनाई हुई इमारतों को देखने के लिए बड़ी संख्या में पर्यटक आते हैं। कश्मीर में भी मुगल बादशाहों के लगवाये बागों की सैर करने के लिए संसार के कोने कोने से पर्यटक यहां आते हैं।

यहां की सुंदर झीलों, नदियों, झरनों, आबशारों तथा प्रकृतिक दृश्यों को देखकर पर्यटकों को असीम आनन्द का अनुभव होता है। मुगल शहनशाह राजौरी पुंछ के रास्ते से कश्मीर घाटी में प्रवेश करते थे। एक तो यह रास्ता छोटा था दूसरा इन रास्तों पर सफर करते हुए वे अपने आप को प्रकृति के अधिक समीप पाते थे। क्योंकि

इस रास्ते की सुन्दरता तथा यहां के वनों में खिले फूलों की सुगन्ध से उन के दिलों को अदभुत प्रसन्नता प्राप्त होती थी। जब भी वे प्रशासनिक कामों से समय पाते वे आराम करने के लिए अक्सर कश्मीर की ओर ही आते थे। उन के साथ राज परिवार के सदस्य सेना के सिपाही तथा बड़े अधिकारी भी होते थे। वे काफिलों की शक्ल में यहां आते थे। लम्बी यात्रा के कारण उनको कश्मीर जाते समय कई स्थानों पर रुकना भी पड़ता था इस लिए उन्होंने कई स्थानों पर सरायें बनावाई हुई थीं ताकि यात्रा के दौरान रहने तथा विश्राम करने में किसी प्रकार का कष्ट न हो ओर वे अपने परिवार तथा सैनिकों के साथ आराम से रह सकें। हर सराये में खाने, पीने तथा रहने की सभी सहूलें होती थीं।

मुगल शहनशाहों ने कश्मीर की यात्रा के दौरान रास्ते में जो सरायें बनवाईं उन में चिंगस की सराय बड़ी महत्वपूर्ण है जिस का निर्माण सोलहवीं शताब्दी में किया गया था। ऐतिहासिक दृष्टि से भी इस सराय को विशेष स्थान प्राप्त है क्योंकि बादशाह जहांगीर अपनी रानी नूर जहां के साथ जब भी कश्मीर की यात्रा पर आता था और कश्मीर से वापसी पर अवश्य यहां रुकता था। इस स्थान से उसे विशेष लगाव था। चिंगस जम्मू से लगभग 110 किलो मीटर पश्चिम की ओर जम्मू-पुंछ राजमार्ग पर नौशहरा तथा राजौरी के मध्य स्थित है। इसी गांव के दामन में सड़क की दाईं ओर छोटी-छोटी पहाड़ियों के मध्य सैलानी नाले के किनारे इस सराय का निर्माण किया गया है। अरबी भाषा में चिंगस का अर्थ है अंतड़ियां।

चूंकि इस सराय के आंगन में मुग़ल शहनशाह जहांगीर की अंतडियों को दफनाया गया है इसी कारण शायद इस गांव का नाम भी चिंगस पड़ गया हो। कुछ भी हो यह स्थान बड़ा ही सुन्दर तथा आकर्षक है और यहां पहुंच कर मनुष्य को असीम प्रसन्नता प्राप्त होती है। ऐसा समझा जाता है कि कश्मीर से वापसी पर शहनशाह जहांगीर की मृत्यु राजौरी के पास हुई। मलिका नूरजहां जो इस यात्रा में उन के साथ थी नहीं चाहती थी कि शहनशाह की मृत्यु का समाचार लाहौर पहुंचे इस लिए उसने जहांगीर की मृत्यु का समाचार सिवाय एक दो के सभी सैनिकों तथा दरबारियों से छुपाये रखा तथा पालकी में उस के साथ बैठी रही। वह बड़ी सूझ-बूझ वाली स्त्रि थी। यह भी कहा जाता है कि प्रशासन के कार्यों को सुचारु रूप से चलाने के लिए नूरजहां का बड़ा दखल था और जब कभी जहांगीर किसी उलझन में फंस जाते थे उस समय भी नूरजहां शहनशाह को पूर्ण योगदान देती थी।

उसने मृत्यु के बाद भी शहनशाह को पालकी में इस ढंग से बिठाया हुआ था कि किसी को संदेह न हो कि शहनशाह अब इस संसार में नहीं रहे। सराय में पहुंचने के बाद सब को यह आदेश दिया गया कि बादशाह सलामत थके हुए हैं। कुछ समय तक आराम करना चाहते हैं इसलिए कोई भी उन से मिलने का यत्न न करें। मलिका नूर जहां अपार सुन्दर होने के साथ-साथ एक कुशल शासक भी थी। वह आने वाली समस्याओं से भली-भांति अवगत थी इसलिए जब काफिले के सभी लोग सो गये तो एक हकीम की सहायता से शहनशाह के शरीर से अंतड़ियों को निकाल कर सराय के आंगन में दफना दिया और पेट को सीने के बाद शव को बिस्तर पर लिटा दिया। अगले दिन सराय में दरबार का आयोजन भी किया गया। कहते हैं कि शहनशाह को शाही वस्त्रों तथा अभूषणों से सजा कर दरबार में लाकर बिठाया गया, परन्तु किसी को भी पता न चल सका कि शहनशाह मर चुके हैं। कुछ एक जो उन के पास थे जान भी चुके थे परन्तु डर के कारण उन्होंने अपनी जबान नहीं खोली।

क्योंकि शहनशाह की मृत्यु का समाचार कई प्रकार की कठिनाईयां पैदा कर सकता था इसलिए मलिका नूर जहां नहीं चाहती थी कि लाहौर पहुंचने से पहले किसी को मृत्यु का पता चले। इस के कई कारण थे। एक तो राजधानी अभी दूर थी और वहां तक पहुंचने में कई दिन लग सकते थे। शव में बदबू उठने के डर से ही उसने अंतड़ियों को निकाल कर जमीन में दफना दिया था दूसरा मलिका राजधानी पहुंचने तक मृत्यु को इसलिए भी राज में ही रखना चाहती थी ताकि सत्ता हासिल करने के लिए लड़ाई झगड़ा शुरु न हो जाये और छोटे-छोटे राजा तथा जागीरदार विद्रोह न कर दें। इन तमाम बातों को ध्यान में रखते हुए वह अति शीघ्र राजधानी पहुंचना चाहती थी। अत: अगले ही दिन चिंगस से चलने का निश्चय किय गया। सारे सफर में किसी को भी इस राज का पता न चल सका। राजधानी पहुंचने पर तमाम मंत्रियों तथा उच्च अधिकारियों की एक सभा में शहनशाह की मृत्यु की घोषणा की गई तथा उनके शव को दफनाया गया।

सराय वर्गाकार है। मुख्य द्वार से प्रवेश करते ही बांई ओर एक चबूतरा है। यहां मुगल शहनशाह आम दरबार लगाया करते थे, लोगों की समस्याओं को सुना करते थे और मौके पर ही उन का समाधान भी करते थे। विभिन्न झगड़ों के फैसले भी दरबार में ही कर दिया करते थे।

चबूतरे के बाद फिर एक द्वार से गुजर कर लोग सराय के विशाल आंगन में प्रवेश करते हैं जिस के चारों ओर अधिकारियों तथा सिपाहियों के रहने के लिए मेहरबदार कमरे बने हुए हैं जिन के द्वार आंगन की ओर खुलते हैं। सराय के एक भाग में शहनशाह, मलिका तथा शाही परिवार के दूसरे लोग रहते थे। दक्षिणी डयोढ़ी से लगे कमरे शायद परिवार की स्त्रियों के लिए बनाए गये थे। इस के साथ जो खुला स्थान तथा चार दीवारी है वह शायद इसलिए बनाया गया होगा ताकि रानियां तथा परिवार की दूसरी स्त्रियां स्वतंत्रता से घूम फिर सकें। सराय के आंगन में दो तीन फुट ऊंचा चबूतरा है जिस पर एक मस्जिद का निर्माण किया गया है ताकि काफिले के साथ शाही परिवार के सदस्य नमाज पढ़ सकें। मस्जिद के बिल्कुल सामने 10-12 फुट की दूरी पर एक वृक्ष के नीचे एक मकबरा है। कहते हैं कि यहां शहनशाह जहांगीर की अंतड़ियों को दफनाया गया है। समय के साथ साथ इस मस्जिद, ऐतिहासिक सराय तथा मकबरे की महत्ता बढ़ती जा रही है और अब इन को देखने के लिए दूर दूर से चल कर लोग यहां आते हैं और मन्नतें भी मांगते हैं। बेऔलाद जोड़े औलाद मांगने, निर्धन धन मांगने तथा दुखी सुख प्राप्त करने की इच्छा से यहां आते हैं। यहां सब की मनोकामनाएं पूर्ण होती हैं और सभी इस पवित्र स्थान से झोलियां भर कर अपने घरों को लौटते हैं। पूर्वी द्वार सैलानी नाले की ओर खुलता है ताकि सराय में रहने वालों को नाले से जल लाने में सुविधा हो। जहांगीर का मकबरा इस समय खस्ता हालत में हैं और मस्जिद तथा सराय की देखभाल भी ठीक ढंग से नहीं हो रही। कुछ रकम भी खर्च की गई थी परन्तु अब इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया जा रहा। सराय की दीवारें गिर रही हैं, कई स्थानों पर तो खण्डहर हो चुकी हैं और वहां बड़ी बड़ी घास तथा वृक्ष उग आए हैं। यदि समय रहते इस ओर ध्यान न दिया गया तो मुगल शहनशाहों की बनाई हुई यह सराय और हमारी बहुमूल्य विरासत की एक सुन्दर निशानी बहुत जल्दी समाप्त हो जायेगी और इस की सारी जिम्मेदारी हम पर होगी जिसके लिए हमें आने वाली नसलें कभी क्षमा नहीं करेंगी। सराय के दूसरे भाग में अस्तबल है जिस का मुख्य द्वार दक्षिण की ओर है। अस्तबल में घोड़ों को घास आदि खिलाने के लिए उचित स्थान बनाये गये हैं यह सराय मुगल तथा भारती वास्तुकला का एक शानदार नमूना है।

आवश्यकता इस बात की है कि सराय की उचित देखभाल तथा मरम्मत का प्रबंध किया जाए ताकि हम अपनी बहुमूल्य विरासत को जो कि हिन्दू मुस्लिम

सभ्यता का संगम और ऐतिहासिक दृष्टि से महत्वपूर्ण है बचाया जा सके। ऐसी विरासत जिस पर हमें गर्व है और जो हमारे अतीत की निशानी है। पुरातत्त्व विभाग इसे अपने अधिकार में लेकर बाकी ऐतिहासिक स्थानों की तरह इस का विकास करे, इसे अधिक सुन्दर तथा आकर्षित बनाने का यत्न करे ताकि जम्मू कश्मीर में आने वाले पर्यटक तथा यात्री इस ऐतिहासिक विरासत को देखकर अपने अतीत के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकें। इतिहासकारों के लिए भी इस सराय का अध्ययन लाभदायक हो सकता है। जम्मू कश्मीर सरकार का पर्यटन विभाग इस स्थान पर सांस्कृतिक कार्यक्रमों तथा मेलों का आयोजन कर के देश भर के लोगों को इस ऐतिहासिक सराय की जानकारी देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकता है ताकि अधिक संख्या में लोग यहां आएें और इस पिछड़े क्षेत्र का विकास तथा उन्नति संभव हो सके। इस कार्य को सफल बनाने के लिए दूसरे विभागों तथा स्थानीय लोगों का सहयोग भी लिया जा सकता है।

ऐतिहासिक 'जिया पोता घाट'-अखनूर

जम्मू क्षेत्र में स्थान स्थान पर प्राचीन धार्मिक स्थानों के अतिरिक्त ऐसी ऐतिहासिक इमारतें, दुर्ग तथा महल भी हैं जिन से हमें जम्मू कश्मीर राज्य के इतिहास का पता चलता है। इन में से कुछ स्थान तो अब खण्डरात में तबदील हो चुके हैं और जो बाकी बचे हैं वे भी धीरे-धीरे समाप्त होते जा रहे हैं। समय रहते यदि उनकी संभाल न की गई तो हमारी आने वाली पीढ़ियों को अपने अतीत के बारे में जानकरी प्राप्त करने में कठिनाई होगी। कुछ एक प्राचीन मन्दिरों, दुर्गों तथा भवनों को भारत सरकार के पुरातत्त्व विभाग ने अपने अधिकार में लिया है और उस विभाग के अधिकारी उनकी देखभाल तथा मरम्मत में लगे हैं जिनमें क्रिमची के मन्दिर, अखनूर का दुर्ग, बिलावर तथा बसोहली का शिव मन्दिर आदि उल्लेखनीय हैं परन्तु बहुत से ऐसे स्थान भी हैं जिन की ओर न राज्य सरकार और न ही केंद्रीय सरकार उचित ध्यान दे रही है। यद्यपि इन स्थानों का ऐतिहासिक महत्व है और यह हमारी बहुमूल्य विरासत का हिस्सा हैं। ऐसा ही एक स्थान है अखूनर का 'जिया पोता घाट'।

जम्मू से लगभग तीस किलोमीटर पश्चिम की ओर पवित्र चंद्र भागा नदी के दायें तट पर स्थित अखनूर एक प्राचीन नगर है जो कभी अखनूर राज्य की राजधानी हुआ करता था। यह नगर न केवल धार्मिक अपितु ऐतिहासिक दृष्टि से भी बड़ा प्रसिद्ध है। ऐसा माना जाता है कि यह नदी चंद्र तथा भागा नदियों के मिलाप से बनी है जो हिमाचल राज्य की कुल्लू तथा लाहौल स्पीती घाटियों के आस पास की पहाड़ियों से निकलती हैं। चंद्र भागा जब अपनी पहाड़ी यात्रा पूर्ण करके अखनूर क्षेत्र में प्रवेश करती है तो इसकी गति धीमी हो जाती है और वह कुछ दूर आगे जा कर खामोशी के साथ पाकिस्तान में प्रवेश कर जाती है। अखनूर पहुंच कर इस नदी का सारा जोश, इस की सारी अटखेलियां, इस की उछल कूद तथा शोर समाप्त हो जाता है और यह पूर्ण रूप से शांत हो जाती है। चंद्र भागा (चिनाव) नदी को गंगा के समान पवित्र माना जाता है। पर्वों के दिनों में इस नदी में स्नान करने के लिए दूर दूर से लोग आते हैं। इस तट पर श्रद्धालुओं के नहाने के लिए पक्के घाट तथा ईश्वर की आराधना के लिए कई मन्दिर बने हैं। यहां के वासी धार्मिक विचारों के हैं। वे दिन निकलते ही चंद्र भागा में स्नान करने और यहां बने विभिन्न देवी देवताओं के

मन्दिरों में पूजा अर्चना करने के लिए आते हैं। चंद्र भागा पर बने सभी घाटों की अपनी अपनी महत्ता है परन्तु इन में 'जिया पोता घाट' सब से अधिक प्रसिद्ध है।

'जिया पोता' का यह घाट हमें उस महान योद्धा की याद दिलाता है जिस का नाम गुलाब सिंह था, उस का जन्म 21 अक्तूबर 1792 ई को प्रातः 4 बजकर 6 मिनट पर मियां किशोर सिंह के घर हुआ। वह अपने दादा जोरावर सिंह के पास रहते थे और दस वर्ष की आयु में ही घुड़सवारी तथा तीर कमान चलाने में निपुण हो गये थे। गुलाब सिंह जी कुछ कर दिखाने तथा कुछ बनने के अभिप्राय से महाराजा रणजीत सिंह की सेना में एक सिपाही के रूप में भर्ती हुए और विभिन्न लड़ाईयों में अपनी योग्यता तथा वीरता के कारनामे दिखाये। महाराजा रणजीत सिंह ने उनकी वीरता पर प्रसन्न होकर उन को कई जागीरें इनाम के तौर पर दीं और समय समय पर उन की पदोन्नति भी होती गई। गुलाब सिंह जी बड़े वीर तथा निडर सिपाही थे। जिन्होंने अपनी स्वामी भक्ति से महाराजा रणजीत सिंह का दिल जीत लिया था। 1815 ई से 1820 ई के मध्य महाराजा रणजीत सिंह के लिए जम्मू तथा राजौरी की लड़ाईयों में गुलाब सिंह ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई। इन लड़ाईयों में सब से बड़ी तथा कठिन लड़ाई में 'यूसफ जई' कबीले के साथ लड़ी गई जिस में गुलाब सिंह की व्यक्तिगत सूझ-बूझ तथा वीरता से ही सफलता मिली। गुलाब सिंह ने लाहौर दरबार के अधीन काम करते हुए जिस वीरता का प्रदर्शन किया उस से प्रसन्न होकर महाराजा रणजीत सिंह ने गुलाब सिंह को सबसे बड़े पहाड़ी राज्य जम्मू का राजा बनाने का निश्चय किया तथा इस बात को भी मान लिया कि गुलाब सिंह के पश्चात उन के पुत्र जम्मू के राजा होंगे। 1822 ई में मियां किशोर सिंह के स्वर्गवास होने पर उनके अन्तिम संस्कार में शामिल होने के लिए महाराजा रणजीत सिंह जम्मू आए। उस समय उन्होंने गुलाब सिंह को जम्मू तथा उन के भाई सुचेत सिंह को बंदराल का राज्य देने की घोषणा की और फिर उन्होंने अखनूर में चंद्रभाग नदी के दायें किनारे 16 जून 1822 ई को स्वयं अपने कर कमलों से 'जिया पोता' घाट पर पूरे राजकीय सम्मान के साथ गुलाब सिंह जी के माथे पर तिलक लगाकर उन को जम्मू का राजा बना दिया। बाद में गुलाब सिंह के तीसरे भाई ध्यान सिंह को पुंछ का राज्य दिया गया। गुलाब सिंह के राज तिलक के पहले दिन एक स्वीकृति लेख प्रमाण पर तीनों भाईयों के हस्ताक्षर करवाये गये। प्रसिद्ध इतिहासकार श्री सुख देव सिंह चाड़क के अनुसार गुलाब सिंह के राज तिलक की तिथि 17 जून 1822 ई है।

महाराजा गुलाब सिंह उन्नीसवीं शताब्दी के एक मात्र व्यक्ति थे जिन्होंने अपना जीवन एक साधारण सिपाही से आरंभ किया और अपनी वीरता तथा राजनैतिक सूझ-बूझ से विशाल जम्मू-कश्मीर राज्य के संस्थापक कहलाऐ जिन के वंशज 1948 ई तक इस राज्य पर शासन करते रहे।

जिया पोता वृक्ष होने के कारण यह घाट भी 'जिया पोता' घाट के नाम से प्रसिद्ध हो गया। कहते हैं कि गर्मियों में लोग नदी के किनारे इस वृक्ष की छाया में बैठकर ठंडी वायु का आनन्द लेते थे। अब इस घाट पर जिया पोता का वृक्ष तो नहीं परन्तु इस घाट की महत्ता में कोई अन्तर नहीं आया। हो सकता है कि बाढ़ के कारण चंद्र भागा के किनारों के आस पास की जमीन बाढ़ के पानी में बह गई हो और उसके साथ ही जिया पोता वृक्ष भी पानी में बह गया हो। पहले तो यह घाट टूटा-फूटा था और यहां के लोग भी इस की महत्ता को भूलते जा रहे थे परन्तु जब 1985 ई में महंत रामानन्द दास जी यहां आए तो उन्होंने इस घाट को नया रूप दिया और इसकी सुन्दरता में निखार पैदा किया। जिस स्थान पर गुलाब सिंह जी का राज तिलक हुआ था वहां एक चबूतरा बना दिया गया है उस के चारों ओर लोहे का जंगला और उस के भीतर शिव लिंग तथा अन्य देवी देवताओं की मूर्तियां और कई देवताओं की पिंडियां स्थापित की गई हैं। कभी कभी चंद्र भागा की लहरें किनारे से बाहर आकर जब इस स्थान से टकराती हैं तो ऐसा मालूम होता है मनो वे गुलाब सिंह के इस राजतिलक थड़े को भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित कर रही हों। इस घाट पर राज तिलक होने के बाद जब गुलाब सिंह जी जम्मू के राजा बने तो उन्होंने पहला दरबार हरि मन्दिर के थड़े पर लगाया था। इसके बाद उन्होंने अपने दरबारियों को जम्मू भेज दिया और स्वयं अपने गुरु बावा प्रेम दास जी का आर्शीबाद लेने सूई चले गये।

जिया पोता घाट पर अब बहुत सुन्दर चिनार दुर्गा मन्दिर का निर्माण किया गया है। जहां सुबह शाम भक्तों की भीड़ रहती है। मन्दिर में दुर्गा माता की भव्य मूर्ति की स्थापना की गई है जिसे गहनों तथा सुन्दर वस्त्रों से खूब सजाया गया है। धूप पीप तथा फूलों की सुगंध से भीतरी वातावरण, हर समय पवित्र रखा जाता है। मन्दिर की बाहरी दीवारों पर केतु, राहु ,गणेश, जी शुक्र, बृहस्पती, बुध, मंगल, चंद्र तथा सूर्य ग्रहों की मूर्तियां स्थापित की गई हैं। दो बड़े प्रवेश द्वार बनाये गये हैं। उन पर भी श्री गणेश जी, भगवान शिव, माता पार्वती, हनुमान जी तथा विष्णु भगवान जी की

मूर्तियां हैं। बाहरी परिक्रमा में माता का मन्दिर, शिव मन्दिर, धर्मराज मन्दिर, पहले महात्मा जी की समाधि है। दुर्गा मन्दिर के साथ ही बाहर की ओर पश्चिमी दीवार के साथ गंगा माता की भव्य तथा विशाल मूर्ति है। गंगा मैया के हाथ में कलश है जिससे पवित्र जल धारा हर समय बहती रहती है। ऊपर तीन बंदरों की आकृतियां हैं जो अपनी आंखों, कानों तथा मुंह पर हाथ रख कर यहां आने वालों को यह संदेश देते प्रतीत होते हैं कि न बुरा देखो, न बुरा सुनो, और न बुरा बोलो। गंगा माता की मूर्ति के सामने चार पांच मीटर की दूरी पर श्री राम भक्त हुनमान जी का मन्दिर निर्मित किया गया है।

महंत रामानन्द दास जी के अनुसार चंद्र भागा बहुत प्राचीन नदी है जिस का वर्णन पुराणों में भी आया है। यह बहुत लम्बी नदी है। जहां से यह निकलती है वहां उस का नाम चंद्र है और फिर इसमें भागा नदी आ कर मिलती है तब इसका नाम चंद्र भागा हो जाता है। यह घाट जिसे अब जिया पोता घाट कहते हैं यह भी बड़ा प्राचीन है। प्राचीन काल में ऋषि मुनि इस घाट पर तपस्या करते थे। उस समय के बहुत से मन्दिरों के अवशेष आज भी चंद्र भागा नदी के किनारे देखे जा सकते हैं। कुछ मन्दिरों में जो ठीक हैं उन में आजभी महात्मा लोग रहते हैं। इस घाट पर कभी जिया पोता वृक्ष लगा हुआ था परन्तु अब नहीं। यात्री यहां आकर उस वृक्ष के बारे में पूछते थे इस लिए महंत जी ने पार्क में दो 'जिया पोता' वृक्ष लगा दिये हैं।

महंत जी ने बताया कि रात के साढ़े तीन बजे जब वह स्नान करने के लिए चंद्र भागा नदी पर आते हैं तो वहां बहुत सी परछाईयां उन को दिखाई देती हैं। घाट के एक ओर एक पुराना कुआं है जिसे अब भर दिया गया है वहां भी कई बार उन को रोशनी दिखाई दी है परन्तु पास जाने पर सब अदृश्य हो जाता है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे उन ऋषियों मुनियों की महान आत्माऐं आज भी इस घाट के आस पास घूमती रहती हैं।

महंत रामानन्द दास जी यहां 1985 ई से हैं। इससे पहले वह कामेश्वर मन्दिर में थे। गंगोत्री की यात्रा करके जब वह अखूनर लोटे तो लोगों के आग्रह पर यहां आ कर रहने लगे। उस समय यहां एक छोटा सा कमरा और एक छोटा सा प्राचीन शिव मन्दिर था। यहां आने के बाद श्रद्धालुओं ने उन को पूर्ण सहयोग दिया। सरकार की ओर से भी सहायता मिली और यहां विकास कार्य आरम्भ किया गया। चिनार दुर्गा मन्दिर का निर्माण भी यहां के ही एक धर्म प्रेमी ने किया है। जिया पोता घाट तथा

राज तिलक थड़े का निर्माण भी महंत जी की देख रेख में हुआ है। मन्दिर के सामने एक सुन्दर पार्क का निर्माण भी किया गया है जहां बच्चे, बूढ़े स्त्रियां तथा पुरुष सैर करने आते हैं।

मन्दिर में कुछ कमरों का निर्माण भी किया गया है। यहां पर्वों के समय यात्री आकर ठहरते हैं। यहां हर समय लंगर चलता रहता है और यहां आने वाले भक्तों के खाने पीने का पूरा प्रबंध है। कोई पैसा नहीं लिया जाता। यहां ऐसे विद्यार्थी भी रहते हें जो दूर दूर के गांवों से शिक्षा प्राप्त करने अखनूर आते हैं और किराये पर कमरे लेकर नहीं रह सकते। उन को भी यहां रहने तथा भोजन की सुविधा प्राप्त है। इस पवित्र स्थान के विकास के लिए महंत जी को स्थानीय धर्म प्रेमी जनता तथा सरकारी अधिकारियों का पूर्ण सहयोग मिल रहा है और विकास कार्य जोरों पर हो रहे हैं। शिवरात्रि, अमावस, मकर संक्रान्ति और विशेष कर बैसाखी को लाखों की संख्या में श्रद्धालु इस घाट पर स्नान करने के लिए आते हैं। बैसाखी के दिन यहां बहुत बड़ा मेला लगता है और दूर दूर से यात्रियों से भरी बसें यहां आती हैं। हर महीने की संक्रान्ति को भी यहां स्नान करने के लिए भक्त आते हैं।

महंत जी ने बताया कि यहां आने तथा रहने वाले यात्री यदि बीमार हो जायें तो उन का उपचार भी नि:शुल्क किया जाता है। गरीब परिवारों की कन्याओं की शादी के लिए भी मन्दिर की ओर से सहायता दी जाती है। लगभग बीस कन्याओं की शादी तो वह करवा चुके हैं मजदूर लोग जो जहां आते हैं वे लड़के तथा लड़की को मन्दिर में ले आते है। उनकी शादी वह हिन्दू रीति रिवाज के अनुसार करवा देते हैं। उनके खाने पीने का प्रबंध मन्दिर की ओर से किया जाता है और जो बन पड़ता है वह सहायता भी की जाती है।

इस घाट की विशेष बात यह है कि आस पास के कुछ गरीब लोग जो हरिद्वार तक नहीं जा सकते अपने परिवार के मृतपरिजनों की अस्थियों का प्रवाह यहीं करते हैं। इसके अतिरिक्त अधिकतर कश्मीरी पंडित भाई भी अपने मृत परिजनों की अस्थियों का प्रवाह इसी घाट पर करते हैं। यह लोग सप्ताह में तीन बार यानि सोमवार, बुधवार तथा शुक्रवार को ही इस कार्य के लिए आते हैं। वे अपने कुल पंडितों को अपने साथ लाते हैं और पूजा पाठ करके मंत्रों के उच्चारण के साथ अस्थियां प्रवाह करते हैं । यह भी सुनने में आया है कि इस नगर के कुछ बुजुर्गों की भी यही इच्छा है कि मरनोपरान्त उन की अस्थियों का प्रवाह भी चंद्र भागा के पवित्र

जल में ही किया जाये। यहां के बच्चे बच्चे को चंद्र भागा से असीम प्यार है। चंद्र भागा उन के जीवन का एक अभिन्न अंग बन चुकी है जिस के बिना वे अपने आप को अधूरा समझते हैं। चंद्र भागा पर बने जिया पोता घाट पर स्नान करके श्रद्धालुओं को आध्यात्मिक शान्ति का अनुभव होता है।

एक ऐतिहासिक स्मारक-'अखनूर का किला'

जम्मू से 30 किलोमीटर पश्चिम की ओर चिनाव नदी के दायें किनारे पर स्थित एक बहुत ही सुन्दर नगर अखनूर के नाम से प्रसिद्ध है जिसका ऐतिहासिक तथा धार्मिक दृष्टि से भी बहुत महत्त्व है। अखनूर के पास चिनाव नदी के बायें किनारे सड़क पर खड़े होकर नगर की तरफ देखें तो ऐसा प्रतीत होता है मानो हम तवी नदी के तट पर खड़े हो कर जम्मू शहर का दृश्य देख रहे हैं। यह कस्बा कभी अखनूर राज्य की राजधानी रहा है जो डुग्गर देश की एक बहुत ही पुरानी रियासत थी और जिस को अग्नि कुल के राजा ने जो परमार वंश से था आबाद किया। अखनूर पर लग भग छः सौ साल तक परमार वंश के राजाओं ने राज किया बड़े बहादुर तथा न्याय प्रिय थे। इस वंश का अन्तिम राजा विजय पाल हुआ है। इस राजा के शासन काल 1745 ई. में राम गढिया जम्वालों ने चिनाव नदी पार करके अखनूर पर आक्रमण कर दिया। राजा विजय पाल हार खाकर भाग गया और अखनूर पर राम गढ़िया जम्वालों का अधिकार हो गया।

अखनूर में कई ऐसे धार्मिक स्थान हैं जिन का सम्बंध प्राचीन काल से है जिनको देखने के लिए दूर दूर से लोग आते हैं। प्राचीन काल के भवनों में अखनूर का किला भी देखने योग्य है जो कारीगरी का बहतरीन नमूना समझा जाता है। इस किले का बहुत कम हिस्सा ही बचा हुआ है जब की अधिकतर भाग खंडरात में तबदील हो चुका है। किले की टूटी-फूटी दीवारों को देखकर यह अनुमान लगाना मुश्किल नहीं कि किसी समय इस किले की सुन्दरता देखते ही बनती होगी और सारे इलाके में इस की शान आस पास के राजाओं के किलों से बढ़कर होगी।

एक लेख के अनुसार इस किले का निर्माण राजा चंदन देव के बड़े बेटे राजा तेग सिंह ने करवाया जो अपने पिता की मृत्यु के बाद 12 वर्ष की आयु में अखनूर की गद्दी पर बैठा। यह किला वर्गाकार का है जिस की लम्बाई चौड़ाई 200 गज के करीब है। राजा तेग सिंह ने इसका निर्माण सत्तरहवीं शताब्दी के दूसरे अर्ध में करवाया था। चिनाव नदी के तट पर ऊंचे टीले पर मजबूत बुनियादों पर बीस फुट ऊंची दीवारें इस किले की दृढ़ता का प्रतीक हैं। किले की दीवारें तीन फुट से भी अधिक मोटी हैं और भिन्न-भिन्न स्थानों पर आवश्यकता अनुसार खास तौर पर चिनाव नदी के तट की ओर दीवारों की ऊंचाई और बनावट इस ढंग से की गई है

कि शत्रु अपनी सैना तथा हथियारों को सीढ़ियों का प्रयोग कर के किले के भीतरी भाग तक नहीं पहुंचा सकता था। यह किला दो हिस्सों में बटा हुआ था एक हिस्से में राजाओं के महल तथा दूसरे हिस्से में हथियार गोला बारूद तथा सैनिकों के रहने के लिए कमरे बनाए गये थे। किले के दो प्रवेश द्वार थे, एक रास्ता नगर कि ओर से आता था और दूसरा प्रवेश द्वार चिनाव नदी की ओर था जिसे नदी पर जाने तथा राज घराने में पानी लाने के लिए प्रयोग किया जाता था। समय समय पर राज परिवार के सदस्य नौका विहार के लिए भी आते थे। किले में कोई कुआं नहीं था इसलिए राज परिवार और नगर के लोग चिनाव नदी के पानी का ही प्रयोग करते थे। उस समय क्योंकि चिनाव नदी पर कोई पुल नहीं था इसलिए लोगों को अखनूर तक जाने तथा अखनूर से बाहर जाते समय चिनाव नदी को नौकाओं द्वारा पार करना पड़ता था।

उस समय दो तीन नौकाएं इस काम के लिए रखी गई थीं। जो सारा दिन मुसाफिरों को आर-पार ले जाती थीं। जब नदी में बाढ़ आती थी तो नौका के फेरे एक या दो बार तक सीमित कर दिये जाते थे। राजा तेग सिंह बहुत योग्य तथा बहादुर होने के साथ साथ बड़ा दानी भी था। उसके शासन काल में प्रजा सुखी थी और वह अपनी प्रजा की भलाई तथा उन्नति के लिए नये नये कार्य अरम्भ करता रहता था। उसके शासन काल में एक बार अकाल पढ़ा, उस समय उसकी आयु 18 साल की थी। भूख तथा गरीबी से परेशान जनता की सहायता करने के लिए उसने महल तथा किले का निर्माण शुरु किया। इससे एक ओर लोगों को मजदूरी मिल गई तथा दूसरी ओर महल तथा किले के निर्माण का काम जल्दी पूरा हो गया। जो लोग भूख से तंग आए गये थे उनको प्रति व्यक्ति प्रति दिन एक सेर अनाज तथा दाल और नमक दिया जाता था।

इस प्रकार संकट की घड़ी में राजा तेग सिंह ने लोगों की सहायता की। ऐसा करने से दो वर्षों के अन्दर महल तथा किले का निर्माण हो गया और लोग भी अकाल से बच गए। कहते हैं कि किले के निर्माण के समय साधुओं की टोली अमरनाथ जी की यात्रा को जाते हुए अखनूर के पास एक मन्दिर में आकर रुकी। उनके पास जो भी खाद्य सामग्री थी वह समाप्त हो गई थी।

वे सब इस सोच में थे की क्या किया जाए तभी उनको पता चला की अखनूर का राजा महल तथा किला बनवा रहा है और मजदूरों को अनाज बांट रहा है। वे सब इक्ट्ठे होकर एक स्थान पर बैठ गए। थोड़ी देर के बाद उन्होंने देखा की राजा

का अनाज ऊंटों पर जा रहा है। साधु उन ऊंटों पर झपट पढ़े और अनाज की बोरियों को लूट लिया। जब राजा को यह समाचार मिला तो वह स्वयं साधुओं के पास आया और नमस्कार करने के पश्चात उन से विनम्र प्रार्थना की कि अनाज तो आप को मिल गया है परन्तु दाल तथा नमक नहीं मिला इसलिए पांच सौ रुपये मेरी ओर से भेंट स्वीकार कीजिए ताकि आप रोटी तथा चावलों के साथ दाल सब्जी भी खा सकें।

सभी साधु उस राजा की उदारता पर प्रसन्न हुए और राजा तेग सिंह की जय जय कार बुलाने लगे। जब तक वे उस इलाके में रहे राजा उनको खाद्य सामग्री भेजता रहा। हिन्दोस्तान भर में बने मुगल शहनशाहों के समय के दर्गों की तरह इस दर्ग की दीवारों के ऊपरी हिस्सों में हथियार चलाने के लिए लम्बे सुराख तथा झरोखे बनाये गये हैं। यह किला लगभग दो सौ साल पहले बना था परन्तु इस ओर उचित ध्यान न देने के कारण इस समय किले की चार दीवारी कई स्थानों से टूट चुकी है।

अब इस किले का बहुत कम हिस्सा बचा हुआ है बाकी सारा हिस्सा विरान हो चुका है। स्थान स्थान पर झाड़ियां तथा जंगली पेड़ पौधे उगे हुए हैं। किले की भीतरी जमीन पर सरकारी दफ्तर बन गए हैं और अधिकतर भूमि पर सरकारी क्वार्टर बना दिये गए हैं। किले की मरम्मत की ओर कोई विभाग ध्यान नहीं दे रहा है। इसके विपरीत ज्यादा से ज्यादा भूमि पर अधिकार करने का यत्न हर विभाग कर रहा है और इस अमूल्य विरासत को बर्बाद करने के यत्न किये जा रहे है। राजा तेग सिंह के बाद अखनूर की राज गद्दी उसके बड़े बेटे राजा आलम सिंह को मिली। राजा आलम सिंह की मृत्यु के बाद राजा अबतार सिंह गद्दी पर बैठा। उसके हां से ही मियां गुलाब सिंह किस्मत आजमाई के लिए घर से निकला था।

राजा अबतार सिंह ने महाराजा गुलाब सिंह के पिता किशोर सिंह को अखनूर किले के एक बुर्ज़ में पनाह दे रखी थी और यह बुर्ज आज भी किशोर सिंह के नाम से प्रसिद्ध है। इसके अतिरिक्त अखनूर किले में ही चिनाव नदी के किनारे महाराजा रणजीत सिंह ने 16 जून 1822 ई. को अपने हाथों से गुलाब सिंह का राज तिलक कर जम्मू का राजा घोषित किया था। इस बात का कोई ठोस प्रमाण नहीं परन्तु स्थानीय लोगों का विश्वास है कि यह प्राचीन किला राजा विराट के समय का है और पांडवों ने अपने अज्ञात वास का कुछ समय यहीं गुजारा था। भारती पुरातत्त्व सर्वेक्षण विभाग श्रीनगर-मंडल के अनुसार यह दुर्ग चंद्र भागा नदी के तट पर

हड़प्पा कालीन प्राचीन कगारों पर बना हुआ है। गुगल दर्गों के नमूने पर इस दुर्ग का निर्माण राजा तेग सिंह द्वारा शुरु किया गया और उन्नीसवीं सदी के शुरु में राजा आलम सिंह द्वारा पूर्ण किया गया। अपने राज्य अभिषेक के पश्चात 1822 ई. में राजा गुलाब सिंह ने इस दुर्ग की मरम्मत करवाई। इस दुर्ग की ऊंची मजबूत दीवारें परकोटों से अभिषिक्त हैं तथा इसके अन्तराल विभिन्न आयाम लिये बुर्जों वाले हैं। इस के किनारों पर परकोटों से घिरे हुए दो मंजले बुर्ज हैं। दुर्ग के भीतर जाने के लिए दो द्वार हैं एक चंद्र भागा कि ओर से दूसरा उत्तर दिशा की ओर से। नदी की ओर वाले महल के द्वार के साथ वाली दीवार इस दुर्ग को दो हिस्सों में विभक्त करती है। दक्षिणी भाग वाला महल दो मंजिला है तथा प्रांगन की दीवारों में भिति चित्र हैं। काली माता को समर्पित एक देवालय भीतरी महल की दीवार के बाहरी भाग में स्थित है। इस समय यह दुर्ग विध्वस्त है तथा इसकी ईमारतें, जम्मू-कश्मीर सरकार के राजस्व विभाग के तहसील कार्यालय एवमं पुलिस विभाग के पास है। इस प्रकार इस स्मारक का अतिक्रमण हुआ है। दुर्ग की भीतरी खुदाई से प्राचीन संरचनाओं के अवशेष मिले हैं तथा इसका व्यवस्थापन सिंधु घाटी सभ्यता की सुदूर उत्तरवर्ती सीमा निरूपित करता है।

दुर्ग के बाहर अखनूर से दक्षिण पूर्व की ओर 8 एवं 5 किलोमीटर दूर माल पुर तथा अम्बारन में खुदाई से क्रमश: नव प्रस्त्र स्थल एवं कुषाण-स्थल उपलब्ध हुए हैं। यद्यपि इस ऐतिहासिक स्मारक की देख रेख और इसे नया स्वरूप देने की जिम्मेदारी पूरातत्त्व विभाग भारत सरकार को सौंपी गई थीफिर भी स्थानीय प्रशासन का भी कर्तव्य बनता है कि इस स्मारक की अनदेखी ना करे।

पर्यटन विभाग भी दुर्ग के आस पास के वातावरण को सुन्दर तथा आकर्षक बना कर इस स्मारक के महत्त्व को बढ़ाने में सहायक हो सकता है। इस सम्बंध में स्थानीय लोग भी महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं ताकि डुग्गर की इस अमूल्य विरासत को बचाया जा सके क्योंकि इस प्रकार के ऐतिहासिक स्मारक आने वाली नसलों को प्राचीन इतिहास को जानने में सहायता दे सकते हैं।

गंगा की बड़ी बहन-देविका

जब से संसार बना है तब से ही नदियों का मनुष्य से घनिष्ठ संबंध रहा है। मानव सभ्यता तथा संस्कृति के विकास में भी नदियों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है क्योंकि मानव की आर्थिक तथा सामाजिक उन्नति भी नदियों के जल पर ही निर्भर करती है इसीलिए नदियों के किनारों पर बड़े बड़े नगर आबाद हुए और उन्हीं के किनारों पर ऋषियों मुनियों तथा साधु संतों ने आश्रमों की स्थापना करके अपने शिष्यों को आध्यात्मिक ज्ञान दिया। नदियों के जल से ही खेतों में उगी फसलों को नया जीवन मिलता है जिससे समस्त मानव जाति का कल्याण होता है। नदियों के जल से होने वाले लाभों को गिना नहीं जा सकता। यह नदियां माता के समान हमारा पालन पोषण करती हैं जिन के बिना मानव जाति तथा जीव जंतुओं के अस्तित्व की कल्पना भी नहीं की जा सकती। भारत वर्ष में तो नदियों को मां का स्थान दिया गया है और बड़ी श्रद्धा तथा विश्वास के साथ उनकी पूजा की जाती है। उन की आरती उतारी जाती है। भारत के अन्य भागों की तरह डुग्गर देश में भी कुछ नदियों को बड़ा ही पवित्र माना गया है। इन नदियों के किनारों पर पर्वों के दिनों में मेलों का आयोजन किया जाता है। उस समय श्रद्धालु इन पवित्र नदियों में स्नान करके पुण्य के भागी बनते हैं। डुग्गर देश में कुछ ऐसी नदियां भी हैं जो देवी देवताओं की कृपा से इस धरती पर प्रगट हुई और जिन के साथ डुग्गर वासियों की आस्थाएं जुड़ी हुई हैं। इन नदियों का वर्णन हमारे धार्मिक ग्रंथों में भी मिलता है। इन नदियों में स्नान करके भक्तों को अलौकिक शांति प्राप्त होती है। चंद्र भागा तथा तवी नदी के किनारों पर बसे कई गांवों तथा कस्बों में निश्चित पर्वों के दिनों मेले लगते हैं। इन नदियों के अतिरिक्त डुग्गर की एक बहुत ही महत्वपूर्ण नदी है देविका जिसे गंगा से भी उच्च स्थान प्राप्त है जो सुद्धमहादेव से निकल कर उधमपुर जिन्द्रह, पुरमण्डल से होती हुई उत्तरवाहिनी के पास लुप्त हो जाती है। इस पवित्र नदी में स्नान तो क्या इस के दर्शन करने से ही मनुष्य को बड़ा पुण्य प्राप्त होता है। देविका नदी का वर्णन हमारे धार्मिक ग्रंथों में भी आया है। इस नदी को इतना पवित्र माना गया है कि देवी देवता भी शुद्धि के लिए इस में स्नान करते हैं फिर मनुष्य की तो बात ही क्या। आध्यात्मिक श्रेष्ठता तथा मोक्ष प्राप्ति के लिए देविका में एक डुबकी लगाना ही काफी है।

धार्मिक ग्रंथों में इस बात का उल्लेख है कि कश्यप ऋषि कश्मीर के बाद विभिन्न तीर्थ स्थानों की यात्रा करते हुए डुग्गर देश में आए तो यहां के लोगों की शौचनीय स्थिति देख कर उन को बड़ा दुख हुआ। वह ऋषि थे इसलिए दुखी जनता की सेवा तथा लोगों का उद्वार ही उनके जीवन का लक्ष्य था। यहां आकर वह क्या देखते हैं कि डुग्गर वासी अपने मूल कर्तव्यों को भूल कर बुराई के रास्ते पर चल रहे हैं। लोग धर्म के रास्ते से हट कर अधर्म को अपना रहे हैं। ईश्वर भक्ति को भूल चुके हैं और विभिन्न प्रकार के कष्टों को सहन कर रहे हैं। ब्राहम्ण भी अपना धर्म-कर्म भूल चुके हैं। हवन यज्ञ तथा जनसाधारण को शिक्षित करने के बजाए बुरे साधनों से धन इकट्ठा करके अपना तथा बाल बच्चों का पेट पाल रहे हैं। क्षत्रि भी लोगों की रक्षा भूल कर विलासता का जीवन व्यतीत कर रहे थे और वेश्य तथा शूद्र भी धर्म के रास्ते से हट कर पाप कामों में लीन थे। लोगों का जीवन स्तर गिर चुका था और चारों ओर अराजकता फैली हुई थी। समस्त डुग्गर देश में असंतोष का वातवरण था। कश्यप त्रिष को डुग्गर वासियों पर दया आई इसलिए उन्होंने लोगों के सुख तथा शांति के लिए भगवान शिव की अराधना शुरु कर दी।

एक लम्बे समय तक भगवान की अराधना करने से भगवान शिव कश्यप ऋषि की भक्ति से प्रसन्न हुए और उनको वर मांगने के लिए कहा। कश्यप ऋषि ने भगवान से प्रर्थाना की कि डुग्गर देश की जनता आचार हीन होकर कुकर्मों में फंस गई है जिसके फलस्वरूप मरने के बाद उनको मुक्ति प्राप्त नहीं होगी। उनको सिवाए नर्क में कहीं स्थान नहीं मिलेगा। इसलिए उनके उद्वार, उनके कल्याण तथा उनकी मुक्ति के लिए कोई सरल उपाए बताऐं। भगवान शिव ने माता पार्वती को आज्ञा दी की वह देविका नदी का रूप धरन करके डुग्गर देश में प्रकट होकर डुग्गर वासियों का कल्याण करें। भगवान शिव ने कहा कि जो भी देविका में स्नान करेगा उसके जन्म-जन्म के पाप धुल जाएंगे तथा उसे मृत्यु के बाद स्वर्ग में स्थान मिलेगा।

वह पापों से मुक्त होकर पवित्र जीवन व्यतीत करेगा। माता पार्वती ने भगवान शिव की बात इस आश्वासन के साथ स्वीकार कर ली कि भगवान शिव भी उनके साथ रहेंगे। भगवान शिव आठ स्वयं भू-लिंगों के रूप में देविका नदी के किनारों पर विभिन्न स्थानों पर प्रगट हुए जो कुछ समय के बाद तीर्थ स्थानों का रूप धारण कर गये। जिन में शुद्धमहादेव, पुरमंडल तथा उत्तरवाहिनी आदि अधिक प्रसिद्ध हैं।

पौराणिक कथाओं के अनुसार फाल्गुन महीने के कृष्ण पक्ष की चौदश को अठारहवें प्रात: द्वापर के अंत में शुद्धमहादेव क्षेत्र के शहस्त्र धारा स्थान पर देविका का जन्म हुआ। देविका के जन्म पर भगवान शिव ने भी कहा था कि देविका तथा गंगा मैया में कोई अन्तर नहीं होगा। देविका गंगा से भी अधिक महत्वपूर्ण होगी। क्योंकि गंगा ने तो केवल मेरा स्पर्श ही किया है और देविका तो मेरे शरीर का आधा भाग है। अर्थात स्वयं पार्वती ही है। एक अन्य कथा के अनुसार देविका की उत्पत्ति माता पार्वती की कृपा से हुई है। एक बार माता पार्वती और भगवान शिव डुग्गर देश की पावन धरती पर से गुजर रहे थे तो माता पार्वती को डुग्गर वासियों की दशा पर बड़ा तरस आया। उन्होंने भगवान शिव से डुग्गर वासियों की हालत सुधारने की प्रार्थना की। भगवान शिव ने कहा कि इन लोगों की हालत इसलिए भी खराब है क्योंकि इस क्षेत्र में स्नान के लिए कोई पवित्र सरोवर या नदी नहीं जहां स्नान करके वे अपने पापों से मुक्ति प्राप्त कर सकें और अपने जीवन को सुखमय बना सकें। हो सकता है कि समय आने पर यहां किसी पवित्र नदी का प्रवाह हो। जिसमें स्नान करने से उनके कष्ट दूर हो जाएं इसलिए इनको प्रभु के भरोसे छोड़ दो सब ठिक हो जाएगा।

परन्तु माता शिव की बातों में आने वाली नहीं थी इसलिए बोली प्रभु आप तो सब का कल्याण करते हैं। जगत का भला चाहने वाले हैं फिर डुग्गर वासियों के प्रति आपके दिल में सहानभुति क्यों नहीं ?

इन पर आपकी कृपा दृष्टि क्यों नहीं ? भगवान शिव ने कहा कि यदि आप सचमुच डुग्गर वासियों का भला चाहती हैं, यहां के लोगों को पाप मुक्त करना चाहती हैं तो इस के लिए आप को बलिदान देना पड़ेगा। इन लोगों के कल्याण के लिए आप को नदी का रूप धारण करना पड़ेगा। पहले तो वह इस बात को मानने के लिए तैयार नहीं हुई परन्तु जब भगवान शिव ने उनको बार-बार ऐसा करने को कहा तो वह मान गई। माता पार्वती ने कहा प्रभु आपका वियोग सहन ना कर सकूंगी इसलिए आप स्वयं भी नदी के किनारों पर वास करके मेरा मान बढ़ायें। भगवान शिव ने माता पार्वती को विश्वास दिलाया कि जिस जिस स्थान पर देविका का प्रवाह होगा वहीं उसके किनारों पर उनका भी निवास होगा। इस प्रकार माता पार्वती ने देविका नदी का रूप धारण किया। देविका को गुप्त गंगा भी कहते हैं क्योंकि यह बहुत कम स्थानों पर जमीन के ऊपर बहती है। 'देवी-महात्मय' में

लिखा है कि जहां गंगा के जल में स्नान करने से प्राणियों के पाप धुल जाते हैं देविका नदी को देखने तथा छूने मात्र से ही श्रद्धालु पाप मुक्त हो जाते है। सुद्धमहादेव से निकलने के बाद देविका भूमिगत हो जाती है और उसके बाद वह उधमपुर में प्रगट होती है। इसके बाद जिन्द्रह, पुरमण्डल तथा उत्तरवहिनी में देविका के दर्शन होते हैं। उत्तरवाहिनी में इसका प्रवाह उत्तर की ओर हो जाता है इसलिए यह स्थान उत्तरवाहिनी के नाम से प्रसिद्ध हैं। इन सभी स्थानों पर देविका के किनारे भगवान शिव के मन्दिरों का निर्माण किया गया है। धार्मिक ग्रंथों में इस बात का वर्णन है कि देविका में स्नान करने से माता पार्वती जी प्रसन्न होती हैं और मनुष्य की सभी मनोकामनाएं पूरी करती हैं। पौराणिक कथा के अनुसार भागीरथ ने विष्णु भगवान की घोर तपस्या की और उन से अपने पितरों के उद्धार के लिए गंगा माई को पृथ्वी पर लाने की प्रार्थना की तो भगवान विष्णु ने उनकी तपस्या से प्रसन्न होकर गंगा को आकाश से धरती पर आने का आदेश दिया। भगवान विष्णु ने यह भी कहा कि गंगा मैया में स्नान करने से पितरों का ही नहीं समस्त मानव जाति का कल्याण होगा। गंगा मैया ने भगवान विष्णु के आदेश का पालन करते हुए उन से प्रार्थना की! हे प्रभु! मैं समस्त मानव जाति तथा समस्त प्राणियों के पापों का बोझ कैसे सह पाऊंगी। सब के पाप तो मेरे जल में स्नान करने से धुल जाएंगे परन्तु मेरा उद्धार कैसे होगा। भगवान विष्णु ने कहा कि धरती पर भगवान शिव तुम्हारे वेग को संभालेंगे और वही तुम्हारे उद्धार का मार्ग भी निश्चित करेंगे। भगवान विष्णु के इस आश्वासन के साथ गंगा मैया पृथ्वी पर आई तो भगवान शिव ने अपनी जटाएं खोल कर गंगा मैया के वेग को कम किया।

गंगा मैया ने अपने उद्धार का मार्ग पूछा तो भगवान शिव ने कहा मैं ने कश्यप ऋषि की तपस्या से प्रसन्न होकर अपनी पत्नी उमा को डुग्गर प्रदेश के लोगों के कल्याण के लिए नदी का रूप धारण करने का आदेश दिया है। सबसे पहले सभी देवताओं ने उसमें स्नान किया इसलिए उसका नाम देविका रखा गया। यदि तुम साल में एक बार देविका में स्नान करोगी तो तुम्हारे सभी पाप धुल जाएंगे। उस समय से देविका को बड़ा महत्त्व प्राप्त है और उसे गंगा की बड़ी बहन के रूप में माना जाता है। देविका को गंगा, सरस्वती,जमुना, कावेरी, गोदावरी तथा अन्य नदियों की भांति ही पाप नाशिनी कहा गया है। सुद्धमाहदेव क्षेत्र के बाद देविका उधमपुर में दिखाई देती है। कहते हैं कि किसी समय यहां देविका के किनारे 108 बावलियां

थीं परन्तु अब उनकी संख्या पांच या सात ही रह गई है। बड़ी बावलियों के पास शिव लिंगों की स्थापना की गई है जहां श्रद्धालु जल चढ़ाते हैं और पूजा करते हैं। इन बावलियों में स्नान का महत्त्व भी देविका स्नान के बराबर माना जाता है। उधमपुर में देविका के किनारे पर कामेश्वर मन्दिर है इसलिए इस क्षेत्र को कामेश्वर कहा गया है।

लोगों का विश्वास है कि यहां सच्चे दिल से भगवान शिव की पूजा करने तथा शिव लिंग पर जल चढ़ाने से मनोकामना पूरी होती है। यहां देविका के दोनों ओर स्नान करने के लिए घाट बने हुए हैं।

देविका के किनारे पर्वों पर श्रद्धालुओं की भीड़ होती है। बैसाखी का मेला जहां तीन दिन तक रहता है। उन दिनों जहां बड़ी चहल पहल होती है। दूर-दराज पहाड़ी इलाकों के लोगा अपने अपने क्षेत्र की टोलियां बनाकर पहाड़ी लोक गीत गाते हैं।

खिलौनों हलवाईयों तथा अन्य सामान बेचने बालों की दुकानें लगती हैं। यहां कई प्राचीन मन्दिर तथा महंतों की समाधियां भी हैं। देविका के किनारे रहने वाले लोग अपने मृत परिजनों का अस्थि प्रवाह भी देविका में ही करते हैं। उधमपुर में कामेश्वर मन्दिर के पास देविका का प्रवाह कम और जलधारा भी छोटी है परन्तु उस में डाली गई अस्थियां कुछ दिनों के बाद अदृशय हो जाती हैं। लोगों का यह भी विश्वास है कि कामेश्वर में देविका स्नान करने वाला व्यक्ति कभी नर्क में नहीं जाता। मृत्यु के बाद उसे स्वर्ग में स्थान प्राप्त होता है। इतना बड़ा तीर्थ स्थान होने के बावजूद उधमपुर में देविका नदी में तथा उसके दोनों किनारों पर इतनी गंदगी है जिसे शब्दों में ब्यान नहीं किया जा सकता है। यद्यपि इस क्षेत्र को साफ सुथरा रखने के लिए कमेटी बनाई गई है फिर भी इस सम्बंध में लोगों में इस पवित्र नदी बारे जागरूकता पैदा करना अति आवश्यक है। उधमपुर के बाद देविका अदृश्य हो जाती है और जिंद्राह में प्रगट होने के बाद अंत में उत्तरवाहिनी क्षेत्र में प्रगट होती है। इस स्थान की प्राकृतिक सुन्दरता देखते ही बनती है। पुराणों में इस क्षेत्र को उमापति पुर भी कहा गया है। उमा भी पार्वती का ही एक नाम है। पार्वती भगवान शिव को पति के रूप में प्रास करने के लिए शिव की भक्ति करने में हद से भी अधिक लीन हो गई। शिव की भक्ति में उसे अपने आप की भी सुध न रही तो पार्वती की माता ने उनको तपस्या करने से रोकने के लिए 'उमा'(अरी तपस्या मत कर) कह कर रोका और तब माता पार्वती उमा के नाम से भी प्रसिद्ध हो गई। पुरमण्डल में देविका

के दोनों किनारों पर कई मन्दिर तथा सरायें हैं। परन्तु सबसे बड़ा मन्दिर उमा पति माहदेव का है। देविका नदी का रूप धारण करते समय भगवान शिव ने माता पार्वती से यह परामर्श किया था कि वह कामेश्वर तथा उमा पति के नाम से उस के किनारे पर वास करते हुए उसके यश में वृद्धि करेंगे।

इस मन्दिर में उमा पति महादेव पर हजारों घड़े पानी चढ़ाने पर भी कोई पता नहीं चलता की पानी कहां चला जाता है। भगवान शिव ने माता पार्वती से यह भी कहा था कि ऐसा तीर्थ इस धरती पर मुश्किल से ही मिलेगा। कहते हैं कि इस मन्दिर का प्रवेश द्वार तथा उसके साथ का कुछ भाग मुगल सम्राट अकबर के सेना पति राजा मान सिंह ने बनवाया था। मन्दिर के विशाल परिसर में महाराजा गुलाब सिंह की बसाई हुई शिवपुरी है। जिसमें 121 शिव मंदिर हैं।

एक एक मन्दिर में 11-11 रुद्र हैं। यूं तो यहां सारा साल यात्री भगवान शिव के दर्शन तथा देविका में स्नान करने के लिए आते रहते हैं परन्तु सबसे बड़ा मेला शिवरात्रि के पर्व पर लगता है। उस दिन श्रद्धालु देविका में स्नान करके भगवान शिव पर जल चढ़ाते हैं। यहां आम तौर पर देविका अदृश्य रहती है इसलिए श्रद्धालु रेत हटा कर खड्ड़े खोद कर पवित्र जल में स्नान करते हैं।

पुरमण्डल के बाद देविका नदी उत्तरवाहिनी में प्रगट होती है। इस क्षेत्र में क्योंकि यह नदी कुछ फासले तक उत्तर की ओर बहती है इसलिए यह क्षेत्र उत्तरवाहिनी के नाम से प्रसिद्ध है। जम्मू-कश्मीर के महाराजा गुलाब़ सिंह को इस क्षेत्र से विशेष लगाव था। एक कथा के अनुसार जब गुलाब सिंह महाराजा रणजीत सिंह की सेना में अधिकारी थे तो अपने सैनिकों के साथ इस क्षेत्र में शिकार खेलने आये। दोपहर के समय वह एक छाया दार वृक्ष के नीचे आराम करने के लिए लेंट गये। ठंडी हवा के झोंकों के कारण उन्हें नींद आ गई। सपने में उन्होंने एक महात्मा को देखा जो गुलाब सिंह को कह रहे थे कि यह एक पवित्र क्षेत्र है। यहां पवित्र नदी देविका बहती है और उसके किनारे पर भगवान शिव का वास है इसलिए यहां शिकार न खेलें। यदि वह यहां जीव हत्या न करें तो उनको राजप्राप्ति हो सकती है। वह राजा बन सकते हैं। गुलाब सिंह की आंख खुली तो उन्होनें अपने सैनिकों को वापिस चलने की आज्ञा दी। गुलाब सिंह ने वहां शिकार खेलने का विचार छोड़ दिया। कहते हैं कि उसके एक साल के अन्दर-अन्दर ही महाराजा रणजीत सिंह ने गुलाब सिंह को जम्मू का राजा नियुक्त कर दिया और अपने हाथों से चिनाव नदी के

किनारे जिया पोता घाट पर उनके माथे पर राज तिलक किया। जम्मू का राजा बनने के बाद गुलाब सिंह फिर इस क्षेत्र में आए और यहां गद्‌धर जी का मन्दिर बनवाया। यहां भी देविका के किनारे भगवान शिव तथा अन्य देवी देवताओं के मन्दिर हैं जो श्रद्धालुओं को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। उधमपुर पुरमण्डल तथा उत्तरवाहिनी में श्रद्धालु अपने पितरों की शान्ति के लिए पिंड दान तथा श्राद्ध आदि करते हैं। इसमें सन्देह नहीं कि डुग्गर प्रदेश पर सर्व शक्ति मान भगवान की अपहार कृपा रही है। देविका नदी तो स्वयं माता पार्वती का अंश है उनका रूप है और उसके किनारे स्थान-स्थान पर भगवान शिव का वास है। डुग्गर वासी बड़े भग्यशाली हैं जहां देविका जैसी पवित्र नदी बहती हैं जिसके दर्शन तथा स्पर्श मात्र से ही मनुष्य के समस्त पाप धुल जाते हैं। ऐसी पवित्र नदी जिस क्षेत्र में बहती हो वह स्वर्ग के समान ही होगा और ऐसे क्षेत्र में रहने वाले अपने आप को भग्य शाली क्यों न समझेंगे। देविका नदी डुग्गर देश को पवित्र करती है। यहां रहने वाले लोगों के दिलों में प्यार की जोत जलाती है और उनको धर्म के रास्ते पर चलने के लिए प्रेरित करती है।

देविका डुग्गर वासियों को पापों से मुक्ति देती है तथा उनका कल्याण करती हुई हर मन्दिर के पास बसंतर नदी में मिलकर अदृश्य हो जाती है। आवश्यकता इस बात की है कि डुग्गर प्रदेश में बहने वाली इस पवित्र नदी तथा उसके किनारों पर बने घाटों, बावलियों, हावेलियों तथा तीर्थ स्थानों की सफाई, तथा विकास की ओर स्थानीय लोग तथा सम्बंधित विभाग ध्यान दें ताकि अधिक से अधिक पर्यटक और श्रद्धालु इन तीर्थों की यात्रा के लिए आकर आध्यात्मिक शान्ति प्राप्त करें।

एक ऐतिहासिक गांव-बीरपुर

जम्मू कश्मीर की शीतकालीन राजधानी जम्मू जो ''मंदिरों का शहर'' के नाम से विश्व प्रसिद्ध है तवी नदी के दायें किनारे पर आबाद है। यह शहर एकता तथा भाईचारे की एक मिसाल रहा है जहां हिन्दू, मुस्लिम, सिख, ईसाई, बौद्धी जैनी तथा अन्य धर्मों के लोग सदियें से भाईयों की तरह एक साथ रहते चले आ रहे हैं। मन्दिरों, मस्जिदों, गुरुद्वारों तथा गिरजाघरों का यह शहर दूर से ही एक सुंदर दृश्य पेश करता है जिस की यात्रा के लिए न केवल भारत बल्कि दुनिया भर से पर्यटक तथा यात्री यहां आते हैं। जम्मू राज्य किसी जमाने में तमाम पहाड़ी राज्यों में एक महत्त्व पूर्ण स्थान रखता था और फौजी ऐतबार से भी अन्य 21 पहाड़ी राज्यों के मुकाबले सब से अधिक ताकतवर था परन्तु सोलहवीं शताब्दी के अंत में जम्मू राज्य हर लिहाज से कमजोर हो गया तथा पारिवारिक झगड़ों के कारण जम्मू राज्य दो भागों में बंट गया। एक लेख के अनुसार इस विभाजन का जिम्मेदार राजा कपूर देव था जिस ने 1530 ई से 1570 ई तक जम्मू पर शासन किया। शायद पारिवारिक झगड़ों से तंग आकर ही उस ने जम्मू राज्य को विभाजित कर अपने दोनों राज कुमारों के लिए अलग अलग राज्य स्थापित कर दिए। यह दो राज्य थे जम्मू तथा बाहु राज्य।

नया होने के कारण बाहु राज्य में बद इंतजामी की झलक साफ तौर पर दिखाई देती थी। उस समय आर्थिक दृष्टि से भी यह राज्य कमजोर था। इसको नये सिरे से बनाने की आवश्यकता थी। राज्य में उचित सैन्य शक्ति भी न थी और न ही राज्य का काम काज चलाने के लिए योग्य अधिकारी। नये राज्य की राजधानी बनने पर बाहु में पानी की आवश्यकता को पूरा करने के लिए अधिकारियों ने महामाया पहाड़ी तथा बाहु फोर्ट के मध्य एक कुआं खुदवाया परन्तु उस में पानी नहीं आया। ज्योतिषियों ने कहा कि नर बली दिये बिना इस में पानी नहीं आएगा।

राजा ने सिपाहियों को आदेश दिया कि बली के लिए किसी सुंदर बालक को खरीद लाओ जिस का रंग गोरा तथा माता पिता की अकेली संतान हो। नरबली के लिए बालक की तलाश करते करते सिपाही बीर पुर पहुंचे। बीरपुर उस समय बाहु राज्य का ही भाग था। इस का नाम बीरपुर कैसे पड़ा इस के पीछे एक कहानी है। सिपाहियों ने बीर पुर के पास बहने वाले बलोल नाले के किनारे पर जंगल में एक

चरवाहे को देखा जिस का नाम बीरू था। उस के घर का पता पूछते-पूछते सिपाही बीरू के माता पिता के पास आए जो उन दिनों गरीबी में जीवन व्यतीत कर रहे थे।

सिपाहियों ने बीरू के माता पिता को बहला-फुसला कर या लालच देकर उन से बीरु को खरीद लिया और उसे अपने साथ लेकर राजमहल आ गए। उसे यह नहीं बताया गया कि उसे क्यों यहां लाया गया है। उसे पेट भर भोजन खिलाया गया, सुंदर कपड़े पहनाये गए और उस के माथे पर तिलक लगाया गया। बीरू की समझ में कुछ नहीं आ रहा था कि यह सब क्या हो रहा है फिर उसे कुएं के पास लाया गया जहां उस की बली के सारे प्रबंध पूरे हो चुके थे। वह समझ गया कि उसका आखरी समय आ गया है। पास खड़े जल्लाद के हाथ में तलवार देखकर बालक बीरू डर गया। उसे पता चल गया था कि उसे यहां बली के लिए ही लाया गया है। उस ने सोचा कि मरना तो है ही फिर क्या डरना क्यों न किसी से पूछ ही लिया जाए। बीरू ने पास खड़े एक सिपाही से पूछा, भैया यह सब क्या हो रहा है?। सिपाही ने कहा कि कुएं में पानी लाने के लिए तुम्हारी बली दी जाएगी। उस समय बीरू ने आंखें बंद करके गुरु गोरख नाथ जी को याद किया और उन से प्रार्थना की कि इस मुश्किल घड़ी में उस की सहायता करें। उस का जीवन अब आप के हाथ में है । गुरु गोरख नाथ जी ने मक्खी का रूप धारण करके बीरू के कान में कुछ कहा जिस से बीरू की जान बच गई। बीरू ने राजा तथा सिपाहियों से हाथ जोड़ कर विनम्र प्रार्थना करते हुए कहा, हे राजन आप को पानी चाहिए या मेरी जान? राजा ने उत्तर दिया यदि कुएं में पानी आ जाऐ तो हम तुम्हें छोड़ देंगे। कहते हैं कि उसी समय बीरू ने पास खड़े सिपाही की कटार लेकर अपनी उंगली को काटा और खून को कुएं की ओर छिड़क दिया। गुरु गोरख नाथ जी की कृपा से ऐसा चमत्कार हुआ कि कुएं में पानी आ गया। सब लोग प्रसन्नता से तालियां बजाने लगे और बीरू की जय जयकार करने लगे। बीरू को उसी समय छोड़ दिया गया। राजा की कैद से छूटने के बाद बीरु गांव वापस नहीं गया और सीधा गुरु गोरख नाथ जी के आश्रम में चला गया। वहीं बीरू बाद में बिरपा नाथ योगी के नाम से प्रसिद्ध हुआ। गांव के लोगों ने बीरू की याद को जिंदा रखने के लिए गांव का नाम 'बीर पुर' रख दिया। आज भी बीरपुर में बिरपा नाथ योगी की समाधि है। उस की समाधि पर मेलों तथा भण्डारों का आयोजन किया जाता है और लोग श्रद्धा पूर्वक बीरू की समाधि पर शीश झुकाते हैं। प्रति वर्ष नवरात्रों में नवमी को यहां मेला लगता है।

बीरपुर नाम का यह छोटा सा गांव जम्मू से भलभग 20 किलोमीटर पूर्व की ओर जम्मू पुरमण्डल सड़क की बाईं ओर स्थित है। शिवालक की छोटी छोटी पहाड़ियों तथा हरे भरे वनों के मध्य बसा यह गांव अपने अंदर बहुत बड़ी सामाजिक, धार्मिक, ऐतिहासिक तथा राजनैतिक विरासत छिपाए हुए है। बीरपुर का चप्पा चप्पा प्राचीन यादगारों, मंदिरों तथा भवनों से भरा हुआ है जिन्हें देखकर हमें अपने अतीत पर गर्व होता है। इस गांव के साथ कई कहानियां जुड़ी हुई हैं। दूर दूर तक जहां नजर जाती है हरे भरे वन तथा पहाड़ियों का न समाप्त होने वाला सिलसिला दिखाई देता है। इस गांव के चारों ओर प्राकृतिक दृश्यों को देखकर दिल को अजीब किसम की ठंडक महसूस होती है। बीरपुर की पहाड़ियों के नीचे बहता बलोल नाला इस गांव की सुंदरता को चार चांद लगाता है। ऐसा प्रतीत होता है मानो प्रकृति ने बीरपुर को बनाने संवारने में कोई कसर बाकी नहीं छोड़ी। यूं तो बीरपुर में हर स्थान देखने योग्य है परन्तु कुछ महत्व पूर्ण स्थान तथा व्यक्ति जिन्होंने इस पवित्र धरती पर जन्म लिया और जिन का नाम आज भी बड़ी श्रद्धा तथा प्यार से लिया जाता है के कारण इस गांव की प्रसिद्धि दूर दूर तक फैल गई। यहां के सीधे सादे लोग बड़े धार्मिक विचारों के हैं, धार्मिक कार्यों में बड़ी रुचि लेते हैं और सभी धार्मिक त्यौहार बड़े उत्साह से मिल जुल कर मनाते हैं। परमपिता परमात्मा पर उन को पूरा भरोसा है और हर शुभ कार्य करने से पहले भगवान को याद करते हैं जिस से उनके सभी कार्य बिना किसी विध्न के सम्पन्न होते हैं। ईश्वर की आराधना उनके जीवन का महत्वपूर्ण कार्य है। लोग मेहनती हैं और उनका अधिकतर व्यवसाय खेती बाड़ी है। कुछ लोगों ने सेना में भर्ती होकर अपनी वीरता के कारनामों से इस गांव की शान में वृद्धि की है और इसकी कीर्ति में चार चांद लगाए हैं। कुछ पढ़े लिखे युवा सरकारी नौकरियों में हैं और ऊंचे पदों पर कार्य कर रहे हैं जिन पर गांव के बच्चे बच्चे को गर्व है। यहां का युवा वर्ग बुजुर्गों के मार्ग दर्शन में यहां के लोगों के रहन सहन को ऊंचा उठाने में जी जान से काम कर रहा है।

सब यही चाहते हैं कि प्रगति की दौड़ में यह गांव किसी से पीछे ना रह जाए। बिरपा नाथ जोगी के अतिरिक्त जिस महान आत्मा ने इस गांव की पवित्र धरती पर जन्म लिया। उन का नाम था दाता रणपत देव जिन्होंने हक तथा न्याय की खातिर अपना बलिदान दे दिया परन्तु जुल्म के सामने झुकने से इंकार कर दिया। उन्होंने अपनी आत्मा की आवाज पर सच्चाई तथा ईमानदारी के रास्ते पर चलते हुए मृत्यु

को गले लगाकर यह सिद्ध कर दिया की नेकी तथा सच्चाई सदा रहने वाली और इसका हर युग में बोल-बाला रहा है। लोगों पर जुल्म ढाने वाले का नाम मिट जाता है। दाता रणपत जी ने पंचायत की महानता, उसकी मर्यादा को कायम रखा और सिद्ध कर दिया की सच्च को खरीदा नहीं जा सकता। उनके इस बलिदान को देखते हुए यहां के लोगों ने उन को दाता रणपत की ऊंची उपाधी देकर उनकी सेवा में श्रद्धा सुमन अर्पित किए। उनकी याद में यहां मन्दिरों तथा देहरियों का निर्माण किया। दाता रणपत जी के पूर्वज सढ़ौत्रा ब्राहम्ण थे और चाड़क राजपूत बरादरी के पुरोहित होने के साथ साथ सरपंच भी थे और उन के छोटे मोटे झगड़ों का फैसला भी किया करते थे। जो सभी को मान्य होता था। उस समय चाढ़क बरादरी के दो धड़ों का इस क्षेत्र में जोर था। वे अपने अपने क्षेत्र में अपने अपने ढंग से जमींदारी तथा अन्य कार्यों की निगरानी करते थे। इनमें एक बीरपुरिये चाढ़क जो चौधरी कहलाते थे। इन की सात मंडियां थीं। दूसरा धड़ा दरहलिये चाढ़कों का था जिन की बाईस मंडियां थीं। जमीन के झगड़ों को लेकर दोनों धड़ों में समय समय पर टकराव होता रहता था जो कभी कभी मारकटाई पर जा कर समाप्त होता था। इन झगड़ों में कई कीमती जानें भी जा चुकी थीं। दाता रणपत के पूर्वजों तथा बुजुर्गों के समझाने बुझाने तथा बीच बचाव से कभी कभी दोनों में सुलाह भी हो जाती थी। अपने पिता बाबा लद्धा की मृत्यु के बाद दाता रणपत जी दोनों धड़ों की सहमती से बिरादरी के पुरोहित तथा सरपंच नियुक्त हुए। उनके सरपंच बनने के कुछ ही समय बाद दरहालिए चाढ़कों के मुखिया बांगी ने 70 वर्ष पुराना जमीन का झगड़ा पुनः खड़ा कर दिया जिस का निर्णय दाता जी के दादा बाबा उग्रदेव जी कर चुके थे। बांगी चाढ़क ने दाता रणपत जी को लालच भी दिया और प्रार्थना भी की कि बीरपुर के चाढ़कों से उस के जमीन के झगड़ों को निपटा दें। आखिर बड़ी ब्राहम्णा के स्थान पर पंचायत की मीटिंग हुई और दाता रणपत ने पिछले फैसले को ध्यान में रखते हुए बीरपुर के चाढ़कों के हक में फैसला कर दिया जिसे बांगी सहन न कर सका और उस ने दाता रणपत के सम्बंधियों की सहायता से दाता जी का वध करवा दिया। दाता जी की माता भी दाता जी के साथ ही चिता में जल कर सती हो गई। जिस स्थान पर दाता जी का वध किया गया वहां लोगों ने कार सेवा करके एक बड़ा तालाब बनाया जो 'दाते का तालाब' के नाम से प्रसिद्ध हुआ। अब इस तालाब के चारों ओर सीमेंट की पक्की सीढ़ियां बनाई गई हैं। स्त्रियों के नहाने के लिए स्नान

गृह बनवाए गए हैं। श्रद्धालु इस सरोवर में स्नान करके कई शारीरिक कष्टों से मुक्ति पाते हैं। तालाब की मिट्टी तथा पानी जिसे श्रद्धालु शक्कर तथा शरबत कहते हैं अपने घरों को भी ले जाते हैं और आवश्कता पड़ने पर उनका प्रयोग करते हैं। सरोवर की एक ओर मंदिर में दाता रणपत जी के मोहरे तथा संगलें रखी हैं। बरामदे में घोड़े पर सवार दाता रणपत जी की सुंदर प्रतिमा है। रविवार को यहां बड़ी संख्या में सभी धर्मों के मानने वाले लोग स्नान करने के बाद दाता जी के मोहरों तथा मूर्ति के दर्शन करके उनका आर्शीवाद प्राप्त करते हैं। जोंगी कारकों द्वारा ढोल के मधुर स्वरों पर दाता जी के श्रद्धालुओं को दाता जी की जीवनकथा सुनाते हैं। दाता जी के श्रद्धालुओं के योगदान से यहां विकास कार्य जोरों पर है। यहां साल में दो बार बड़े मेलों का आयोजन किया जाता है। जिस में सढ़ोत्रा बिरादरी के लोग दूर दूर से दाता जी का आर्शीवाद प्राप्त करने यहां जाते हैं। इसके अतिरिक्त अंन्य बिरादरियों से संबंध रखने वाले दाता जी के श्रद्धालु भी इन मौकों पर दाता रणपत जी के दरबार में उपस्थित होते हैं। इस अवसर पर भण्डारों तथा लंगरों का आयोजन भी किया जाता है। दाताजी के पवित्र स्थानों के विकास कार्यों की निगरानी करने तथा यहां का प्रबंध चलाने के लिए एक कमेटी का गठन किया गया है।

तालाब से चार पांच किलोमीटर उत्तर की ओर बीरपुर गांव की पहाड़ी के दामन में बलोल नदी के किनारे दाता रणपत जी तथा उनकी माता की देहरियां हैं। यहीं दाता रणपत जी का अंतिम संस्कार किया गया था। इस देहरे पर सढ़ोत्रा बिरादरी के लोग अपने लड़कों के मुंडन करते हैं और इस बिरादरी का लड़का विवाह के बाद पत्नी के साथ दाता जी के देहरे की परिक्रमा कर के दाता जी के दरबार में अपने गृहस्थ जीवन की सफलता के लिए प्रार्थना करता है। उन के साथ परिवार के बड़े सदस्य भी आते हैं। पास ही वह प्राचीन कुआं भी है यहां उस समय स्त्रियां पानी भर रही थी जब दाता जी का बिना सिर का धड़ घोड़े से यहां गिरा था।

दाता रणपत जी के वंश के लोग जब बीरपुर छोड़कर चले गए तो गांव वालों ने उन के मकान में दाता जी का मंदिर बना दिया। आरम्भ में तो यह स्थान कच्चा था परन्तु अब इस स्थान को बहुत ही सुंदर ढंग से संग मरमर लगा कर बनाया गया है। पहले तो मंदिर में केवल दाता जी के मोहरे ही थे परन्तु अब दाता जी की सुंदर प्रतिमा के साथ उन की माता तथा पत्नी की मूर्तियां भी स्थापित की गई हैं जिन को देख कर श्रद्धालुओं को आध्यात्मिक शांति प्राप्त होती है। मंदिर के सामने खुले

आंगन में हवन कुण्ड है जहां समय समय पर हवन यज्ञ होते रहते हैं। वहीं प्राचीन समय का पीपल वृक्ष भी है जिस की श्रद्धालु पूजा करते हैं। दाता रणपत की मृत्यु के बाद बाहु राज्य लड़खड़ा गया और उसका पतन आरंभ हो गया जिस के परिणाम स्वरूप 1660 के आप पास बाहु को फिर जम्मू राज्य में शामिल कर दिया गया। जम्मू कश्मीर के महाराजा प्रताप सिंह जी ने बीरपुर में चाढ़क परिवार में विवाह किया था। महारानी चाढ़की बड़ी नेक, धार्मिक विचारों की तथा गरीबों की सहायता करने वाली तथा अपने पति की तरह अधिक समय प्रभु भक्ति में व्यतीत करती थीं। उन्होंने बीरपुर में कई जगहें बनवाई। कई कुएं तथा तालाब बनवाएं। राधा कृष्ण जी का मंदिर और उस के सामने भगवान शिव के मंदिर में शिवलिंग की स्थापना करवाई। नौकरों, सिपाहियों, कारिन्दों तथा नौकरानियों के लिए तीन मंजला सराय बनवाई। सराय में खाने पीने तथा रहने का उचित प्रबंध किया गया था। कहते हैं कि महारानी चाढ़की प्रतिदिन मुबारक मंडी के महलों से बीरपुर के राधा कृष्ण मंदिर के कलश के दर्शन करके ही अन्नजल ग्रहण करती थीं।

महाराजा प्रताप सिंह जी ने भी यहां एक सुंदर महल का निर्माण करवाया था। जब कभी वह अपने ससुराल बीरपुर आते थे तो इसी महल में ठहरते थे। इस समय यह महल, मंदिर तथा सराय धर्मार्थ ट्रस्ट की निगरानी में है और यहां संस्कृत महाविद्यालय खोला गया है जिसे जम्मू विश्वविद्यालय से मान्यता प्राप्त है। इस कालेज में लगभग 150 विद्यार्थी, शिक्षा प्राप्तकर रहे हैं। इन विद्यार्थियों को संस्कृत के अतिरिक्त अन्य विषय भी पढ़ाये जाते हैं। विद्यार्थियों के रहने खाने पीने तथा चिकित्सा सुविधा का भी उचित प्रबंध किया गया है। यहां के वातावरण को देखकर पुराने गुरुकुलों की याद ताजा हो जाती है जब विद्यार्थी अपने घरों से दूर वनों में ऋषियों मुनियों तथा साधु संतों के आश्रमों में शिक्षा प्राप्त किया करते थे। बीरपुर विख्यात शिल्पी श्री रविंद्र जम्वाल की जन्म भूमि भी है जिन के कारण इस गांव का नाम विदेशों में भी जाना जाता है। उनकी बनाई हुई देश के महत्वपूर्ण व्यक्तियों की मूर्तियां जम्मू शहर के विभिन्न चौराहों पर लगी हैं जिनमें महात्मा गांधी, जनरल विक्रम सिंह, राजा जाम्बूलोचन, पं. प्रेम नाथ डोगरा जनरल जोरावर सिंह श्रीमती इंद्रा गांधी तथा मियां डीडो की मूर्तियां उल्लेखनीय हैं।

यहां लड़कों तथा लड़कियों का हाई स्कूल भी है। बीर पुर के लड़के तथा लड़कियां ऊंची शिक्षा प्राप्त कर बड़े बड़े सरकारी पदों पर काम कर रहे हैं यहां का

हर वासी परिश्रम पर विश्वास रखता है और पूरी लगन से अपने कर्तव्यों का पालन करता है। गांव बीरपुर आज हर क्षेत्र में उन्नति कर देश के अन्य भागों की तरह आगे बढ़ता जा रहा है। यहां रहने वाला हर युवक, स्त्रि, पुरुष तथा बच्चा गांव की कीर्ति के लिए यत्नशील है और वह दिन दूर नहीं जब वे गर्व से सर ऊंचा उठा कर कह सकेंगे कि हम बीरपुर के निवासी हैं। उस बीरपुर के जहां दाता रणपत तथा बिरपा नाथ जैसी महान आत्माओं और संतों ने जन्म लिया था और जिन के आर्शीवाद से यह गांव दिन दुगनी रात चौगनी उन्नति कर रहा है।

डुग्गर का प्रसिद्ध पर्व-रुट्ट राहड़े

किसी भी देश की सभ्यता तथा संस्कृति के विकास में त्यौहारों तथा पर्वों का बहुत बड़ा योगदान है क्योंकि त्यौहार हमें अपने अतीत के साथ जोड़कर रखते तथा बुजुर्गों के बनाए हुए रीति-रिवाजों पर चलने की प्रेरण देते हैं। हर देश में लोग त्यौहारों को अपने अपने ढंग से मनाते हैं और नाच गाकर प्रसन्ना प्रकट करते हैं। त्यौहार किसी भी देश की उच्च परम्पराओं के प्रतीक माने जाते हैं। आज के वैज्ञानिक युग में जब मनुष्य मशीन की भांति काम करने में जुटा हुआ है और हर समय सांसारिक धंधों तथा परेशानियों के बोझ तले दबता जा रहा है तो यह त्यौहार उस के जीवन में नया जोश उत्पन्न करने में सहायक होते हैं। कुछ समय के लिए वह अपने सभी दुखों को भूल जाता है और अपने संबंधियों तथा मित्रों से मिलकर उत्साहपूर्वक त्यौहारों के आयोजन में भाग लेता है। यह त्यौहार खुशियों का संचार करने के साथ-साथ मनुष्य को सुखमय जीवन व्यतीत करने में उनका मार्ग दर्शन करते हैं तथा आपसी मेल मिलाप को बढ़ावा देते हैं। प्राचीन काल में जब आने-जाने के साधन बहुत कम थे लोग अपने सगे संबंधियों से बहुत कम मिल पाते थे और न ही किसी का हाल चाल पूछ सकते थे तो स्थानीय मेले या पर्व एक दूसरे से मिलने का बहुत बड़ा साधन होते थे। लोग महीनों पहले ही पर्वों में शामिल होने की तैयारियां शुरु कर देते थे। मेलों में वे एक दूसरे से गले मिल कर हाल-चाल पूछते थे। मेले तथा पर्व किसी देश या जाति विशेष की पहचान हैं।

भारत में कई धर्मों तथा समुदायों के लोग रहते हैं। हर एक की भाषा, वेशभूषा, रीति-रिवाज, खाना-पीना तथा पर्व त्यौहार भी अलग-अलग हैं। कई धर्मों तथा संस्कृतियों का संगम होने के कारण यहां इतने त्यौहार मनाए जाते हैं जितने शायद ही किसी देश में मनाए जाते हों। भारत को यदि मेलों तथा पर्वों की भूमि कहा जाए तो झूठ नहीं होगा। उत्तरी भारत में रहने वाले डोगरों के भी कुछ प्रसिद्ध पर्व हैं जिन को वे बड़े उत्साह तथा श्रद्धा से मनाते हैं।

हर त्यौहार का अपना समय तथा महत्त्व है। कुछ त्यौहारों का संबंध कृषि से है, कुछ का मौसम से और कुछ महापुरुषों की याद में मनाए जाते हैं। कुछ धार्मिक, कुछ सामाजिक जीवन, रहन-सहन, संस्कृति , इतिहास तथा कुछ कलाकृतियों और चित्रकारी से जुड़े हुए हैं। कुछ पूरे समुदाय या जाति के हैं और कुछ त्यौहारों

को केवल उस समुदाय या जाति की स्त्रियां ही मनाती हैं। त्यौहारों के मनाने से सामाजिक जीवन में आने वाले ठहराव को गति मिलती है। त्यौहारों तथा मेलों में समाजी जीवन की झलक मिलती है जिससे हमें जाति विशेष के रहन-सहन तथा रीति-रिवाजों को जानने तथा समझने में सहायता मिलती है। अन्य जातियों तथा समुदायों की भांति डोगरों के भी अपने त्यौहार हैं जिनको वे अपने ढंग से मनाते हैं। डुग्गर प्रदेश जो जम्मू क्षेत्र का बहुत बड़ा भाग है मेलों तथा त्यौहारों के लिए प्रसिद्ध है जहां हर महीने कोई न कोई या कई त्यौहार मनाए जाते हैं। धार्मिक पर्वों के अवसर पर देवी-देवताओं की पूजा की जाती है, भण्डारों का आयोजन किया जाता हैं और सजावट की सारी जिम्मेदारी उन्हीं पर तो होती है। घर की लक्ष्मी होने के नाते भी त्यौहारों को विधिपूर्वक मनाने में उन का बड़ा योगदान होता है। कुछ त्यौहार तो पूर्ण रूप से स्त्रियों के ही होते हैं। जिनमें करवा चौथ, नवरात्रे, तुलसी का विवाह, दरुबड़ी, भुग्गा तथा रुट्ट राह्ड़े या सकोलड़े आदि उल्लेखनीय हैं।

डुग्गर प्रदेश में रुट्ट राह्ड़े पर्व को अधिक महत्व दिया गया है क्योंकि यह पर्व प्रदेश के दूर दराज इलाकों में एक महीने तक मनाया जाता है। प्राचीन काल में जब मनोरंजन के साधन बहुत कम थे उन दिनों युवतियां विशेष रूप से नव विवाहिता लड़कियां इस पर्व का बड़ी बेसब्री से इंतजार करती थीं क्योंकि इस पर्व पर उनको अपने माता-पिता, बहनों-भाईयों तथा सगे संबंधियों से मिलने का अवसर मिलता था। इस पर्व को युवतियां बिना किसी भेदभाव के मिल बैठकर मनाती हैं जो आपसी मेल मिलाप का प्रतीक है। रुट्ट राह्ड़े पर्व डुग्गर वासियों की पहचान है जो उनको अतीत से जोड़ कर रखने तथा मानव विकास, उसकी आस्थाओं तथा परम्पराओं को बढ़ावा देने में सहायक है। इस त्यौहार का रचनात्मक महत्व भी है। कामकाजी वसीलों को बढ़ावा देने तथा विकास की गति को तेज करने में भी इस पर्व का बड़ा महत्त्व है। जमीन की परख तथा बीजों की उत्तमता को जानने के लिए राह्ड़े प्रयोगशाला का काम करते हैं। जिन दिनों लोग पुराने ढंग से खेती बाड़ी करते थे और आजकल की तरह वैज्ञानिक प्रयोगशालाएं नहीं होती थीं तो इस ढंग से युवतियों का मनोरंजन भी हो जाता था और बीजों की परख भी हो जाती थी कि किस जमीन में कौन सा बीज बोया जा सकता है जो किसानों के लिए अधिक लाभदायक सिद्ध हो।

आषाढ़ महीने की पहली तारीख से शुरू होने वाला रुटट राह्ड़ों का पर्व पहली

सावन को समास हो जाता है जब राहड़ों को किसी नदी या नहर में प्रवाह दिया जाता है। रुट्ट पांच होते हैं और हर रुट्ट को डुग्गर वासी तरह-तरह के पकवान जिनमें बबरु, घयूर, भठूरे, सुच्चियां, पूरीयां, पूड़े आदि शामिल हैं पका कर आमों तथा खरबूजों के साथ किसी नदी के किनारे बैठ कर खाते हैं। इस अवसर पर नहरों या नदियों के किनारों पर मेले जैसी रौनक होती है।

नव विवाहिता युवतियां सावन महीने में ससुराल से मायके आ जाती हैं और अपनी सहेलियों तथा घर के अन्य संबंधियों से मिल कर त्यौहार को और भी रंगीन बना देती हैं। जिन युवतियों ने राह्ड़ों को लगाया होता है वह उनके इर्द-गिर्द लोक गीत गाते हुए भांति-भांति के चित्र बनाती हैं। राहडे घर में ही किसी खुले स्थान पर बीजे जाते हैं। इस काम में घर की बुजुर्ग महिलाएं भी युवतियों का हाथ बटाती हैं। बड़ा राहड़ा (धम्मा राह्ड़ा) कहलाता है जो परिवार के मुखिया यानि पिता का होता है। उस राहड़े में बड़े मुंह वाले मिट्टी के बरतन (चाटी) के ऊपरी भाग यानि गले को लगाया जाता है। मां के राह्ड़े में गला नहीं लगया जाता बल्कि उसे चौरस ही रखा जाता है। इस राहड़े को धर्म खूई कहते हैं। फिर भाईयों के राह्ड़े बनाए जाते हैं। जिस युवती के जितने भाई होते हैं वह उतने ही राह्ड़ों को चित्रित करती है। इन पर घड़ों के ऊपरी भाग (गलमे) लगाए जाते हैं। राह्ड़ों की जमीन तैयार करने के बाद वे उनमें मक्की, बाजरा, माश, तिली, मुंगी आदि के बीच लगाती हैं। राह्ड़ों के आस-पास की धरती पर गोबर पोतती हैं। गोबर के सूखने के बाद गलों के इर्द-गिर्द चित्रकारी की जाती है। लड़कियां अपनी सोच के अनुसार विभिन्न प्रकार के फूल, पक्षी, बेल-बूटे सांपों तथा बिच्छुओं की आकृतियां बनाती हैं और साथ ही लोकगीत गाकर अपनी कला प्रदर्शित करती हैं। क्योंकि उन दिनों लोगों के पास पैसा नहीं होता था और बाजार से रंगों को खरीदना मुश्किल था इसलिए राह्ड़ों में प्रयोग किए जाने वाले रंगों को लड़कियां स्वयं ही तैयार करती थीं जो पत्तों, ईन्टों अथवा कोयलों को पीस कर बनाए जाते थे।

अंतिम रुट पर सभी राह्ड़ों को नदी या नहर में प्रवाह दिया जाता है। उस दिन युवतियां विशेष रूप से नव विवाहिता लड़कियां नए वस्त्र पहनकर, हार श्रृंगार करके, पूरी सज-धज के साथ समारोह में शामिल होकर सेहलियों के साथ लोक गीत गाती हुई नदी के तट तक जाती हैं। रंग बिरंगे इस त्यौहार में शामिल सभी के चेहरों पर प्रसन्नता की झलक दिखाई देती है। जो व्यक्ति उस दिन राह्ड़ों को

उठाकर नदी तक ले जाता है उस दिन उसे पेट भरकर पकवान खिलाए जाते हैं। उसके पास खाने के लिए इतना कुछ होता है कि स्वयं अपना पेट भरने के बाद वह बहुत सा खाना अपने घर भी ले जाता है। यह पर्व युवतियों के लिए नई उमंग लेकर आता है। पूरा महीना लड़कियां इस पर्व को मनाने में व्यस्त रहती हैं जो डुग्गर संस्कृति का अटूट अंग है। डोगरा रीति के अनुसार सावन महीने में सास और बाहु इकट्ठी नहीं रहतीं इसलिए लड़कियां मायके चली जाती हैं और उस के ससुराल वाले उन्हें गहने, कपड़े और छोटे भाई बहनों के लिए कपड़े, मीठे पकवान, आम खरबूजे आदि भेजते हैं। लड़की वाले इन चीजों को गांव में अपने पड़ोसियों तथा संबंधियों में बांट देते हैं। ससुराल वाले त्यौहर के साथ सकोलड़े भी भेजते हैं जो किनारी, मोती तथा रेशम तथा ऊन के धागों से बने होते हैं। लड़कियां सकोलड़ों को अंतिम रुट्ट के अवसर पर कानों में पहनती हैं जो उनकी सुंदरता में अधिक निखार पैदा करते हैं। इस त्यौहार को जम्मू क्षेत्र के डुग्गर वासियों के अतिरिक्त रावी तथा चिनाव नदी की बैल्ट के साथ-साथ हिमाचल, पंजाब, सियालकोट तथा शकरगढ (पाकिस्तान) में भी मनाया जाता था। आज लोग अपनी संस्कृति, भाषा तथा रहन-सहन को भूल कर पश्चिम के रंग में रंगते जा रहे हैं और अपने त्यौहारों तथा रीति-रिवाजों को भूल रहे हैं जो अच्छा संकेत नहीं।

आज प्राचीन विरासत को बचा कर रखने के नाम पर कई संस्थाएं स्थापित हो चुकी हैं। प्राचीन संस्कृति तथा धरोहर के संरक्षण के नाम पर कईयों ने अपनी दुकानें सजा ली हैं परन्तु उन का काम कागजी कार्रवाई तक ही सीमित है और अमली तौर पर उनका काम न के बराबर है क्योंकि प्राचीन संस्कृति की सुरक्षा के नाम पर प्राप्त होने वाली सरकारी सहायता को ऐसी संस्थाओं के अधिकारी टी-पार्टियों तथा इश्तहार बाजी पर ही खर्च कर देते हैं। उनके पास इतना समय ही नहीं होता कि गांवों में जाकर जन साधरण से मेल मिलाप बढ़ाएं। कुछ संस्थाओं का कार्य क्षेत्र केवल बड़े-बड़े शहरों तक ही सीमित है। वातानुकूल भवनों में कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। कुछ बड़े लोग भाषण करते हैं और कुछ प्रस्ताव भी पास किए जाते हैं। स्कूली बच्चों को बड़े-बाजारों में घुमाया जाता है और अगले दिन समाचार पत्रों में अपने चित्र देखकर वे महसूस करते हैं कि उन्होंने बहुत बड़ा काम कर दिखाया है। यदि ऐसी संस्थाओं के अधिकारी ईमानदारी से अपने कर्तव्यों का पालन करें तो डुग्गर संस्कृति को बढ़ावा देने में बड़ी सहायता मिल सकती है।

देखने में आ रहा है कि इस समय अधिकतर डुग्गरवासी अपनी उन परम्पराओं, रीति-रिवाजों तथा त्यौहारों को भूलते जा रहे हैं जो उनके बुजुर्गों के सामाजिक जीवन का आधार थे। परिणाम स्वरूप वे अपने अतीत से कटते जा रहे हैं और यदि यही हाल रहा तो डुग्गर संस्कृति से संबंधित पर्वों का उल्लेख तथा डोगरा अनुष्ठानों का महत्व केवल पुस्तकों में ही पढ़ने को मिलेगा। उनका पालन करने वाले दिखाई नहीं देंगे। शायद इसी बात से प्रभावित होकर डुग्गर संस्कृति, डोगरा पर्वों, खानपान, डुग्गर के खेल तमाशों, डोगरा वेश भूषा तथा डोगरा रीति रिवाजों के संरक्षण हेतु प्रसिद्ध साहित्यकार, विचारक, लेखक, विद्वान तथा समाज सेवक ठाकुर ध्यान सिंह ने डोगरा संस्कृति संगम बटैहड़ा की स्थापना की ताकि डोगरों को उनके उज्जवल अतीत से जोड़ा जा सके। श्री ध्यान सिंह 1989 में स्थापित डोगरा संस्कृति संगम के संस्थापक प्रधान तथा पूर्ण सिंह पूर्ण इसके महामंत्री हैं जो बिना किसी प्रकार की सरकारी सहायता के डुग्गर के लोक गीतों(भाखां) तथा डुग्गर के प्रसिद्ध पर्व रुट्ट राह्ड़े को पहले जैसी लोकप्रियता देने का यत्न कर रहे हैं। हर वर्ष वह गावों में घर-घर जाकर बुजुर्ग महिलाओं तथा पुरुषों के साथ-साथ युवतियों को राह्ड़ों के महत्व बारे जानकारी देते हैं और उनसे प्रार्थना करते हैं कि वह बच्चियों को घरों में राह्ड़े उगाने के लिए प्रेरित करें। प्रति वर्ष चार या पांच गांवों की बच्चियों को राह्ड़े उगाने को कहा जाता है और अब तक लगभग 75 गांवों में राह्ड़े पर्व को पुनः जीवित किया गया है। 1989 में रुट्ट राह्ड़े संबंधी पहले कार्यक्रम का आयोजन बट्ैहड़ा में किया गया था जिसमें संसार चांद बड़ू, श्री नीलाम्बर देव शर्मा, श्री वेद भसीन चेयर मैन कश्मीर टाइम्स पब्लिकेशन, श्री सूरज सर्राफ, मोहन सिंह, श्री नृसिंह देव जम्वाल, श्री ध्यान सिंह आदि ने शमूलियत की। गर्मी की चिंता किए बिना संगम के प्रधान ध्यान सिंह, महामंत्री पूर्ण सिंह तथा उनके सहयोगियों ने गांव-गांव जाकर बच्चियों को राह्ड़े उगाने के लिए उत्साहित किया और इस शुभ कार्य में सभी गांव वासियों ने राह्ड़ों के महत्व को समझते हुए पूर्ण सहयोग का विश्वास भी दिलाया। संगम के यत्नों से अब बहुत से गांवों में राह्ड़े उगाने की परम्परा को पुनः जीवित किया गया है। पर्व की समाप्ति पर पहले दूसरे तथा तीसरे स्थान पर आने वाली बच्चियों को पुरस्कार दिए जाते हैं और समारोह में शामिल लोगों को डोगरा पकवान खिलाए जाते हैं।

पहली आषाढ़ (14 जून 2005) को बट्ैहड़ा में आयोजित एक समारोह में

'रुट्ट राह्ड़े' पर्व का उद्घाटन संसद सदस्य श्री मदन लाल शर्मा ने किया। कार्यक्रम की अध्यक्षता प्रसिद्ध कहानीकार श्री छत्रपाल ने की। उस अवसर पर श्री ध्यान सिंह ने लोगों से प्रार्थना की कि वे अपने अतीत से जुड़े रहें ताकि उनकी पहचान बनी रहे। रुट्ट राह्ड़े वातावरण को शुद्ध रखने और आपसी प्यार बढ़ाने में भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उस साल संगम की ओर से जिन चार गांवों को चुना गया उनमें मढ़ ब्लाक का गांव सुई सिम्बली, अखनूर ब्लाक का बलगाड़ा तथा भलमां तथा भलवाल ब्लाक का गांव हसरमां शामिल थे। संगम के अधिकारी अपने सीमित साधनों के बावजूद डुग्गर संस्कृति तथा पर्वों के संरक्षण के लिए हर संभव प्रयास कर रहे हैं। गांव वासियों के अतिरिक्त संगम को जम्मू क्षेत्र के उन सभी जाने-माने साहित्यकारों तथा बुद्धिजीवियों का सहयोग प्राप्त है जिन को डुग्गर संस्कृति से प्यार है और जो डोगरा कहलाने में गर्व महसूस करते हैं।

गर्म चश्मों का गांव-तत्ता पानी

जम्मू-कश्मीर की पवित्र धरती को प्रकृति ने अद्‌भुत सुंदरता दी है। बर्फ से लदे ऊंचे-ऊंचे पहाड़ों की चोटियां और हरे भरे वन इस क्षेत्र की शोभा को और भी बढ़ा देते हैं। गगन चुम्बी चीड़ों के वृक्षों की शीतल वायु पर्यटकों को शांति प्रदान करती है और वे शहरों की भीड़ तथा शोर शराबे से भाग कर पहाड़ों में स्थित गांवों तथा कस्बों के शान्त वातावरण में चले आते हैं। इस धरती पर जहां ठंडे पानी की बावलियां है वहीं गर्म पानी के चश्मे भी मौजूद हैं जो पर्यटकों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं।

जम्मू से लगभग 140 किलो मीटर और काला कोट से 16 किलो मीटर पश्चिम की ओर स्थित गांव 'तत्ता पानी' गर्म पानी के चश्मों के लिए सारे विश्व में प्रसिद्ध हैं। अब यह गांव उन्नति की ओर कदम बढ़ा रहा है। पहाड़ी के दामन में बने हुए कच्चे तथा पक्के मकान यहां रहने वाले लोगों की सादगी को प्रदर्शित करते हैं। गर्मियों तथा सर्दियों में स्कलों के बच्चे यहां सैर करने आते हैं और यहां के प्राकृतिक दृश्यों का आनन्द उठाते हैं। एक छोटा सा बाजार आस पास के गांवों तथा पर्यटकों की आवश्यकताओं को पूरा करता है। थोड़ी सी दुकानें हैं जहां हर समय लोगों की भीड़ रहती है। यह भीड़ केवल सर्दियों के कुछ महीनों में ही देखने को मिलती है और गर्मियों में अधिकतर दुकानें बंद हो जाती हैं। इस गांव की सारी रौनक तथा यहां का कारोबार गर्म पानी के चश्मों के कारण ही है। सर्दियों में इन गर्म चश्मों में नहाने के लिए लोग पुंछ, राजौरी, कालाकोट के आस-पास के गांवों तथा कश्मीर घाटी से भी आते हैं और कई प्रकार के शारीरिक रोगों से मुक्त होकर जाते हैं। प्रकृति ने इन गर्म पानी के चश्मों में ऐसी औषधियों का मिश्रन किया है कि रोगी यहां से पूर्ण रूप से स्वस्थ हो कर जाते हैं। ऐसे ऐसे रोगी यहां आते हैं जो डाक्टरों की दवाईयां खा खा कर तंग आ गये होते हैं। वे सब कुछ दिन यहां नहाने के बाद और विधि पूर्वक उपचार करने पर निरोग होकर अपने घरों को लौटते हैं। यह गर्म पानी के चश्मे प्रकृति के अनमोल उपहार हैं। प्रकृति की ओर से मनुष्य की भलाई के लिए धरती पर भेजे गये डाक्टर जो बिना फीस के मानव जाति की सेवा कर रहे हैं। प्रकृति के यह डाक्टर रोगियों से धोखा नहीं करते और न ही अपनी तिजोरियां भरने के लिए गरीब रोगियों की बेबसी का लाभ उठाते हैं। इनकी तो यही इच्छा

होती है कि कोई रोगी यहां से निराश होकर न जाये। इन चश्मों में नहाने के लिए आमतौर पर वही लोग आते हैं जो जोड़ों के दर्द मेदे की सोजश, पेट में गोला, पेट में दर्द या हाजमे की खराबी आदि रोगों से पीड़ित हों। इसके अतिरिक्त चम्बल तथा फिंसी फोड़ों के इलाज लिए भी यह पानी लाभदायक है। इन चश्मों में नहाने के लिए बड़ी सावधानी की आवश्यकता है। लोग आहिस्ता आहिस्ता पानी में प्रवेश करते हैं। पहले किनारे पर बैठ कर गर्म पानी को अपने बाजुओं, टांगों, मुंह तथा शरीर के दूसरे भागों पर डालते हैं। एक दम पानी में प्रवेश करने से हानि हो सकती है। कुछ समय तक गर्म पानी में रहने के बाद बाहर निकलते हैं। फिर शरीर को कम्बल या लोई से ढ़क लेते हैं ताकि शरीर को हवा न लग जाये। शरीर को गर्मी पहुंचाने के लिए गर्म वस्तुओं का प्रयोग करते हैं। कई लोग दिन में चार या पांच बार लगातार एक सप्ताह तक नहाते हैं। इस चश्मे में बड़े-बड़े पत्थर लगे हुए हैं। ऐसा प्रतीत होता है जैसे यह पत्थर कहीं बाहर से लाये गये हैं क्योंकि ऐसा पत्थर उस इलाके में नहीं है। इस पानी की एक विशेषता यह भी है कि इस में नहाने से शरीर की सारी थकावट दूर हो जाती है। यहां नहाने के बाद व्यक्ति अपने आप को बड़ा प्रसन्नचित महसूस करता है। शरीर में नया जोश तथा फुर्ती आ जाती है।

चश्में के चारों ओर ऊंची पर्दा दीवार बना कर उसे दो भागों में बांट दिया गया है। एक ओर स्त्रियां तथा दूसरी ओर पुरुष नहाते हैं। स्त्रियों तथा पुरुषों के नहाने का समय निश्चित किया गया है। चश्मे की सफाई पर विशेष ध्यान दिया जाता है। यदि इसमें गंदगी फैलाई जाये तो इस का पानी सूख जाता है। गर्मी हो या सर्दी, सूखा हो या बरसात चश्में में पानी का स्तर एक जैसा ही रहता है। यह गर्म पानी के चश्मे न केवल शारीरिक रोगों को दूर करते हैं बल्कि 'तत्ता पानी' गांव की कई ऐकड़ कृषि योग्य भूमि को पानी भी उपलब्ध कराते हैं, दूसरे शब्दों में हम यह भी कह सकते हैं कि यहां के लोगों की समृद्धि तथा उन्नति का आधार गर्म पानी के यही चश्मे हैं क्योंकि उनकी रोजी रोटी इन्हीं चश्मों से जुड़ी हुई है।

'तत्ता पानी' गांव की महत्ता तथा प्रसिद्धि को देखते हुए पर्यटन विभाग की ओर से यहां एक सुन्दर सराय का निर्माण किया गया है जिस में उचित कीमत पर यात्रियों के ठहरने का पूरा प्रबंध किया गया है। इसके अतिरिक्त यहां लोक निर्माण विभाग की ओर से भी गैस्ट हाऊस बनाया गया है। सर्दियों के दिनों में बड़ी संख्या में यात्री यहां आते हैं। सराय तथा गैस्ट हाऊस के कर्मचारी यात्रियों तथा पर्यटकों से

बहुत अच्छा व्यवहार करते हैं और हर प्रकार से उनके सुख तथा सुविधा का ध्यान रखते हैं। कुछ लोग दुकानों तथा घरों में भी ठहरते हैं। पर्यटकों तथा यात्रियों की भीड़ को देखते हुए राज्य सरकार की ओर से एक सराय का निर्माण भी किया गया है और इस गांव की सुन्दरता को बढ़ाने और इसे अधिक आकर्षक बनाने के लिए यत्न किये जा रहे हैं। चश्मे के पास एक पवित्र स्थान है जिसे हिन्दू तथा मुस्लमान अपने अपने ढंग से ईश्वर की आराधना करने के लिए प्रयोग करते हैं और मनोकामनाएं पूर्ण होने पर यथा योग्य चढ़ावा चढ़ाते हैं जो इस स्थान के विकास पर ही खर्च किया जाता है। गांव 'तत्ता पानी' हिन्दू-मुस्लमान एकता तथा भाई चारे की एक मिसाल है। यहां हिन्दू-मुस्लमान सदियों से भाईयों की तरह रहते चले आ रहे हैं। गांव वासियों की बातचीत, व्यवहार तथा व्यापार में सच्चाई तथा ईमानदारी की झलक मिलती है। पर्यटकों से इन का व्यवहार भी बहुत अच्छा है जो यहां आने वालों के दिलों में अमिट छाप छोड़ देता है। यहां के लोग पर्यटकों को हर प्रकार की सुविधा देने का यत्न करते हैं ताकि पर्यटक यहां की मीठी यादों को अपने दिल में बसाये अपने घरों को लौटें। यहां हिन्दू-मुस्लमान मिल जुल कर रहते हैं और सुख दुख में एक दूसरे का साथ देते हैं।

गर्म-चश्मे के पास ही पंचायत घर है जहां इस समय आयुर्वेदिक डिस्पैन्सरी है जो इस क्षेत्र के लोगों की आवश्यकता को पूरा करती है। आस-पास के गांवों के लोग बीमार होने पर यहां से दवाई प्राप्त करते हैं। सर्दियों के दिनों में यहां पर रोगियों की भी भीड़ रहती है जिन का उचित उपचार किया जाता है और आवश्कयता के अनुसार दवाई दी जाती है।

यहां के लोगों का अधिकतर व्यवसाय खेती बाड़ी है। पढ़े-लिखे युवक सरकारी नौकरी करना पसन्द करते हैं। इस क्षेत्र में कोयले की खानें भी लोगों को रोजगार दिलाने में सहायक हैं जहां सैंकड़ों स्थानीय लोग काम करके अपने बाल बच्चों का पेट पालते हैं। गर्म पानी के चश्मों तथा कोयले की खानों के कारण ही 'तत्ता पानी' गांव को साढ़े छ: किलो मीटर पक्की सड़क बना कर राष्ट्रीय राज मार्ग से जोड़ा गया है। खानों से कोयला निकालना यद्यपि एक कठिन कार्य है परन्तु यहां के लोग बड़ी मेहनत तथा लगन से इस कार्य में जुटे हुए हैं। यह खानें उन का जीवन है, उन का ओढ़ना-बिछौना, उन का सब कुछ उनकी उन्नति तथा समृद्धि की प्रतीक। जिस स्थान पर कोयले की खानें हैं वह जम्मू कश्मीर मिनरलज़ ने खरीद ली है और उसी

विभाग की देख रेख में वहां से कोयला निकाला जाता है। इन खानों के कारण भी इस क्षेत्र का विकास तथा यहां के लोगों की आर्थिक दशा में काफी सुधार हुआ है। इस गांव में लगभग 100 घर हैं और जनसंख्या भी अधिक नहीं। कुछ लोगों ने चश्मे के आस-पास अपने घर तथा दुकानें बना ली हैं। यह चश्मा आरम्भ में छोटे से तालाब की भांति था और सारा पानी धरती पर ही बिखर जाता था। पानी को नियंत्रित करने के लिए उचित प्रबंध न था परन्तु ग्रामीण विकास विभाग की ओर से बी.डी.ओ. की देख रेख में यहां की पंचायत ने चश्मे के चारों ओर ऊंची दीवार बनाकर उसे दो हिस्सों में बांट दिया। चश्मे के आस-पास सफाई का उचित प्रबंध किया गया है।

इसमें शक नहीं कि यह एक पिछड़ा हुआ पहाड़ी क्षेत्र है परन्तु देश के दूसरे हिस्सों की भांति यहां भी शिक्षा का प्रकाश तेजी से फैल रहा है। यहां के लड़के तथा लड़कियां शिक्षा प्राप्त करने में तेजी से आगे बढ़ रहे हैं। उनके दिलों में एक चाह है, एक हसरत है, एक जोश है, एक जजबा है आगे बढ़ने का, शिक्षा प्राप्त करके एक अच्छे इंसान बनने का, एक अच्छे नागरिक बन कर देश की सेवा करने का। राज्य सरकार की ओर से यहां एक हाई स्कूल भी खोला गया है जहां गांव के लड़के तथा लड़कियां इकटठे शिक्षा प्राप्त करते हैं। यहां से दसवीं करने के बाद वे उच्च शिक्षा ग्रहण करने के लिए काला कोट या राजौरी जाते हैं।

गांव में बिजली तथा पीने के पानी की भी व्यवस्था की गई है। रात के समय बिजली की रोशनी से सारा गांव जगमगा उठता है। यहां रेडियो के साथ टेजीविजन भी आम हैं जिन से लोगों का मनोरंजन भी होता है और वह वर्तमान राजनैतिक तथा सामाजिक परिस्थितियों से भी अवगत रहते हैं।

बड़े चश्मे के साथ ही पश्चिम की ओर दूसरा चश्मा है जिसके एक कोने से गर्म तथा दूसरे कोने से ठंडा पानी निकलता है। यहां नहाना मना है परन्तु इस का पानी पाइपों द्वारा बाहर लाया गया है जहां लोग नहातें तथा कपड़े धोते हैं। साथ ही एक और चश्मा निकला है जिस के पानी का तापमान बड़े चश्मे के समान ही है।

इसमें शक नहीं कि 'तत्ता पानी' गांव अपनी सुन्दरता, गर्म पानी के चश्मों, कोयले की खानों तथा प्राकृतिक दृश्यों के कारण दूर दूर के लोगों के आकर्षण का केंद्र बनता जा रहा है और बड़ी संख्या में लोग यहां स्नान करने तथा शारीरिक कष्टों से मुक्ति प्राप्त करने के लिए यहां आते हैं परन्तु इसके विकास के लिए अभी बहुत

कुछ करना बाकी है। यदि पर्यटन विभाग इस ओर अधिक ध्यान दे तो यहां आने वाले पर्यटकों तथा यात्रियों की संख्या में वृद्धि हो सकती है। यहां पार्क आदि बनाये जायें, गलियों तथा बाजारों की मरम्मत तथा सफाई की ओर ध्यान दिया जाये, चश्मों के आस पास का वातावरण शुद्ध बनाने का यत्न किया जाये, रास्तों को टाइलें लगाकर कर सुन्दर बनाया जाये तो गांव की शोभा और बढ़ सकती है और यहां आने वालों को और अधिक प्रसन्नता हो सकती है। आशा की जानी चाहिए कि आगामी वर्षों में 'तत्ता पानी' एक पर्यटन स्थल के रूप में और अधिक लोकप्रिया होगा।

वाईल्ड लाइफ सैंचुरी मांडा-जम्मू

यह सृष्टि भगवान की सुन्दर रचना है, जिस में हर वस्तु को ऐसे ढंग से सजाया गया है कि देखने वाला हैरान रह जाता है। इस में स्त्रि, पुरुष, बच्चे, नदियां, पहाड़, वन, पशु,पक्षी, कीड़े, मकोड़े तथा अन्य जीव जन्तु सब मिलकर एक साथ रहते हैं और सभी एक दूसरे के बिना अधूरे हैं। सभी एक दूसरे पर निर्भर हैं। किसी एक को भी यदि यहां से हटा दिया जाये तो प्रकृति की इस सुन्दर रचना की शोभा बिगड़ सकती है। यहां बहती नदियों की कलकल अपने मधुर संगीत से सब का मन मोह लेती है। ऊंचे पहाड़ और उन पर जमी सफेद रंग की बर्फ को देखकर सब का दिल प्रसन्नता से झूम उठता है। झरनों, तथा रंग बिरंगे फूलों को देखकर कौन है जो प्रसन्नता का अनुभव नहीं करता। इन सब से बढ़ कर वनों में पशु पक्षियों की भांति-भांति की बोलियां हर एक के कानों को मधुर लगती हैं और हर प्राणी मंत्र मुग्ध हो जाता है।

ईश्वर ने मनुष्य की आवश्यकता की पूर्ति के लिए हर वस्तु का निर्माण किया है ताकि इस संसार में रहने वाला हर मानव तथा अन्य जीव जन्तु सुखमय ढंग से अपना जीवन व्यतीत कर सकें और उन को किसी प्रकार की असुविधा न हो। इस संसार को अधिक सुन्दर तथाआकर्षक बनाने में भगवान ने कोई कसर नहीं छोड़ी परन्तु मनुष्य ने अपने लालच तथा स्वार्थ के लिए भगवान की बनाई हुई वस्तुओं का दुरुपयोग करना आरम्भ कर दिया जिस के कारण सारे संसार का संतुलन बिगड़ गया। यही कारण है कि आज हमें कई प्रकार की आपदाओं का शिकार होना पड़ रहा है। आज हम देखते हैं कि मानव अपने स्वार्थ के लिए प्रकृति से टक्कर लेने का यत्न कर रहा है जिस का परिणाम यह है कि संसार के कई भागों में बिना मौसम के बरसात, भूकंप, सूखा, समुन्द्री तूफान तथा विभिन्न प्रकार की बीमारियां फैल रही हैं जिस से लाखों व्यक्ति तथा पशु पक्षी मौत की नींद सो जाते हैं फिर भी स्वार्थी मानव कोई सबक नहीं सीखता। ईश्वर ने हमें नदियों का स्वच्छ तथा निर्मल जल इसलिए दिया कि हम उस का सही ढंग से प्रयोग करें। इस जल को पीकर अपनी प्यास बुझाएं, इस की सहायता से खेतों में फसलों की उपज को बढ़ाएं और स्वच्छ जल धाराओं में स्नान करके प्रभु का गुणगान करें। परन्तु आज मानव नदियों के जल को गन्दा कर रहा है। हर प्रकार की गंदगी नदियों में फैंक

कर उन्हें दूषित कर रहा है। वनों के साथ भी मनुष्य का सम्बंध बड़ा प्राचीन है। जब से संसार की रचना हुई है तब से ही वनों तथा वन प्राणियों ने मनुष्य का साथ दिया है। मनुष्य की उन्नति तथा समृद्धि में वनों तथा पशु पक्षियों का महत्व पूर्ण योगदान रहा है। भगवान ने वन तथा वन प्राणियों को इसलिए बनाया कि मानव प्राकृतिक सुन्दरता का आनन्द ले सके और पशु पक्षियों की किलकारियों तथा उन की चहचहाहट को सुनकर अपना दिल बहला सके परन्तु मनुष्य ने अपने स्वार्थ के लिए वनों को काटना शुरु कर दिया और वहां रहने वाले पशु पक्षियों को मारना शुरु कर दिया और अपने मनोरंजन की खातिर जंगली जानवरों का शिकार करके उनके चमड़े तथा हडिड्यों का व्यापार करके धन इकट्ठा करने लगा। आज हम देखते हैं कि वनों के साथ साथ वनों में रहने वाले जीव जन्तुओं की कई किसमें बिल्कुल समाप्त हो गई हैं या उनमें बहुत कमी आ गई है जिस से प्राकृतिक वातावरण में खराबी आ रही है जिस का प्रभाव मौसम पर भी पड़ रहा है। मानव से बढ़ कर कोई अन्य प्राणी इतना स्वार्थी नहीं जो अपने स्वार्थ के लिए वनों को काट कर तथा वन प्राणियों को मार कर अपना तथा सृष्टि का सर्वनाश करने पर तुला हुआ है। यदि समय रहते इस महत्वपूर्ण समस्या पर ध्यान न दिया गया तो बहुत जल्दी वनों से सुन्दर पेड़ पौधों तथा पशु पक्षियों का अन्त हो जायेगा और हम सदा-सदा के लिए प्राकृतिक दृश्यों से वंचित हो जायेंगे।

इस बात को ध्यान में रखते हुंए देश के अन्य भागों की तरह जम्मू कश्मीर राज्य में भी वनों में रहने वाले पशु पक्षियों की सुरक्षा के लिए विभाग बनाये गये ताकि वनों के वृक्षों को काटने तथा वहां रहने वाले जंगली जानवरों को मारने पर रोक लगाई जा सके। यही नहीं इस कार्यक्रम के अन्तर्गत नदियों, झीलों, मरुस्थलों, घरों तथा खेत खलियानों में रहने वाले पशु पक्षियों तथा छोटे जीव जन्तुओं की सुरक्षा भी की जाती है। श्री नसीर अहमद किचलू वाईल्ड लाईफ वार्डन जम्मू रीजन के अनुसार जम्मू कश्मीर में जंगली जानवरों की सुरक्षा का विचार 1978 से आरम्भ हुआ जब इस सम्बंध में एक कानून (एक्ट)बनाया गया। इससे पहले जंगली जानवरों की सुरक्षा गेम्स ऐक्ट के अन्तगर्त की जाती थी। उस समय जंगली जानवरों का शिकार किया जाता था। राजाओं, महाराजाओं के अतिरिक्त बड़े लोगों को भी इन जानवरों का शिकार करने की छूट थी। वनों के कुछ भागों को सुरक्षित भी रखा जाता था और वहां शिकार खेलना वर्जित था ताकि पशुओं तथा पक्षियों की अपूर्व

नसलों को समाप्त होने से बचाया जा सके। जम्मू कश्मीर में महाराजाओं के शासनकाल में भी इन जानवरों की सुरक्षा के पर्याप्त प्रबंध थे। 1978 में ही पार्कों तथा सेंचुरियों का विचार भी सामने आया। 1982 तक वन विभाग भी गेम्ज एण्ड फिश्री विभाग का एक अंग था। उसी साल यानि 1982 में वन विभाग को फिश्री विभाग से अलग कर दिया गया। 1978 में वाईल्ड लाईफ प्रोटेक्शन ऐक्ट के अन्तर्गत राज्य वाईल्ड लाईफ ऐडवाईजरी बोर्ड की स्थापना की गई जिस के चेयरमैन वनमंत्री होते थे। सैक्रेटरी, विधानसभा तथा विधान परिषद के सदस्यों के अतिरिक्त अन्य वरिष्ठ नागरिकों को इस में शामिल किया गया है। इस बोर्ड में केंद्रीय सरकार के प्रतिनिधियों को भी शामिल किया गया। हर दो साल के बाद बोर्ड में तब्दीली की जाती थी। यह वोर्ड बनाने की आवश्यकता इसलिए महसूस की गई क्योंकि तमाम अपूर्व पशुओं की नसल समाप्त होती जा रही थी। अधिकतर व्यापारी पशुओं की खालों तथा हड्डियों के व्यापार में लगे हुए थे और जंगली जानवरों का वध जोरों पर था। जैसे कस्तूरी जिस का प्रयोग दवाओं तथा परफ्यूम में किया जाता है वह मस्कडियर की ग्रन्थि से निकाली जाती है। इसी प्रकार के कई मिलते जुलते व्यवसाय थे जो पशुओं के विभिन्न प्रकार के अंगों के साथ जुड़े थे और लोग अंधा धुंध जंगली पशुओं तथा पक्षियों को मारने में लगे थे। लोग इन पशुओं का मांस खाते थे या फिर शौकिया तौर पर भी मारते थे और उनका शिकार भी करते थे। एक्ट बन जाने के बाद पशुओं तथा पक्षियों को मारने पर प्रतिबंध लगा दिया गया। मीर अनायत उल्ला जी वाईल्ड लाईफ प्रोटेक्शन में बड़ी रुचि लेते थे। इस काम को वह बड़ी मेहनत तथा लगन से करते थे इसलिए उन को डिप्टी चीफ वाईल्ड लाईफ वार्डन नियुक्त किया गया। इस समय चीफ वार्डन श्री शफात हुसैन जी है। वाईल्ड लाईफ प्रोटेक्शन के काम को सुचारु रूप से चलाने के लिए जम्मू कश्मीर राज्य को तीन भागों में बांटा गया है, जम्मू, कश्मीर तथा लद्दाख। क्योंकि तीनों भागों का जलवायु विभिन्न है इसलिए इन भागों के पशु भी एक दूसरे से कुछ विभिन्नता रखते हैं। हर रीजन (भाग) का एक वार्डन है जो अपने भाग के काम काज की निगरानी करता है। जम्मू रीजन में वाईल्ड लाईफ प्रोटेक्शन के अंतर्गत तीन डीविजन बनाये गये हैं। पहले डीविजन में जम्मू तथा कठुआ के जिले हैं दूसरे में किश्तवाड़ तथा तीसरे डीविजन के वार्डन श्री ताहिर शाल जी हैं। मांडा रामनगर वाईल्ड लाईफ सैंचुरी के बारे में जानकारी देते हुए उन्होंने कहा कि मांडा रामनगर

जम्मू की सैंचुरी लगभग साढ़े बारह किलोमीटर क्षेत्र में फैली हुई है। इस समय यहां 35 हिरण, (विशन वाले) 5 नील गायें, 2 सांबर, 7 बाघ, 2 बारकिंग डियर तथ एक चिंकारा है। यहां एक चिड़िया घर बनाने की भी योजना है जिस पर काम शुरु हो चुका है। इन सारे जानवरों को बड़े बड़े जालीदार पिंजरों में रखा गया है। कुछ जानवरों को मांडा सैंचुरी में ही खुले वातावरण में घूमने के लिए छोड़ दिया जाता है ताकि वह अपनी इच्छा के अनुसार जिधर जाना चाहें, जिधर रहना चाहें रहें।

श्री शाल के अनुसार जम्मू रीजन में राम नगर मांडा, नन्दनी, सरुईसर, मानसर, जसरोटा, गराहना (आरएसपुरा), सुद्धमहादेव आदि स्थानों पर सैंचुरियां स्थापित की गई हैं। किश्तवाड में एक नेशनल पार्क बनाया गया है जहां कई प्रकार के पशु पक्षियों को रखा गया है। वाईल्ड लाईफ सैंचुरी मांडा में मुर्गे, जंगली खरगोश, मोर तथा मोरनियां, बड़े कांटों वाला सेहा, कृत्रिम झील में कुछ बतखें भी हैं। पहले यहां केवल एक ही मादा साम्बर था। कुछ महीने पहले अरनिया क्षेत्र में पाकिस्तान से एक नर साम्बर सीमा के इस पार आ गया जिसे पकड़ कर यहां रखा गया है। इस कार्यलय के परिसार में लाल गर्दन वाला टरकी मुर्गा अपने एक दो साथियों के साथ यहां आने वालों का स्वागत करता प्रतीत होता है। इसी परिसार में दो पिंजरों में दो बंदर हैं। एक तो बड़ा तेज तथा चुस्त है परन्तु दूसरा कुछ नर्म स्वभाव का है। कहते हैं कि यह सिगरेट पीता है और पिछले कुछ महीनों से इस ने शहर में आतंक फैलाया हुआ है था। कई बच्चों को इस ने काटा था। अंत में लोगों के कहने पर इसी विभाग के अधिकारियों ने इसे पकड़ कर यहां पिंजरे में बंद कर दिया है। अब शायद वह अपने किये पर पश्चाताप करने के लिए ही चुप चाप रहता है। साथ ही राजा नाम का एक बाघ है जो स्वास्थ्य की खराबी के कारण लेटा हुआ है। उसे देखने के लिए तथा उसे दवाई आदि देने के लिए प्रतिदिन डाक्टर साहिब यहां आते हैं। फारैस्ट गार्ड सुरेश कुमार ने बताया कि विभाग की ओर से इन पशु पक्षियों की देखभाल तथा उपचार पर उचित ध्यान दिया जाता है। साम्बर तथा हिरणों आदि को खाने के लिए धमन, कत्यांड़, रठेई तथा फलाई के पत्ते दिये जाते हैं। मोरों को बाजार, (कनियां) बारीक चावल, मक्की की बड़ी रोटी, बतखों को धान, खरगोशों को घास तथा पत्ते, बन्दरों को चपातियां तथा ब्रेड, सेही को आलू, फूल गोभी, बन्द गोभी, कड़म तथा बाघों को खाने के लिए मांस दिया जाता है। यहां कुछ ऐसी बकरियों को भी बंद किया गया है जो अवैध रूप से इस क्षेत्र में दाखिल हो जाती

हैं। मांडा के खुले जंगल में लोमड़ियां, गीदड़, मोर, हिरण, गायें, मुर्गे, बाघ आदि अन्य पुश पक्षी भी रहते हैं, यह पशु पक्षी अक्सर पिंजरों में बंद अपने साथियों से मिलने के लिए आते हैं और घंटों एक दूसरे से प्यार करते देखे गये हैं। लोहे की जाली के कारण वे पशु पक्षी अन्दर तो नहीं जा सकते परन्तु जाली के बाहर से ही वे एक दूसरे का मुंह चाटते या चोंच से चोंच मिला कर प्यार करते हैं। पिछले दिनों एक चीता भी मांडा के जंगल में देखा गया था। उसके पैरों के निशान भी यहां के अधिकारियों ने देखे हैं। इस लिये यहां आने वालों को खबरदार किया जाता है कि जानवरों को देखते समय सतर्क रहें। किचलु जी ने कहा कि विभाग पशुपक्षियों की सुरक्षा के लिए प्रयत्नशील है परन्तु इस के लिए आम लोगों का सहयोग अति आवश्यक है। इस सम्बंध में जागरूकता पैदा करने के लिए प्रतिवर्ष 2 अक्तूबर से 8 अक्तूबर तक वाईल्ड लाईफ सप्ताह मनाया जाता है जिस में स्कूलों तथा कालेजों के बच्चों द्वारा घर घर यह संदेश पहुंचाया जाता है कि जंगली पशु पक्षियों की सुरक्षा की जाये जो हमारे समाज तथा सृष्टि के अभिन्न अंग हैं और प्राकृतिक सुन्दरता को निखारने में इन का महत्व पूर्ण योगदान है। उन दिनों स्कूलों तथा कालेजों में वादविवाद करवाये जाते हैं। चित्रकारी प्रतियोगिता का आयोजन भी करवाया जाता है। पोस्ट्रों, रेडियो, टी.वी, समाचार पत्रों तथा अन्य साधनों द्वारा लोगों को यह बताने का यत्न किया जाता है कि वे अपने निजी स्वार्थों के लिए पशु पक्षियों को मारना बंद करें। अपने लाभ के लिए पशु पक्षियों की अपूर्व जातियों का सर्वनाश करने से बाज आएं ताकि प्रकृति की सुन्दरता कायम रहे ।ऐसा देखा गया है कि विदेशों में लोग चिड़िया घरों में पशु पक्षियों को देखने में बड़ी रुचि लेते हैं और उनकी सुरक्षा में भी पूर्ण योगदान देते हैं। हमारे देश के अन्य भागों में भी लोग इन पशु पक्षियों के प्रति विशेष सहानुभूति रखते हैं। जहां तक हमारे राज्य का सम्बंध है लद्दाख के लोग इस ओर अधिक ध्यान देते हैं, कश्मीर के उस से कम परन्तु जम्मू क्षेत्र में इस संबंध में अधिक जागरूकता की आवश्यकता है। अनपढ़ तथा दूरदराज के गांवों में रहने वालों के मुकाबले शहरी इलाकों के पढ़े लिखे लोगों के दिलों में वाईल्ड लाईफ प्रोटेक्शन का महत्व बिठाना शायद अति आवश्यक हैं। इस संबंध में समाज के सभी वर्गों का सहयोग मिलने पर ही प्रकृति के इन सुन्दर उपहारों की सुरक्षा को सुनिश्चित बनाया जा सकता है।

तालाब तिल्लो-जम्मू

जो लोग अपनी मातृ भूमि की रक्षा तथा उसकी उन्नति तथा समृद्धि के लिए काम करते हैं या गरीबों तथा जरूरत मंदों की सहायता करते हैं उनका नाम इतिहास में स्वर्ण अक्षरों से लिखा जाता है। उनके मार्ग दर्शन में युवकों को अपने लक्ष्य की प्राप्ति में सहायता मिलती है। वह लोग जो जनता पर अत्याचार करने वालों के विरुद्ध आवाज उठाते हैं और पीड़ितों को न्याय दिलाने के लिए अपना बलिदान देते हैं उनको लोग कभी नहीं भूल सकते। ऐसे महापुरुषों को देवताओं के समान पूजा जाता है और उनकी याद में स्मारक बनाये जाता हैं। जहां मेलों तथा भण्डारों का आयोजन किया जाता है। ऐसे महापुरुषों का जीवन बड़ा सादा तथा उनके विचार बड़े ऊंचे होते हैं। वे अपने आस-पास किसी को दुखी नहीं देख सकते। ऐसे महापुरुषों को ईश्वर की ओर से लोगों के कष्ट दूर करने के लिए ही संसार में भेजा जाता है। उनके चले जाने पर भी लोगों के दिलों में उनकी याद बनी रहती है। उनका नाम रहती दुनिया तक जीवित रखने के लिए उनके नाम पर शहर तथा कस्बे आबाद किये जाते हैं। यही नहीं उन प्रतिष्ठित व्यक्तियों के नाम पर गलियों तथा महल्लों के नाम रखे जाते हैं। इस प्रकार उनका नाम सब की जबान पर रहता है और वे अमर हो जाते हैं।

पुराने जम्मू शहर के दक्षिण-पश्चिम में एक बड़ा ही प्रसिद्ध क्षेत्र तालाब तिल्लो के नाम से जाना जाता है जिसमें डेढ़ दर्जन से भी अधिक महल्ले तथा 17 गलियां हैं। यह क्षेत्र रणवीर नहर के पास गैस्ट आऊस से शुरु होकर पाटा बोहड़ी तक चला गया है। इन महल्लों में पटेल नगर, हरि सिंह नगर, प्रियदर्शनी लेन, सूर्य नगर, जवाहर नगर, यू एनओ स्ट्रीट, रामा स्ट्रीट, भारत नगर, विशाल नगर, जैन नगर सुन्दर नगर, शिव नगर, पुंछ हाऊस, कबीर कालोनी, हजूरी बाग तीर्थ नगर आदि बड़े प्रसिद्ध हैं। यहां नवआबाद, गोल, तथा पलौड़ा तीन पटवारों की भूमि है।

यहीं एक स्थान पर लगभग 14 कनाल भूमि थी जिसका प्रयोग सब लोग करते थे। आस पास के लोग यहां अपने पशु चराने के लिए आते थे और शाम को वापिस अपने घरों को लौट जाते थे।

रणवीर नहर बनने से अब यहां हरे भरे खेत लहराते दिखाई देते हैं तथा जम्मू शहर की आवश्यकता को पूरा करने के लिए यहां हर प्रकार की सब्जियां भी उगई

जाती हैं जिससे यहां रहने वाले किसानों की आर्थिक स्थिति में बड़ा सुधार हुआ है परन्तु इससे पहले इस क्षेत्र में लोग पानी की एक एक बूंद के लिए तरसते थे। पीने का पानी लाने के लिए उनको मीलों दूर जाना पड़ता था।

इस समय यह क्षेत्र हर लिहाज से उन्नति के शिखर पर है। यहां कई स्कूल तथा कालेज खुल गये हैं इसलिए यहां रहने वाले बच्चों को उच्च शिक्षा प्राप्त करने के लिए दूर नहीं जाना पड़ता। एक सरकारी हायर सैकेंडरी स्कूल के अतिरिक्त कई प्राईवेट स्कूल तथा कालेज खुल जाने से इस क्षेत्र की रौनक बढ़ गई है। कालेजों में जम्मू कश्मीर के अतिरिक्त पड़ोसी राज्यों से भी विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने के लिए यहां आते हैं। कई सरकारी कार्यालयों के खुल जाने से इस क्षेत्र का महत्व बढ़ गया है। बड़े बड़े सरकारी तथा निजी भवन देख कर यह कहना मुश्किल है कि कुछ समय पहले तालाब तिल्लो का यह क्षेत्र एक छोटा सा गांव रहा होगा जहां कुछ कच्चे मकानों तथा गेंहू के खेतों के सिवा कुछ नहीं था। जम्मू शहर तक जाने में भी लोगों को मुश्किल का सामना करना पड़ता था। आमतौर पर लोग पैदल ही आते जाते थे। अब मेटाडोर,टेम्पो आटोरिक्शा तथा बसें चलने से यह सफर कुछ ही मिनटों में तय हो जाता है। जम्मू नगर निगम में होने के कारण इस क्षेत्र में बहुत से विकास कार्य आरम्भ किये गये हैं और सरकार की ओर से यहां रहने वालों को हर प्रकार की सुविधाऐं देने का पूरा यत्न किया जा रहा है। यह क्षेत्र अब व्यापार का केंद्र बन गया है जहां कई बड़े कारखाने तथा छोटे घरेलु उद्योग स्थापित हो चुके हैं।

यह क्षेत्र धर्म निरपेक्षता तथा आपसी भाईचारे की एक मिसाल है जहां हिन्दू, मुस्लमान, सिख तथा ईसाई सदियों से मिलजुल कर एक साथ रहते चले आ रहे हैं। यहां सिखों का प्रसिद्ध गुरूद्वारा टाली साहिब, कई मन्दिर, मस्जिदें तथा पीरों फकीरों की दरगाहें हैं जहां सुबह शाम धर्म प्रेमियों की भीड़ रहती है। इन पवित्र स्थानों पर होने वाले भजन कीर्तन से आप-पास का वातावरण शुद्ध तथा सुहावना रहता है। यह क्षेत्र तालाब तिल्लो के नाम से क्यों प्रसिद्ध हुआ इस विषय में स्थानीय लोगों का कहना है कि पानी की कमी के कारण यहां बहुत कम पैदावार होती थी और लोग बड़ी मुश्किल से जीवन व्यतीत करते थे। उन दिनों तिल्लो शाह नाम का एक ब्राहम्ण राजपुरा मंगोत्रया में रहता था जो सारे क्षेत्र में एक प्रतिष्ठित व्यक्ति के रूप में जाना जाता था। वह धर्म प्रेमी तथा दानी सज्जन था। गरीबों तथा बेसहारा लोगों की सहायता करता था और सब के सुख-दुख में बराबर शरीक होता था।

गरीबों को बिना सूद के उधार भी देता था। एक बार उनके दिल में विचार आया कि क्यों न जनता की भलाई के लिए यहां एक तालाब का निर्माण करवाया जाए और उसके चारों ओर छाया दार वृक्ष लगवाए जाएं ताकि इधर से गुजरने वाले तालाब का पानी पी कर अपनी प्यास बुझाने के साथ-साथ वृक्षों की छाया में बैठ कर आराम कर सकें और पशुओं को भी पानी पीने में आसानी हो सके। उन दिनों कंडी के लोग तालाबों का पानी ही पीते थे। इसलिए तालाब का निर्माण बड़े धर्म तथा पुण्य का कार्य समझा जाता था। थोड़े दिनों के बाद ही तालाब की खुदाई का काम शुरु हो गया। मजदूरों तथा कुम्हारों को काम पर लगा दिया गया। जनता के हित का कार्य समझ कर सब लोग पूरी मेहनत, लगन तथा ईमानदारी से काम पर जुट गये। स्वयं तिल्लो शाह भी मजदूरों की तरह वहां काम करने लगा। काम बहुत देर तक चला और काम की समाप्ति पर तिल्लो शाह बड़ा प्रसन्न हुआ और इस शुभ कार्य में सहयोग के लिए सब का धन्यवाद किया। तिल्लो शाह द्वारा निर्मित तालाब कई सालों तक लोगों की जरूरतों को पूरा करता रहा और लोग अक्सर तालब के किनारों पर लगे छायादार वृक्षों की ठंडी वायु का आनन्द उठाते थे।

तालाब का पानी साफ सुथरा था। लोग भी धार्मिक विचारों के थे और इसी तालाब में स्नान करके मन्दिरों में जाते थे। तालाब में गंदगी फैंकना पाप समझा जाता था। आबादी कम थी और हर स्थान पर कान्टेदार झाड़ियां तथा जंगली वृक्ष उगे हुए थे। शाम होते ही लोग अपने घरों को आ जाते थे क्योंकि रात के समय सांप कीड़ों के कारण उस क्षेत्र में सफर करना खतरे से खाली नहीं होता था। तालाब में खिले कमल के फूल इस क्षेत्र की सुन्दरता में वृद्धि करते थे। स्थानीय लोगों का कहना है कि इस तालाब में स्नान करने से हर प्रकार के शारीरिक कष्टों से मुक्ति मिलती थी। तालाब तिल्लो निवासी श्री राजेन्द्र शर्मा के अनुसार इस तालाब के निर्माण तथा इसके इर्द-गिर्द छायादार वृक्ष तथा कमल के फूल लगवाने तथा आसपास के वातावरण को साफ सुथरा रखने में तिल्लो शाह ने सभी लोगों का सहयोग प्राप्त किय। तालाब के पास ही जम्वाल ब्राहम्ण श्री बशम्बर नाथ जी रहते थे जो बाबा मौज गिरी के समाधि मन्दिर के पुजारी थे। उनके पिता पंडित वासदेव जी तालाब से कमल के फूल लेकर राज दरबार में जाते थे जिन को राज परिवार के सदस्य पूजा के समय देवी देवताओं की मूर्तियों पर चढ़ाते थे। तालाब के आसपास थोड़े से घर थे। मुस्लमान तथा सिख भी यहां रहते थे। शेखों की कोठी थी जहां अब हायर

सैकेंडरी स्कूल है। कोठी के बाहर मस्जिद थी अब जिसकी मरम्मत ओकाफ विभाग ने करवाई है। एक मस्जिद गोलपुली के पास थी है। जहां आज पूछ-ताछ केंद्र है वह वजीरों की कोठी थी। पहले यहां यूएनओ का कार्यालय था। 1947 के बाद इस क्षेत्र का विकास तो हुआ परन्तु तालाब का महत्व कम हो गया और लोगों ने इस में गंदगी फैंकना शुरु कर दिया। यही नहीं कई लोगों ने तालाब पर अधिकार करके इसको बेचना शुर कर दिया। तालाब का क्षेत्रफल दिन प्रतिदिन कम होता गया। सांप तथा अन्य कीड़ों मकोड़ों का वास होने के कारण यह तालाब लोगों के लिए खतरे का कारण बन गया। घरों की गंदगी के कारण तालाब के पानी से बदबू आने लगी। यह देखकर स्थानीय लोगों ने उस समय के राज्यपाल श्री जगमोहन जी से प्रर्थना की कि यहां तालाब के स्थान पर एक पार्क का निर्माण करवाया जाए जहां लोग सैर कर सकें तथा बच्चे खेल सकें। कुछ लोगों के विरोध के बावजूद राज्यपाल ने तालाब के स्थान पर पार्क का निर्माण करवा दिया परन्तु उनके जाने के बाद पार्क के विकास की ओर सम्बंधित विभाग ने उचित ध्यान न दिया जिसके कारण सुंदर पार्क की शोभ कम होती गई।

राजपुरा मंगोत्रयां निवासी श्री जगदीश शर्मा के अनुसार तिल्लो शाह बड़ा दानी व्यक्ति था और बिना किसी भेदभाव के सब की आर्थिक सहायता भी करता था। एक बार काबुल-कंधार से एक पठान व्यापार करने के उद्देश्य से इधर आया। उसे कारोबार में घाटा हो गया या किसी कारण उसके पास धन की कमी हो गई। परदेश में उस की सहायता करने वाला कोई न था। पुराने मिलने जुलने वालों से उस ने सहायता मांगी परन्तु कठिन घड़ी में किसी ने भी उस का साथ नहीं दिया। एक दिन वह मायूस होकर बैठा हुआ था कि उस की पहचान का एक व्यक्ति उसे मिलने के लिए आया और पठान ने भीगी आंखों से उसे अपनी व्यथा सुनाई। वह व्यक्ति क्योंकि इस काबिल नहीं था कि अपने पठान मित्र की आर्थिक सहायता कर सके इस लिए उस ने पठान को सलाह दी कि इस क्षेत्र में एक समृद्ध ब्राहम्ण तिल्लो शाह रहता है। वह इन दिनों एक तालाब का निर्माण करवा रहा है। तुम वहां जाओ। मुझे पूरा विश्वास है कि वह तुम्हारी सहायता अवश्य करेगा। उस व्यक्ति के कहने पर पठान वहां पहुंचा। पठान का विचार था कि तिल्लो शाह कोई बहुत बड़ा सेठ होगा जो स्वयं कुर्सी या गद्दे पर बैठकर मजदूरों से काम करवा रहा होगा। दो चार नौकर उस के आस पास बैठे होंगे। वह उस स्थान पर पहुंचा जहां मजदूर

तालाब की खुदाई कर रहे थे। उसने एक मजदूर से तिल्लो शाह के बारे में पूछा तो पता चला कि तिल्लो शाह भी मजदूरों के साथ गैंती बेलचा लेकर खुदाई में लगा है। पठान सोचने लगा कि उस के साथ किसी ने मज़ाक किया है। इतना बड़ा सेठ मजदूरों की तरह काम क्यों करेगा। इतने सादे व्यक्ति को देखकर पठान हैरान रह गया। तिल्लो शाह ने उसे एक वृक्ष के नीचे बैठने को कहा और थोड़ी देर के बाद हाथ पैर धोकर पठान के पास आ गया। जो खाना तिल्लो शाह ने अपने साथ लाया था वह दोनों ने मिलकर खाया। खाना खाने के बाद तिल्लो शाह ने पठान से आने का कारण पूछा। पठान ने अपनी मजबूरी सुनाई और कुछ रकम उधार के तौर पर मांगी। तिल्लो शाह ने कहा कि मैं तुम्हें ऋण तो दे दूं परन्तु तुम उसे उठा कर कैसे ले जाओगे। फिर कुछ सोच कर बोला, अच्छा तुम मेरा घोड़ा भी ले जा सकते हो। यह कहकर तिल्लो शाह ने बोरी में चांदी के सिक्के भर कर पठान के हवाले कर दिये। ऋण लेकर पठान ने तिल्लो शाह का धन्यवाद किया और विदा हो गया। यहां भुगतान आदि कर के पठान स्वदेश लौटा गया। उस का व्यापार दिन प्रतिदिन बढ़ता गया और कुछ ही समय के बाद पठान अपने क्षेत्र का सबसे अमीर व्यक्ति बन गया। वह तिल्लो शाह की नेकी को नहीं भूल सका परन्तु वायदे के अनुसार शाह का कर्जा लौटाने भी न आ सका। उस ने तिल्लो शाह से उधार ली हुई रकम को एक ओर रख दिया था ताकि समय मिलने पर उसे लौटाया जा सके। जब निश्चित समय पर पठान ऋण लौटाने नहीं आया तो तिल्लो शाह ने स्वयं काबल कंधार जाने का फैसला किया। वहां पहुंच कर उसने पठान के निवास स्थान का पता किया। पठान एक बहुत बड़े महल में रहता था। महल के मुख्य द्वार पर पहरेदार खड़ा था जिस ने तिल्लो शाह को अंदर नहीं जाने दिया। तिल्लो शाह का लबास सादा था। उस ने धोती कुर्ता तथा वास्केट पहनी हुई थी। पहरेदार समझ रहा था कि वह कोई जरूरतमंद है जो पठान से उधार लेने की इच्छा से यहां आया है। तिल्लो शाह ने पहरेदार से कहा कि अंदर जाकर अपने मालिक से कहो कि तिल्लो शाह आया है।

यह संदेश मिलते ही पठान नंगे पांव मुख्य द्वार पर आया। तिल्लो शाह का स्वागत किया और अपनी पगड़ी उसके पैरों पर रख दी और इस बात के लिए क्षमा मांगी कि वह वायदे के अनुसार ऋण लौटाने नहीं आ सका। पठान आदर पूर्वक तिल्लो शाह को अपने महल में ले गया और कहा, शाह जी यह सारी शान शौकत, महल चौबारे आप की ही कृपा से हैं। यदि उस समय आप मेरी सहायता न करते तो न

जाने मेरा क्या हाल होता। जो रकम आप ने मुझे ऋण के रूप में दी थी वह और उस का सूद मैंने अलग रखा हुआ है। आप आए है तो कृपया ले जाएं। मैं आप का आभारी हूंगा। तिल्लो शाह ने उत्तर दिया कि वह असल रकम तो ले जाएंगे परन्तु सूद नहीं लेंगे। हां अपनी खुशी से कुछ देना चाहो तो वह तुम्हारी इच्छा। तिल्लो शाह कुछ दिन पठान के पास ठहरने के बाद घर लौट आए।

राजपुरा निवासी श्री संगारु राम जी के अनुसार तिल्लो शाह राजपुरा में गुरु रविदास मंदिर के आस पास ही कहीं रहते थे। बड़े धार्मिक विचारों के थे और समय पर बिना किसी भेद भाव के हर एक की सहायता करते थे। तिल्लो शाह के विषय में उन्होंने अपने बुजुर्गों से ऐसा सुना है।

आज बेशक तिल्लो शाह हमारे मध्य नहीं परन्तु उनका बनाया हुआ तालाब हमें यहां दिखाई देता है। इस क्षेत्र का नाम तालाब तिल्लो होने के कारण जाने अनजाने में हर व्यक्ति की जबान पर तालाब तथा उस के निर्माता तिल्लो शाह का नाम आ ही जाता है। ऐसा प्रतीत होता है मानो वह हमारे मध्य न होकर भी हमारे अंग संग हैं। पर्यावरण विकास संस्था के अध्यक्ष श्री चंद्रवेद प्रकाश का कहना है काश! इस दौर में भी तिल्लो शाह जैसे महान व्यक्ति आगे आएं और लोगों को वृक्षों की अंधा-धुंध कटाई तथा गंदगी के कारण होने वाले खतरों से आने वाली पीढ़ियों को अवगत कराएं ताकि हर व्यक्ति स्वस्थ जीवन जीने में सफल हो सके। तिल्लो शाह जैसे व्यक्ति आने वाली पीढ़ियों के लिए प्रेरणा स्रोत्र होते हैं जो यही चाहते हैं कि छोटे से जीवन में लोगों की भलाई के अधिक से अधिक काम कर सकें।

गौरी कुंड

जम्मू क्षेत्र में स्थान स्थान पर देवी देवताओं के मन्दिर तथा तीर्थ स्थान हैं जिस कारण इस क्षेत्र में कई ऋषियों मुनियों ने तपस्या की और यह क्षेत्र तपोभूमि के नाम से भी जाना जाने लगा। कई महात्माओं ने यहां के शांत वातावरण, घने जंगलों तथा ऊंचे ऊंचे पहाड़ों के शिखरों पर साधना की और उस परमपिता परमात्मा के दर्शन किये। उन महानपुरुषों के कदम इस धरती पर पड़ने से इस क्षेत्र की महत्ता बढ़ गई। उन के आर्शीवाद से ही यहां के लोगों के दिलों में आपसी प्यार की जोत जली जो सदियों से इस क्षेत्र को रोशनी दे रही है। उन की अपार कृपा से ही इस धरती की शोभा में वृद्धि हुई है। यहां के लोग धार्मिक विचारों के हैं और उनको ईश्वर की महिमा पर पूरी आस्था है। इस क्षेत्र में भगवान शिव तथा शक्ति के मन्दिरों की संख्या अधिक है। भगवान शिव को महादेव, भगवान शंकर, भोलेनाथ, उमापति के अतिरिक्त कई नामों से भक्त याद करते हैं और डुग्गर वासी उन की बड़ी श्रद्धा से पूजा करते हैं। लगभग हर गांव तथा हर घर में भगवान शिव का मन्दिर है जहां भक्त पूजा अर्चना करके अपनी मनोकामनाएं पूर्ण करते हैं। भोलेनाथ श्रद्धालुओं के प्रेम भाव से शीघ्र प्रसन्न हो जाते हैं और उनके कार्य सम्पन्न करने में सहयोग तथा आर्शीवाद देते हैं। शिव मन्दिरों में अधिकतर कहीं शिव लिंग के दर्शन होते हैं परन्तु कई मन्दिरों में शिव लिंगों के अतिरिक्त भगवान शिव, माता पार्वती तथा गणेश जी की सुन्दर प्रतिमाएं भी स्थापित की गई हैं। माता पार्वती को श्रद्धालु गौरी, उमा तथा कई दूसरे नामों से याद करते हैं।

यूं तो जम्मू तथा उस के आस पास कई स्थानों पर भगवान शिव के मन्दिर हैं जहां हर समय भक्तों की भीड़ रहती है परन्तु शुद्धमहादेव का शिव मन्दिर न केवल भारत बल्कि सारे संसार में प्रसिद्ध है। शुद्ध महादेव एक तीर्थस्थान के रूप में भी जाना जाता है। माता वैष्णों देवी के बाद सबसे अधिक यात्री शुद्धमहादेव की यात्रा के लिए यहां आते हैं और भोलेनाथ, मां गौरी तथा गणेश जी के दर्शन करके अपने आप को भाग्यशाली मानते हैं। शुद्धमहादेव जम्मू से लगभग 115 किलोमीटर दूर तहसील चनैनी में बड़े ही सुन्दर तथा प्राकृतिक वातावरण में स्थित है। यहां तक पहुंचने के लिए जम्मू, उधमपुर तथा चनैनी से बसें चलती हैं जो यात्रियों को इस पवित्र स्थान तक ले जाती हैं। सारे रास्ते में चीड़ों तथा देवदारों के ऊंचे-ऊंचे वृक्ष

मानों यात्रियों का स्वागत करते प्रतीत होते हैं। इस क्षेत्र में और भी कई तीर्थस्थान हैं जिन में गौरी कुंड, मानतलाई, गौकर्ण, वैनी संगम आदि शामिल हैं। परन्तु यातायात के साधनों की कमी के कारण यात्री केवल गौरी कुंड, शुद्धमहादेव तथा मानतलाई की यात्रा ही कर पाते हैं।

इस पवित्र स्थान पर यूं तो सारा वर्ष श्रद्धालुओं का आना जाना लगा रहता है परन्तु जयेष्ठ महीने की पूर्णमाशी को जून महीने में यहां तीन दिन का मेला लगता है जिस में जम्मू-कश्मीर के अतिरिक्त उत्तरी भारत के कई भागों जैसे, पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश के ही नहीं बल्कि अन्य भागों के भक्त भी यहां आते हैं। शिवरात्रि, चैत्र चौदश, रथ यात्रा, बैसाखी तथा दूसरे त्यौहारों पर भी यहां खूब रौनक होती है। भगवान शिव का यह मन्दिर ऊंचे स्थान पर बना है। पंद्राह बीस सीढ़ियां चढ़ने के बाद यात्री मन्दिर परिसार में पहुंचते हैं। वहां यात्री भगवान शिव, मां गौरी गणेश जी के दर्शन करने के बाद मन्दिर की पूरी परिक्रमा लेते हैं। प्राचीन काल से ही इस मन्दिर का प्रबंध महन्तों के पास रहा जिन को पीर कहते थे। यह पीर चनैनी के राजाओं की निगरानी में मन्दिर का प्रबंध चलाते थे। चनैनी के जम्मू कश्मीर राज्य में विलय के बाद पीरों का प्रभाव कम हो गया और मन्दिर की देखभाल के लिए कमेटी का गठन किया गया जिसने बाद में सर्व सम्पति से मन्दिर का प्रबंध धर्मार्थ ट्रस्ट के हवाले कर दिया। इस प्राचीन मन्दिर के सामने गुरु गोरख नाथ जी के समय की धूनी जलती आ रही है जहां की भभूत भक्त प्रसाद के रूप में अपने घरों को ले जाते हैं। मन्दिर परिसर में बाबा रूप नाथ जी, बाबा भूपनाथ जी बाबा मिश्री नाथ जी, बाबा गोपाल नाथ जी तथा बाबा धूनी नाथ जी की पवित्र समाधियां हैं नन्दीगण तथा भैरव की मूर्तियों के अतिरिक्त स्थानीय शिल्पियों की बनी हुई देवी देवताओं की मूर्तियां भी मन्दिर परिसार की शोभा को बढ़ाती हैं।

यू तो यहां का चप्पा चप्पा श्रद्धालुओं के लिए आध्यात्मिक शांति का स्रोत है परन्तु शुद्धमहादेव मन्दिर से लगभग तीन किलो मीटर पहले गौरी कुंड का विशेष महत्व है क्योंकि शुद्धमहादेव में भगवान शिव के दर्शन करने से पहले यात्री गौरी कुंड में स्नान करते हैं। बाहर से आने वाले यात्री अपने वाहनों को सड़क के किनारे खड़ा करते हैं और गौरी कुंड की चढ़ाई चढ़ना आरम्भ कर देते हैं। उस समय यात्रियों में बड़ा उत्साह होता है। गौरी कुंड सड़क से कोई आधा किलोमीटर पर स्थित एक प्राचीन तीर्थ है जिस की गिनती शुद्धि क्षेत्र के प्रमुख तीर्थों में होती है।

कुछ यात्री दशाला तथा वैनी संगम के बाद गौरी कुंड में स्नान करते हैं। गौरी कुंड की चढ़ाई चढ़ते समय यात्रियों को ढेड़ी मेड़ी पगंडडियों से गुजरना पड़ता है। सुहावने प्राकृतिक दृश्यों का आनन्द लेते और भगवान भोलेनाथ की जय, मां गौरां की जय बुलाते श्रद्धालु आगे बढ़ते जाते हैं। थकान नाम की कोई चीज उनके चेहरों पर नहीं होती। उस समय उनके दिलों में एक चाह होती है कि जल्दी से जल्दी गौरी कुंड में स्नान करके वहां मन्दिर में बने भगवान शंकर तथा मां गौरां के दर्शन करें।

रास्ते में जंगली झाड़ियों, फूलों की मधुर सुगंध तथा हवा के झौंके यात्रियों को ठंडक पहुंचाते हैं। यात्री उस समय अपने आप को बड़े भाग्यशाली समझते हैं जब वे उस पगडंडी पर पांव रखते हुए आगे बढ़ते हैं जिस पर हजारों साल पहले राजा हिमालय की पुत्री गौरी के पांव पड़े थे और जिस रास्ते पर चल कर मां गौरी कुंड में स्नान करने के लिए आती थीं।

दूर से ही मां गौरी का भव्य मन्दिर देखकर यात्रियों की खुशी का कोई ठिकाना नहीं रहता और वे अधिक जोर से जय जयकार करने लगते हैं। यात्रियों के जयकारों से सारा क्षेत्र गूंज उठता है। रास्ते में कई स्थानों पर पहाड़ों से पानी झरनों के रूप में गिरता दिखाई देता है। 'गौरी कुंड' में एक पत्थर का कुंड बना हुआ है। पहाड़ों का पानी गिरने के कारण यह कुंड सदा भरा रहता है। यात्री यहां से पानी बालटियों में भर कर स्नान करते हैं। इन पहाड़ों से ही पवित्र जल एक पाईप द्वारा स्नान गृह तक भी पहुंचाया गया है। यात्री यहां भी स्नान करते हैं। कहते हैं कि मां गौरी यहीं स्नान करती थी जिस कारण इस कुंड का नाम गौरी कुंड प्रसिद्ध हुआ। मन्दिर के पीछे एक गुफा है जिसे अब बंद कर दिया गया है। गुफा के आरम्भ में एक तंग रास्ता है जिसे गर्भजून कहा जाता है। कहते हैं मां गौरी ने शिव को पाने के लिए इसी गर्भ जून में तपस्या की थी। स्नान करने के बाद यात्री गौरी कुंड का पवित्र जल मन्दिर में स्थापित शिव लिंग पर चढ़ाते और भोलेनाथ की पूजा अर्चना करते हैं। यात्रियों के ठहरने के लिए यहां एक सराय का भी निर्माण किया गया है। गौरी कुंड के महंत जी के प्रयासों तथा सरकार की सहायता से अब सड़क से लेकर गौरी कुंड तक का सारा रास्ता पक्का हो गया है और आवश्यकता अनुसार पक्की सीढ़ियां बना दी गई हैं इस लिए यात्रियों को गौरी कुंड तक पहुंचने में अधिक थकावट महसूस नहीं होती। इस मन्दिर की देखभाल तथा पूजा आदि की जिम्मेदारी अब महंत पूर्ण गिरी जी के शिष्य विजय गिरी जी के सुपुर्द है जो 20 साल से यहां हैं।

महंत विजय गिरी जी के अनुसार माता पार्वती ने कई बार जन्म लिया और हर जन्म में वह भगवान शिव की अर्धांडिगंनी बनी। हर बार माता पार्वती का नया नाम रखा गया। जब वह राजा दक्ष की पुत्री थीं तो उन का नाम पार्वती था। पिता हिमालय तथा माता मीना के घर जन्म लेने पर उनका नाम गौरी रखा गया। इस जन्म में भी गौरी जी ने भगवान शिव की तपस्या की और उनको पति के रूप में पाया। धार्मिक कथाओं के अनुसार भगवान शंकर तथा मां गौरां का विवाह राजा हिमालय की राजधानी मानतलाई में ही सम्पन्न हुआ था।

कहते हैं कि राजा हिमालय की पुत्री गौरी प्रतिदिन स्नान करने के लिए मानतलाई से चल कर गौरी कुंड तक आती थी। यही पानी कुंड से निकल कर मन्दिर के पास बहती एक नदी में जा गिरता है। इस नदी को भी देविका की भांति पवित्र माना गया है क्योंकि इसे प्रति दिन गौरी मां के पवित्र चरणों का स्पर्श मिलता था इस कारण इस नदी का नमा चरणवंति पड़ गया। कुछ लोग इसे गौरी कुंड से निकलने वाली देविका कहते हैं। धार्मिक ग्रंथों के अनुसार जिस क्षेत्र में गौरी पैदा हुई वहां उमा कुंड नाम का तीर्थ भी है जहां स्नान करने तथा रहने से मां गौरी के साक्षात दर्शन होते है। इस कुंड का जल बहुत ठंडा है। त्यौहारों के दिनों में यहां पर भी मेला लग जाता है। सड़क पर मीलों दूर तक बसों, कारों तथा मैटाडोरों की कतार लग जाती है जिस पर नियंत्रण पाना कठिन हो जाता है।

कहते हैं कि मां गौरी प्रति दिन मानतलाई से चलकर गौरी कुंड में स्नान करने आती थी। इसके बाद शुद्धमहादेव के जंगल में स्थापित शिव लिंग की पूजा करती थी। शुद्धमहादेव से दो किलोमीटर की दूरी पर नाड़ा नाम के गांव में सुद्रान्त नाम का एक व्यक्ति रहता था जो न केलव कामी बल्कि अत्याचारी तथा अन्यायी भी था। उसके दुर्व्यवहार से उस क्षेत्र के लोग बड़े दुखी थे। वह प्रतिदिन मां गौरी को शुद्धमहादेव के जंगल में शिवलिंग की पूजा के लिए जाते देखता था। वह अक्सर उनका रास्ता रोक लेता और उनसे अश्लील बातें करता था। उसे अपनी शक्ति पर बड़ा घमंड था। वह अपने बाहुबल से मां गौरी को अपने प्रेमजाल में फांसने का यत्न करने लगा। वह प्रतिदिन मां गौरी से बेढ़ंगी बात करता और गौरी किसी न किसी तरह उससे पीछा छुड़ा कर शिवलिंग की पूजा करने पहुंच जाती।

मां गौरी सुद्रांत के व्यवहार से बहुत दुखी थी जो उनकी शिव आराधना में रुकावट डाल रहा था। आखिर तंग आकर मां गौरी ने शिव पूजा के समय भगवान

से अनाचारी सुद्रांत से अपनी रक्षा के लिए प्रार्थना की।

भगवान शिव का उग्र रूप देखकर सुद्रांत डर गया और भागने का यत्न करने लगा। यूं ही वह भागा भगवान शिव ने त्रिशूल का प्रहार किया जिस से न केवल सुद्रांत बल्कि त्रिशूल के भी टुकड़े हो गये और भगवान शिव उसे जमीन पर तड़पता देख रहे थे जो अन्मित सांस ले रहा था। सुद्रांत ने अपने पापों की क्षमा मांगी और भगवान शिव से कहा कि आप के हाथों मरने का मुझे कुछ तो लाभ अवश्य मिलना चाहिए। भगवान शिव उस मरने वाले प्राणी की विनती न टाल सके और कहा, आने वाले समय में यह स्थान सुद्धमहादेव के नाम से प्रसिद्ध होगा और एक तीर्थ स्थान के रूप में जाना जायेगा। सुद्रांत का नाम पहले और महादेव का नाम बाद में लिया जायेगा। तब से यह स्थान सुद्धमहादेव के नाम से प्रसिद्ध है। इस घटना के बाद इस बियाबान जंगल में जहां पहले केवल गौरी मां तथा कुछ गिने चुने लोग ही शिव लिंग की पूजा को आते थे अन्य लोगों के लिए भी भक्ति का केंद्र बन गया।

शुद्धमहादेव की यात्रा करने वाले यात्रियों की संख्या में दिन प्रतिदिन वृद्धि हो रही है। त्यौहारों तथा तीन दिवसीय मेले पर तो यात्रियों की इतनी भीड़ होती है जिसे नियंत्रण करना मुश्किल हो जाता है। इतना पुराना तीर्थस्थान होने पर भी आज तक गौरी, कुंड, पाप नाशिनी बावली तथा दूसरे स्थानों पर स्त्रियों के स्नान के लिए उचित पर्दे का प्रबंध नहीं किया गया और न ही यात्रियों को यहां रहने तथा विश्राम करने की कोई सुविधा प्रदान की गई है। और भी कई त्रुटियां है जिन की ओर धर्मार्थ ट्रस्ट, सरकार तथा स्थानीय लोग बहुत कम ध्यान दे रहे हैं। आवश्यकता इस बात की है कि प्राथमिकता के आधार पर स्नान करने वाली बावलियों पर स्त्रियों के लिए पर्दे का प्रबंध किया जाये और यात्रियों के ठहरने के लिए सरायें बनाई जायें ताकि यात्रियों को सुद्धमहादेव की यात्रा करते समय कोई असुविधा न हो।

पंजतीर्थी- जम्मू

सूर्यपुत्री तवी नदी के दाऐं तट पर शिवालक की सुन्दर पहाड़ी पर बसा जम्मू शहर अपनी सुन्दरता के लिए विश्व प्रसिद्ध है। यहां के प्राकृतिक दृश्यों का आनन्द लेने के लिए दुनियाभर से यात्री तथा पर्यटक यहां आते हैं। धार्मिक दृष्टि से भी इस शहर को बड़ा महत्व प्राप्त है क्योंकि इस पवित्र नगर में हमें हर स्थान पर विभिन्न देवी देवताओं के मंदिर देखने को मिलते हैं। अनगिनित मंदिरों के कारण जम्मू मन्दिरों का शहर भी कहलाता है। यहां के राजाओं तथा महाराजाओं ने इस नगर की उन्नति तथा समृद्धि की ओर विशेष ध्यान दिया और सभी धर्मों के मानने वालों से एक जैसा व्यवहार करते हुए उनके धार्मिक स्थानों का विकास भी किया।

जम्मू न केवल एक धार्मिक शहर के तौर पर ही प्रसिद्ध है बल्कि ऐतिहासिक दृष्टि से भी महत्वपूर्ण है। जम्मू पर कई विदेशी आक्रमणकारियों ने आक्रमण किये परन्तु वे जम्मू को अपने अधीन करने में असफल रहे। यहां के वीरों ने हर उस विदेशी शक्ति का डट कर मुकाबला किया जिसने जम्मू की एकता को भंग करने का यत्न किया। जम्मू राज्य शताब्दियों से ही एक शांति स्थाल के रूप में जाना जाता है और जब कभी जम्मू के आस पास के राज्यों में लोगों को कोई खतरा महसूस होता था या वहां के शासक उन पर अत्याचार करते थे तो लोग भाग कर जम्मू आ जाते थे। यहां आकर वह अपने आप को सुरक्षित महसूस करते थे। उन दिनों जम्मू दारउल अमन के नाम से भी प्रसिद्ध था।

जम्मू का पुराना नाम क्या था इस विषय में कोई जानकारी नहीं परन्तु धार्मिक ग्रंथों में इस का एक पवित्र क्षेत्र के रूप में वर्णन मिलता है। सब से पहले एक प्रसिद्ध इतिहासकार फरिशता ने दूसरी शताब्दी में जम्मू को उस के वर्तमान नाम से अपनी पुस्तक में पेश किया। राजदर्शनी के एक लेख के अनुसार जम्मू की स्थापना ईसा से 3650 साल पहले बताई जाती है।

जम्मू शहर को कब और किस ने आबाद किया इस बारे में इतिहासकारों की अलग अलग राय है परन्तु इस बात पर सभी सहमत हैं कि जिस स्थान पर जम्मू आबाद है वहां कभी एक जंगल हुआ करता था और कुछ गिने चुने कच्चे घर थे। आम विचार जिस पर अधिक लोगों का विश्वास है वह यह है कि जम्मू को राजा जाम्बूलोचन ने बसाया था जो बाहु राज्य के शासक बाहुलोचन का भाई था। राजा

रणजीत देव के शासन काल में जम्मू केवल एक वर्गमील क्षेत्र में फैला हुआ था जो 1775 ई. में साढ़े तीन वर्ग मील तक फैल गया। आज से लगभग साठ साल पहले तक जम्मू गुमट से लेकर वर्तमान रेडियो स्टेशन के पास स्थित राजमहलों तक ही था। गुमट के नीचे बहुत कम घर थे। आबादी बहुत कम थी और शहर साफ सुथरा था। पश्चिम में बी.सी रोड और पूर्व में पीरखोह शिव मन्दिर तक ही जम्मू था।

उन दिनों ज्यादा रौनक तथा चहल पहल दरबार गढ़ तथा उस के आस पास के महल्लों में ही होती थी जिन में पक्की ढक्की, पक्का डंगा; चौक चबूतरा, अप्पर बाजार तथा महल्ला पंजतीर्थी उल्लेखनीय हैं।

जिस प्रकार किसी शहर, कस्बे या गांव का नाम किसी व्यक्ति विशेष के नाम पर रखा जाता है उसी प्रकार जम्मू शहर के महल्लों तथा गलियों के नाम भी किसी मन्दिर, तीर्थ या किसी प्रसिद्ध महात्मा या फकीर के नाम पर रखे गए हैं। जैसे जहां पीरमिटठा की दरगाह है उस महल्ले को पीरमिटठा का नाम दिया गया, जहां पीर लखदाता जी रहते थे वह क्षेत्र लखदाता बाजार कहलाया, रघुनाथ मन्दिर के साथ वाले बाजार को रघुनाथ बाजार तथा उसके साथ वाले महल्ले को रघुनाथ पुरा कहते हैं। जहां सराजों की दुकानें थीं। वह बाज़ार ढक्की सराजां के नाम से और जहां जुलाहे रहते थे वह क्षेत्र जुलाहका महल्ला के नाम से प्रसिद्ध हो गया और जहां जैनियों की अधिक दुकानें थीं वह जैन बाजार कहलाया। इसी प्रकार अधिक मंदिर होने के कारण दरबार गढ़ (मुबारक मंडी) की उत्तरी डयोडी का ऊपरी महल्ला पंजतीर्थी कहलाता है।

महल्ला पंजतीर्थी में क्योंकि राजाओं के दीवान, वजीर तथा बड़े-बड़े अधिकारी रहते थे इसलिए उस समय की छोटी ईंट तथा चूने से बनी हुई बड़ी-बड़ी हवेलियां आज भी देखने को मिलती हैं। इन क्षेत्रों में राजाओं का आना जाना रहता था इसलिए इन की सफाई पर विशेष ध्यान दिया जाता था। शहर के अन्य भागों की तुलना में महल्ला पंजतीर्थी अधिक साफ सुथरा है जिस कारण यहां का वातावरण भी शुद्ध है। माता वैष्णों देवी की यात्रा पर आने वाले यात्री पंजतीर्थी स्थित मन्दिरों में स्थापित देवी देवताओं की मूर्तियों के दर्शन अवश्य करते हैं। इस समय धौंथली ढक्की के आस पास का क्षेत्र भी पंजतीर्थी का ही भाग प्रतीत होता है। क्षेत्र में पांच प्रसिद्ध मंदिरों के कारण ही शायद यह महल्ला पंजतीर्थी के नाम से जाना जाता है। जिस समय जम्मू में पानी के नलके नहीं थे उन दिनों लोग प्रातः तवी नदी पर स्नान

करने के लिए जाते थे और वापसी पर धौंथली तथा पंजतीर्थी की ढक्कियों पर बने मंदिरों में देवी देवताओं की पूजा अर्चना करने के बाद ही अपना प्रतिदिन का कामकाज शुरु करते थे।

दरबार गढ़ जो मंडी मुबारक के नाम से भी प्रसिद्ध है कि उत्तरी डयोड़ी जिस का नाम निशान अब मिट चुका है वहां से बाहर निकलते ही महल्ला पंजतीर्थी आरंभ हो जाता है। दांई ओर बाबा बनारसी दास जी का ठाकुर द्वारा है। कहते हैं कि यह ठाकुर द्वारा दरबार गढ़ के महलों से पहले का है। इस मंदिर में माता सीता, भगवान श्री राम, लक्ष्मण जी तथा उन की धर्मपत्नी उर्मिला जी की सुंदर मूर्तियां स्थापित हैं। मूर्तियों के नीचे बड़ी संख्या में शालग्राम हैं जिनके मध्य भगवान विष्णु जी तथा श्री राधाकृष्ण जी की छोटी मूर्तियां हैं। मन्दिर की भीतरी दीवारों पर भी देवी देवताओं के चित्र लगे हैं। इस प्राचीन मन्दिर की बाईं ओर शिवलिंग की स्थापना की गई है जिस के पास ही श्री गणेश जी की सुंदर मूर्ति तथा सामने नन्दी गण जी की मूर्ति है। मन्दिर परिसर में दुर्गा माता का मन्दिर भी है जहां श्रद्धालु भजन कीर्तन करते हैं। समय समय पर यहां सतसंग का आयोजन भी किया जाता है। त्यौहारों के अवसर पर इन मन्दिरों को बहुत ही सुंदर ढंग से सजाया जाता है। प्राचीन मन्दिर के सामने धर्मराज जी तथा चित्र गुप्त जी का मन्दिर है। पिछले दो तीन सालों से मन्दिर की देख रेख तथा इस का प्रबंध महंत ब्रहम्चारी जी चला रहे हैं। इस प्राचीन ठाकुर द्वारे की विशेष बात यह है कि यहां माता सीता, भगवान राम तथा लक्ष्मण जी के साथ उनकी पत्नी उर्मिला जी की मुर्ति भी है जो अन्य मन्दिरों में देखने को शायद ही कहीं मिलती हो और जम्मू में भी शायद यही एकमात्र मन्दिर है जिस में उर्मिला जी की मूर्ति की स्थापना की गई है।

इसी महल्ले में दूसरा बड़ा मन्दिर लक्ष्मी नारायण जी का है। यह दो मंजिला मन्दिर है। निचली मंजिल में साधु महात्माओं के ठहरने के लिए कमरे बने हैं और दूसरी मंजिल पर लक्ष्मी नारायण जी का मन्दिर है। मन्दिर के सामने महंत दामोदर दास जी की समाधि है। इस मन्दिर का शिखर बहुत ऊंचा है जिस पर सुंदर कलश लगे हुए हैं। शिखर के नीचे चारों ओर छोटे छोटे कलश मन्दिर की सुंदरता को चार चांद लगाते हैं। इस मन्दिर की विशेषता यह है कि यहां स्थापित मूर्तियों में माता लक्ष्मी जी को भगवान विष्णु जी की गोद में बैठे दिखाया गया है। बाहर से आने वाले यात्रियों का कहना है कि लक्ष्मी नारायण जी की ऐसी अद्भुत मूर्ति उन्होंने

और कहीं नहीं देखी। दोनों मूर्तियां बड़ी सुंदर तथा आकर्षक हैं। मन्दिर का भीतरी वातावरण बड़ा शांत है। भगवान विष्णु जी की दाईं ओर सूर्य भगवान की मूर्ति है। साथ ही गणेश जी की मूर्ति की स्थापना की गई है। बड़ी मूर्तियों के नीचे 111 शालग्राम हैं जिन के मध्य भगवान श्री कृष्ण, माता महाकाली और श्री राधाकृष्ण जी की मूर्तियां हैं। यहीं शालग्रामों के मध्य दो स्थानों पर पवित्र खड़ाओं के पास तीन श्याम रंग की भगवान नृसिंह की पिंडियां हैं जो नृसिंह मन्दिर घगवाल से लाई गई हैं। मन्दिर के मुख्य द्वार के सामने बाहर दीवार के साथ भगवान राम, माता सीता तथा लक्ष्मण जी की सुंदर मूर्तियों के साथ हनुमान जी की मूर्ति भी स्थापित है। एक ओर शिव लिंग की स्थापना की गई है। मन्दिर के पुजारी श्री सुरेश शर्मा के अनुसार यह मन्दिर महाराजा रणवीर सिंह जी द्वारा निर्मित करवाया गया था।

मन्दिर के आंगन में एक कुआं है जिस पर अब लैंटर डाल दिया गया है। यह कुआं बहुत गहरा है। जिस समय जम्मू में नलके नहीं थे उस समय श्रद्धालु इसी कुएं के जल से स्नान करते थे और पूजा के लिए भी इसी जल को प्रयोग में लाते थे। मन्दिर के सामने महंत जी का निवास स्थान है। मन्दिर का निर्माण करवाने के बाद महाराजा रणवीर सिंह ने इस की पूजा तथा प्रबंध की जिम्मेदारी महंत दामोदर दास जी को सौंप दी थी जो 90 साल की आयु में स्वर्ग सिधारे। उनके बाद महंत बलदेव दास जी इस गद्दी पर विराजमान हुए। उनके स्वर्ग वास होने पर महंत राम रत्न दास जी और अब उन के पुत्र महंत रमीदास विरागी जी मन्दिर का प्रबंध देख रहे हैं। यह विरागी महंतों की गद्दी है और इस समय जम्मू कश्मीर में इस साम्प्रदाय के मुख्यिा नृसिंह मन्दिर घगवाल के महंत श्री नृसिंह दास जी हैं। यहां से कुछ आगे सड़क पर ही एक छोटा सा चौगान है यहां एक बड़ा सा वट वृक्ष है। यहां कुछ समय पहले तक सीटी बस तथा मैटाडोर स्टैंड था। शुरु शुरु में जब सीटी बस पंजतीर्थी बस स्टैंड से गांधी नगर तक चलना शुरु हुई तो यहां से गांधी नगर का किराया मात्र 25 पैसे था। सात सीटों वाले टैम्पो का किराया भी 25 पैसे ही था। महाराजा हरि सिंह के बाद दरबार गढ़ के महलों पर सरकार का अधिकार हो गया। महाराजा मुम्बई चले गए और महलों में सरकारी कार्यालयों के कारण डोगरा राजाओं के सुंदर महलों की तबाही शुरु हो गई और पिछले 57 सालों में यह महल एक एक कर के गिरते गए या आग लगने के कारण इन का अधिकतर भाग जल कर राख हो गया। सरकार के अधिकार में आने के बाद इन महलों के रख रखाव

पर बहुत कम ध्यान दिया गया। सरकारी दफ्तरों तथा अदालतों के कारण पंजतीर्थी बाजार में हर समय चहल रहती है। इसी छोटे से चौगान के उत्तर में काशी वाले पंडितों का मन्दिर है जहां श्री राधा कृष्ण जी की मूर्तियां स्थापित हैं। क्योंकि मन्दिर की पूजा के लिए पं.बिल्लू जी को नियुक्त किया गया था इस लिए यह मन्दिर बिल्लू मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध है।

मन्दिर के मुख्य द्वार से प्रवेश करते ही दाई ओर के.सी शर्मा के पिता श्री मोहिन्द्र नाथ जी तथा बाईं ओर उनके दादा जी की सुन्दर मूर्तियां हैं । इस परिवार के बुजुर्ग बड़े विद्ववान तथा धर्म प्रेमी थे जिन्होंने इस मन्दिर का निर्माण करवाया था और समय समय पर यहां भजन, कीर्तन हवन यज्ञों तथा भण्डारों का आयोजन किया करते थे। मन्दिर में प्रवेश करते ही दाई ओर शिव परिवार तथा बाई ओर दुर्गा माता की मूर्ति दिखाई देती है जिनको सुन्दर वस्त्रों तथा आभूषणों से सजाया गया है। गर्भ ग्रह में श्री राधा कृष्ण जी की मूर्ति की स्थापना की गई है परिक्रमा की भीतरी दीवारों तथा छत पर नक्शो निगारी की गई है और धार्मिक कथाओं पर आधारित चित्र बने हुए हैं। इस मन्दिर को बने हुए लगभग 150 साल हो चुके हैं परन्तु दीवारों तथा छतों पर बनाए गए चित्रों की सुंदरता तथा आकर्षण में कोई कमी नहीं आई। इस समय मन्दिर का प्रबंध शर्मा परिवार के पास ही है और वही यहां पूजा के लिए पुजारी नियुक्त करते हैं। पंजतीर्थी का यह मन्दिर इस लिए भी प्रसिद्ध है क्योंकि नवरात्रों में यहां राम लीला होती है जिसे देखने के लिए शहर के सभी भागों से लोग आते है।

रघुनाथ जी का एक मन्दिर रेडियो स्टेशन के सामने है जो सरदारों के मन्दिर के नाम से भी जाना जाता है। इस मन्दिर के मुख्यद्वार की दाई तथा बाई ओर द्वारपालों की मुर्तियां हैं और गर्भ गृह में भगवान राम, माता सीता तथा लक्ष्मण जी की मूर्तियों की स्थापना की गई है। मन्दिर को सरदार अतर सिंह पुरी ने महाराजा रणवीर सिंह के शासन काल में बनवाया था। इस पुरी परिवार के बुजुर्गों को महाराजा की ओर से सरदार की उपाधि से सम्मानित किया गया था। मन्दिर के सामने सड़क के साथ लगने वाली दीवार के साथ अंदर की ओर एक मन्दिर में हनुमान जी की मूर्ति तथा दूसरे में शिव लिंग की स्थापना की गई है ओर दूसरी ओर तीन छोटे छोटे मन्दिरों में गणेश जी, सूर्य भगवान तथा महालक्ष्मी जी की मूर्तियां हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इन पांचों मन्दिरों का निर्माण बहुत बाद में किया गया है। मन्दिर के रख रखाव तथा

प्रबंध को सुचारू रुप से चलाने तथा मन्दिर परिसर के विकास तथा सफाई की ओर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है ताकि अधिक से अधिक श्रद्धालु यहां आकर भगवान की पूजा कर सकें। यहां से थोड़ी दूर नीचे धौंथली ढक्की में एक और प्राचीन मन्दिर श्री बलदेव जी का है। श्री बलदेव जी भगवान श्री कृष्ण के बड़े भाई थे। इस मन्दिर को दाऊ जी का मन्दिर भी कहते है। इस मन्दिर का प्रबंध धर्मार्थ ट्रस्ट के पास है। पूजा के लिए पं. आर.के खजूरिया को नियुक्त किया गया है जो किसी कारण वश पूरा समय यहां नहीं दे पाते। वह सुबह-शाम केवल पूजा करने के लिए ही यहां आते हैं और पूजा करने के बाद ताला लगाकर अपने निवास स्थान रघुनाथ मन्दिर चले जाते हैं। मन्दिर दिन में लगभग आठ घंटे बंद रहता है जिस से बाहर से आने वाले श्रद्धालुओं को श्री बलदेव जी के दर्शन करने में कठिनाई होती है। इस मन्दिर में श्री बलदेव जी तथा उन की पत्नी खेती देवी की सुंदर मूर्तियां हैं। जम्मू में दाऊ जी का शायद यही एकमात्र मन्दिर है। मन्दिर के बाहर हनुमान जी की सुन्दर मूर्ति है।

इसी मन्दिर के साथ एक प्राचीन मन्दिर माता चिन्तपूर्णी जी का है। यह मन्दिर भी धर्मार्थ ट्रस्ट के अधीन है। महल्ला पंजतीर्थी में श्री विश्वनाथ मन्दिर तथा माता जलफा के अतिरिक्त कई छोटे बड़े मन्दिर हैं जिन में विभिन्न देवी देवताओं की मूर्तियों की स्थापना की गई है। यह भी हो सकता है कि इस क्षेत्र में पांच तीर्थ होते होंगे या फिर इस क्षेत्र के पांच मुख्य मन्दिरों को तीर्थ मानकर ही इस महल्ले का नाम पंजतीर्थी रखा गया है। कुछ भी हो यह महल्ला जम्मू शहर का बहुत महत्वपूर्ण महल्ला है और यह उतना ही पुराना है जितना जम्मू शहर। यहां के रहने वाले लोग धर्म प्रेमी तथा देवी देवताओं पर पूर्ण आस्था रखने वाले हैं।

बावे का तालाब

जम्मू की पवित्र देव भूमि पर स्थान-स्थान पर देवी देवताओं के मन्दिर हैं जहां सुबह शाम श्रद्धालुओं की भीड़ रहती है। इस के अतिरिक्त यहां कई तीर्थस्थान भी हैं जिन की यात्रा करने के लिए दूर दूर से लोग आते हैं और आध्यात्मिक शान्ति प्राप्त कर के अपना जीवन सफल बनाते हैं। इस पवित्र धरती पर बहने वाली नदियों का जल भी साफ सुथरा तथा मीठा है। यहां के तालाबों का जल बड़ा चमत्कारी है जिस से कई प्रकार के रोगों का उपचार होता हैं। इन पवित्र तालाबों में स्नान कर के श्रदालु अपने आप को बड़े भाग्यशाली समझते हैं। इससे शारीरिक रोगों से मुक्ति मिलती है। श्रद्धालु इन पवित्र तालाबों का जल बोतलों में भर कर अपने घरों को ले जाते हैं और संकट के समय उस का प्रयोग करते हैं। इस जल को वे चरणामृत के रूप में भी ग्रहण करते हैं। हर देवस्थान या तीर्थ स्थान के पास कोई नदी बहती है या वहां तालाब बनवाया गया है ताकि भक्त वहां स्नान करके अपनी श्रद्धा अनुसार देवी देवताओं की पूजा कर सकें।

ऐसा ही एक पवित्र तालाब जम्मू-अखनूर सड़क की बाईं ओर जम्मू से लगभग 18 किलो मीटर की दूरी पर है जो "बावे का तालाब" के नाम से प्रसिद्ध है। यह तालाब कटड़ा के पास एक गांव अगहार के रहने वाले बावा जित्तो ने बनवाया था जो कोई 550 साल पहले अपना गांव छोड़ कर इस क्षेत्र में आए थे। पहले तो यह तालाब बहुत छोटा था जिस का प्रयोग बावा जित्तो स्नान करने तथा अपने पशुओं को पानी पिलाने के लिए करते थे परन्तु समय समय पर श्रद्धालु यहां से मिटटी (शक्कर) बाहर निकलवाते रहते हैं जिस के कारण अब यह तालाब बहुत बड़ा हो गया है। प्रभु कृपा से इस तालाब का पानी कभी नहीं सूखता। बावा जित्तो का जन्म अगहार में हुआ था। पिता का नाम रूपचंद तथा माता का नाम जोजलां था। मां की बहन का नाम जोजां जो बावा जित्तो की चाची भी थी। उस के सात बेटे थे जो जित्तो की जान के दुश्मन थे। बावा जित्तो का विवाह माया से हुआ जो एक कन्या को जन्म देने के बाद स्वर्ग सिधार गई। जित्तो माता वैष्णो देवी का भगत था। जोजां के पुत्रों ने जित्तो को मारने का कई बार यत्न किया परन्तु भगवती माता वैष्णो देवी सदा उस की रक्षा करती रही। अगहार में अपने सम्बंधियों के व्यवहार से तंग आ कर बावा जित्तो अपनी बेटी बुआ कौड़ी के साथ पंजोड़ गांव में आ गया और अपने मित्र रोल्हू

तथा घग्गी की सहायता से अम्ब घरोटा के जागीर दार मेहता बीर सिंह से खेती के लिए कुछ जमीन ली। बीर सिंह ने पैदावार का चौथा भाग लेना मान लिया परन्तु फसल की कटाई के बाद उस का दिल बेईमान हो गया और उसने आधा भाग लेने की जिद्द की। आपसी तकरार के बाद बावा जित्तो ने इसी स्थान पर अपने पेट में कटारा घोंप कर आत्म हत्या कर ली थी। इस लिए ही यह स्थान बावे का तालाब या बावे का जाड़ के नाम से प्रसिद्ध है। क्यों कि बावा जित्तो को खेती के लिए यही जमीन मिली थी इस लिए उसने जमीन की देख भाल के लिए यहीं एक झौंपड़ी बना ली थी। जित्तो ने अपने साथी ईसो से मिल कर छोटा सा तालाब बनाया था ताकि उस में वर्षा का पानी इकट्ठा हो सके और आवश्यकता पड़ने पर प्रयोग में लाया जा सके। उन दिनों खाना बनाने, कपड़े धोने तथा पीने के लिए तालाबों का पानी ही प्रयोग किया जाता था। लोग तालाबों में ही पशुओं को नहलाते और यही पानी उनको पिलाते थे। तालाब के आसपास कई कनाल जमीन है जहां अब सैंकड़ों छोटी छोटी देहरियां बनी हैं। तालाब में स्नान करने से संतान का सुख प्राप्त होता है। शारीरिक कष्ट दूर होते हैं। बच्चों को सोकड़े की बिमारी से मुक्ति मिलती है। तालाब में स्नान करने के बाद श्रद्धालु मन्दिर में बावा जित्तो तथा बुआ कौड़ी के दरबार में उपस्थित होकर उन का अर्शीवाद प्राप्त करते हैं। इसी जाड़ में विभिन्न जातियों के लोगों ने कुछ मन्दिरों का निर्माण भी किया है परन्तु सब से बड़ा मन्दिर तालाब के पास ही है जहां बावा जित्तो तथा बुआ कौड़ी के मोहरों की स्थापना की गई है। इस मन्दिर का निर्माण बोरी वाले बावा ने 2007ई में करवाया था। वह बड़े ईश्वर भगत थे और उन्होंने जम्मू तथा उस के आस पास लोगों के सहयोग से कई मन्दिर बनवाये। वह अपने शरीर पर कपड़ों के स्थान पर बोरी का बना हुआ चोला पहनते थे इस लिए लोगों में बोरी वाले बाबा के नाम से प्रसिद्ध थे।

मन्दिर बनने से पहले यहां केवल एक छोटी सी देहरी थी। कहते हैं जिस स्थान पर मन्दिर का निर्माण किया गया है यहीं बावा जित्तो ने अपने खेत से पैदा होने वाले अनाज का ढ़ेर लगाया था जिस पर बैठकर उसने अपने प्राण त्यागे थे। पास ही बावा जित्तो की झौंपड़ी थी। उस स्थान पर एक प्राचीन पीपल का वृक्ष था जो अब सुख गया है। यह जमीन अब गुढ़ा सिंगू के पास ठंगर में है और उस मन्दिर के पुजारी बनोत्रा ब्राहम्ण हैं। बीर सिंह ने अनाज के ढ़ेर के पास आ कर अपने कारिंदों को आधा अनाज बोरियों में भरने के लिए कहा। उस समय बावा जित्तो स्नान करने नदी

पर गया हुआ था। वापसी पर चाची जोजां उसे चील के रूप में मिली जिस ने बावा जित्तो को कहा, ''तुम तो लुट गये, बीर सिंह तुम्हारी मेहनत की कमाई बोरियों में भर कर ले जा रहा है और लोगों में भी बांट रहा है। उसने मुझे भी पाई (अनाज नापने का बरतन) भर कर अनाज दिया है जब कि बाकी लोगों को थोड़ा थोड़ा दे रहा है।

होरना को दी लप पड़ोपी।

चाची जोजां को भर के पाई ।।

जित्तो चाची के पास गेहूं देखकर पहचान गया कि यह तो उसी के खेत का है। उसे बहुत गुस्सा आया। चेहरे का रंग लाल हो गया। वह खेत की ओर भागा और वहां जाते ही कारिंदों से अनाज नापने वाला बरतन छीन लिया और उसे दूर फैंक दिया। बरतन के चार टुकड़े हो गए। जहां यह टुकड़े पड़े वहां शीशम के चार वृक्ष उगे। वह वृक्ष अब नहीं परन्तु वह स्थान अब भी है।

बावा जित्तो अपनी बेटी, बैलों की जोड़ी तथा छोटे-मोटे सामान के साथ जब पंजोड़ पहुंचे तो अपने मित्र रोल्हू के घर डेरा जमाया। रोल्हू की पत्नी ज्यूनी ने बुआ कौड़ी को जो माता वैष्णों का रूप थी बेटी जैसा प्यार दिया। बुआ कौड़ी ने घर में चम्बे का वृक्ष लगाया हुआ था। जब बावा जित्तो ने अनाज के ढ़ेर के पास बीर सिंह के अन्याय के विरुद्ध आवाज उठाई तो उस के एक कारिन्दे ने बावा जित्तो को चमाड़ी (बांस का बड़ा डंडा) से टोह कराई। जित्तो यह अनादर सहन न कर सका। वह अपने मित्र के घर गया और उस की पत्नी से कहा, ''भरजाई, मुझे कटार दो मै अपना आप समाप्त कर दूंगा परन्तु बीर सिंह को आधा अनाज नहीं दूंगा।'' ज्यूनी ने कहा-

''तूं की मरना पहाड़ी ब्राहम्णा पहाड़ा दी गै मत आई''

अर्थात तुम क्यों मरते हो। आखिर पहाड़ी ही निकले। सूझ बूझ से काम लो और मरने का विचार दिल से निकाल दो। परन्तु बावा जित्तो न माना। कटारा ले कर अनाज के ढ़ेर पर बैठ गया और अपने शरीर के हिस्सों को काटना शुरु कर दिया।

''रूखी कनक नईं खायां मैहत्ता। तुगी दिन्ना मास रलाई।''

अर्थात, मैहत्ता तुझे मैं यह गेंहू नहीं खाने दूंगा। यदि खाना ही है तो इस में अपना मांस मिलाकर दूंगा। बावा जित्तों की मृत्यु के बाद सारा अनाज खून से लथपथ हो गया। बुआ कौड़ी अपनी गुड़ियों के साथ खेल रही थी। अचानक उस की नजर

चम्बे के वृक्ष पर पड़ी जो मुरझा गया था। बुआ परेशान हो गई उसने सोचा बापू पर जरूर कोई मुसीबत आई है। उस पर जरूर कोई अनहोनी बीत गई है। वह यही सोच रही थी कि बावा जित्तों का सहयोगी ईसो उसके पास पहुंचा और बावा जित्तो की मृत्यु की सूचना दी। वह रोती चिल्लाती ईसो के साथ वहां पहुंची और अपने बापू के साथ चिता में बैठ कर भस्म हो गई। फिर वे दोनों स्नान के लिए हरिद्वार चले गये। वापसी पर लुधियाना में उन्होंने अपने एक भक्त के घर शरण मांगी। दोनों के शरीर पर कपड़े नहीं थे। भक्त ने बावा जी को लंगोट तथा बुआ जी को धोती दी। बावा जित्तो ने भक्त को कहा कि बीर सिंह को संदेश भेजो कि हम आ रहे हैं। उस ने हमारे साथ अन्याय किया है और जितना कष्ट हमें दिया है उस से भी अधिक कष्ट अब उसे सहना होगा। बीर सिंह यह संदेश सुन कर घबरा गया। उस ने अपने कारिन्दों को आदेश दिया कि बावा जित्तो तथा बुआ कौड़ी जब भी यहां आऐं उन्हें जीवित जला दिया जाये। उस ने यह शब्द मुंह से निकाले ही थे कि वह चिल्ला उठा, ''मैं मर गया, जल गया, अरे कोई है मुझे बचाओ-मैं मर गया।'' उस समय बुआ तथा बावा भक्त के साथ थे।

दोनों अवतार रूप धारण करके अपने पहले स्थान पर आ गये, और तब यह स्थान गृहण किया। मेले के दिनों में जो श्रद्धाजु झिड़ी जाते समय या झिड़ी से वापसी पर इस तालाब में नहा कर बावा तथा बुआ जी के इस मन्दिर में शीश नहीं झुकाते उन की यात्रा अधूरी समझी जाती है।

बावा जित्तो की मृत्यु के बाद जागीदार ने यह सारी जमीन बावा जी के नाम पर छोड़ दी थी उस के बाद किसी ने भी इस जमीन पर हल नहीं चलाई। यहां के बुजुर्गों का कहना है कि जब रणवीर नहर में पानी छोड़ा गया तो नहर का पानी यहां आ कर अपने आप टूट जाता और आगे जाने की बजाए नहर के किनारों को तोड़ कर इधर उधर बह जाता था। किसी को पता नहीं चल रहा था कि क्या हो रहा है। किसी ने सम्बंधित अधिकारियों से कहा कि यहां से नहर बावा जित्तो के जाड़ से गुजरती है इस लिए जब तक उन की आज्ञा न होगी पानी आगे नहीं जा सकता। बावा तथा बुआ जी के मन्दिर में प्रार्थन की गई। अधिकारियों ने कहा कि नहर का पानी तालाब को भी दिया जायेगा। बावा जित्तो ने उन की प्रार्थना स्वीकार कर ली और पानी नहर से आगे चलना शुरु हो गया। आज भी यदि किसी कारण तालाब का पानी कम हो जाता है तो नहर का पानी तालाब में डाला जाता है।

इस स्थान पर यूं तो हर रविवार को श्रद्धालुओं की भीड़ रहती है परन्तु कार्तिक महीने की पूर्णमाशी को जब झिड़ी में सात दिन का मेला लगता है तो इस स्थान पर भी बड़ी रौनक होती है। श्रद्धालु इस तालाब में स्नान करने के बाद मन्दिर में बावा जित्तो तथा बुआ कौड़ी के मोहरों की पूजा करके झिड़ी जाते हैं जहां बावा जित्तो तथा बुआ कौड़ी के प्राचीन मन्दिर हैं। जम्मू प्रान्त का यह सब से बड़ा मेला है जिस में जम्मू कश्मीर के अतिरिक्त पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, दिल्ली तथा भारत के अन्य भागों से लोग यहां आते हैं और बावा तथा बुआ जी का आर्शीवाद प्राप्त करते हैं।

चन्द्रभागा तट के दर्शनीय स्थल

जम्मू क्षेत्र में चंद्र–भागा नदी का बड़ा महत्त्व है क्योंकि इस पवित्र नदी के किनारे स्थित पहाड़ों, जंगलों, गुफाओं तथा यहां के प्राकृतिक तथा शांत वातावरण में साधु संतों तथा ऋषियों मुनियों ने ईश्वर की आराधना की है। यह नदी 'चंद्र' तथा 'भागा' दो नदियों के मेल से बनी है। एक लम्बा पहाड़ी सफर तय करने के बाद जब यह नदी अखनूर पहुंचती है तो इस की गति धीमी हो जाती है। चंद्रभागा के दाएं किनारे पर बसा अखनूर दूर से ही हर व्यक्ति को अपनी ओर अकर्षित करता है। चंद्रभागा के तट पर निर्मित मन्दिरों तथा अन्य धार्मिक स्थानों को देखने के लिए प्रतिदिन बड़ी संख्या में लोग आते हैं। इस पवित्र नदी के तट पर बने दर्शनीय स्थानों में गुरुद्वारा बावा सुंदर सिंह, पांडव गुफा, जिया पोता घाट, किला, दुर्गा मन्दिर, हरि मन्दिर, वृद्ध आश्रम तथा उसके सामने सीमेंट से बनी बड़ी किश्ती अखनूर वासियों तथा अन्य सैलानियों के लिए आकर्षक का केंद्र है जिन का वर्णन इस प्रकार है।

'गुरुद्वारा बाबा सुन्दर सिंह' आज से 110 साल पहले बाबा सुंदर सिंह जी ने चंद्रभागा नदी के किनारे इसी स्थान पर ईश्वर की आराधना की थी। उनकी याद में ही यहां गुरूद्वारे का निर्माण किया गया है। प्रतिदिन सुबह शाम यहां शब्द कीर्तन तथा गुरुवाणी का पाठ होता है जिसको सुनकर श्रद्धालु आध्यात्मिक शांति प्रास करते हैं। बाबा जी के सादा जीवन तथा दिव्य शक्ति से लोग बड़े प्रभावित थे और अपने दुखों के निवारण हेतु उन की कुटिया में आते थे। बेशक उनका संबंध सिख धर्म से था परन्तु वह किसी भेदभाव के बिना सभी धर्मों के मानने वालों से प्यार करते थे। जो भी उन के सम्पर्क में आया वह उन्हीं का हो गया। उन की वाणी तथा व्यवहार में ऐसा आकर्षण था कि सब उन को सच्चे दिल से प्यार करते थे। बाबा सुन्दर सिंह जी पहुंचे हुए महात्मा थे जिन का संबंध सिखों के पहले गुरु, गुरु नानक देव जी की दसवीं पीढ़ी से था। वह उच्च कोटि के समाज सुधारक, ब्रहम्चारी, तपस्वी, लोगों के हितैषी तथा आपसी भाईचारे को बढ़ावा देने में रुचि रखते थे। उन का जन्म 1857 ई में गांव कोटली फकीर चंद जिला सियालकोट (पाकिस्तान) में हुआ। बाबा जी के पिता का नाम बाबा जवाहर सिंह तथा माता का नाम भागवंती देवी था। उनका जन्म अपने पिता के स्वर्गवास होने के चार महीने बाद हुआ। बचपन से ही वह ईश्वर भक्ति में लीन रहते थे। उनका दिल घरेलू काम धंधों में

नहीं लगता था। एक रात उन्होंने घर छोड़ दिया और फिर कभी वापस घर नहीं आए। उन को साधु संतों में रहना अधिक पसंद था। उन्होंने लोगों को धर्म के मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। अपनी यात्रा के दौरान जब उनको अखनूर आने का अवसर मिला तो उनको चंद्रभागा नदी के तट पर यह स्थान बड़ा पसंद आया। वहीं बियाबान जंगल में उनको बाबा दीदार सिंह जी के दर्शन हुए और उन्हीं के मार्ग दर्शन में यहां कई वर्षों तक तपस्या की। इस गुरुद्वारे के निर्माण में सिख संगत के साथ-साथ सरदार एच एस बाली जी का बड़ा योगदान है। यहां आने वाले श्रद्धालुओं के रहने तथा खाने पीने का उचित प्रबंध है। प्रतिदिन संगत गुरु जी के लंगर में भोजन करती है। यहां पर एक वृद्ध आश्रम, अनाथालय, संगीत विद्यालय, कॉलेज तथा औषधालय खोलने की भी योजना है।

'पांडव गुफा' गुरुद्वारे के साथ ही दूसरा पवित्र स्थान पांडव गुफा है। कहा जाता है कि इस गुफा का संबंध द्वापर युग से है और अपने अज्ञात वास में पांडव कुछ समय के लिए इसी गुफा में रहे। गुफा के पास ही राजा विराट का महल था। दिन के समय पांचों भाई भेस बदल कर राजा के दरबार में नौकरी करते थे और रात को इसी गुफा में रहते थे। भगवान श्री कृष्ण भी उनके पास आते थे इस गुफा के प्रवेश द्वार के पास ही बाईं ओर धर्म राज की मूर्ति के साथ एक शिला पर भगवान श्री कृष्ण के पैरों के निशान हैं। गुफा के अन्दर सामनी दीवार के साथ भगवान चन्द्रेशवर महादेव के पीछे सप्तमुखी शेष नाग तथा सामने नन्दी गण की मूर्ति है। दीवारों पर नकुल, सहदेव, त्रिमूर्ति पिंडियां, गणेश जी, कार्तिके, अर्जुन, भीम युधिष्टर, द्रौपदी तथा बजरंग बली जी की सुन्दर मूर्तियां हैं। गुफा के मुख्य द्वार की बाहरी दीवारों पर क्षेत्रपाल, हनुमान जी, मां सरस्वती, गणेश जी तथा लक्ष्मी माता की मूर्तियां, हैं, तथा भक्तों के लिए योग साधना करने का भी प्रबंध किया गया है। आज से लगभग 25 साल पहले स्वामी कृष्णानंद जी इस गुफा में तपस्या करने के लिए पधारे। जब लोगों को उनका पता चला तो बड़ी संख्या में धर्म प्रेमी उन के दर्शन करने गुफा में आने लगे और यह गुफा एक तीर्थस्थान का रूप धारण कर गई। अब तो यहां एक बड़े सत्संग घर तथा कुछ कमरों का निर्माण भी किया गया है जहां प्रतिदिन सुबह शाम भजन कीर्तन तथा धार्मिक प्रवचन होते हैं। ऐसा विश्वास है कि यह गुफा अमरनाथा तक जाती थी परन्तु अब उसे बंद कर दिया गया है। पर्वों के अवसर पर विशेष रूप से शिवरात्रि तथा कृष्ण जन्माष्टमी को यहां भंडारों का

आयोजन किया जाता है।

'अखनूर का किला' ऐतिहासिक दृष्टि से अखनूर का किला बड़ा महत्त्वपूर्ण है। एक लेख के अनुसार इस किले का निर्माण राजा पूर्ण देव के बड़े पुत्र राजा तेग सिंह ने करवाया था जो अपने पिता की मृत्यू के बाद 12 साल की आयु में अखनूर की गद्दी पर बैठा था। यह किला वर्गाकार का है जिस की लम्बाई चौड़ाई 200 गज के करीब है। बाहरी दीवारें तीन फुट चौड़ी तथा इतनी ऊंची है कि शत्रु की सेना के लिए किले में प्रवेश करना असंभव था। दूसरा चंद्रभाग नदी के तट पर होने के कारण शत्रु की सेना के लिए नदी पार करके यहां तक पहुंचना भी एक कठिन काम था क्यों कि आक्रमण कारियों की गतिविधियों का सारा पता दूर से ही किले में नियुक्त सैनिकों को लग जाता था। किले का निर्माण मुगल शासकों द्वारा निर्मित किलों की भान्ति ही है जिसकी दीवारों में हथियार चलाने के लिए सुराख रखे गए हैं। किले का निर्माण लगभग 200 साल पहले हुआ था। इसकी बाहरी दीवार कई जगहों से टूट चुकी है और बहुत सा भाग विरान पड़ा है। किले के अन्दर अब कोई दीवार नहीं और न ही महलों के चिन्ह दिखाई देते हैं। इस जमीन पर अब कई सरकारी कार्यालय बने हुए हैं। इस समय इस किले की देखभाल तथा मरम्मत का काम भारत सरकार के पुरातत्व सर्वेक्षण विभाग के पास है जो इसे पहले जैसा रूप देने में प्रयत्नशील है। इस विभाग की देखरेख में किले के बहुत बड़े भाग विशेष रूप से चन्द्रभागा नदी की ओर बाहरी दीवार को पहले जैसा ही बना दिया गया है।

राजा तेग सिंह ने इस किले का निर्माण 18 वर्ष की आयु में किया था। बाद में महाराजा गुलाब सिंह ने किले की मरम्मत करवाई थी। चंद्रभागा नदी पर एतिहासिक जियापोटा घाट है जहां महाराजा रंजीत सिंह ने 16 जून 1822 ई को गुलाब सिंह के माथे पर तिलक लगा कर उसे जम्मू का राजा घोषित किया था। जिया पोटा वृक्ष तो नदी में बाढ़ आने के कारण बह गया है परन्तु उस स्थान पर अब एक चबूतरा बना दिया गया है जिसे देख कर उस बहादुर की तस्वीर आंखों के सामने आ जाती है जो एक साधारण सैनिक से जम्मू कश्मीर राज्य का महाराजा बना और अपनी सूझ-बूझ से राज्य की सीमाओं को रूस तथा चीन तक बढ़ाया।

कहते है कि गर्मियों में लोग चंद्रभागा नदी के किनारे जिया पोटा वृक्ष की छाया में बैठकर ठंडी वायु का आनन्द लेते थे। आज यद्यपि यहां जिया पोटा वृक्ष तो नहीं परन्तु इस घाट के महत्व में कोई कमी नहीं आई। चबूतरे के चारों ओर लोहे का

जंगला लगा दिया गया है जिसके मध्य शिवलिंग तथा अन्य देवी देवताओं की मूर्तियों तथा पिंडियों की स्थापना की गई है। चंद्रभागा की लहरें किनारे से बाहर आ कर जब इस चबूतरे से टकराती हैं तो ऐसा प्रतीत होता है मानो वे गुलाब सिंह के राज थड़े को भावभीनी श्रद्धांजलि अर्पित कर रही हों। लोग इस महत्वपूर्ण स्थान को भूलते जा रहे थे परन्तु 1985 ई. में जब महंत रामानन्द दास जी यहां आए तो उन्होंने अखनूर वासियों के सहयोग से इस घाट को नया रूप दिया और इस की सुन्दरता में निखार पैदा किया।

'चिनार दुर्गा मन्दिर' कुछ साल पहले जिया पोटा घाट पर चिनार दुर्गा मन्दिर का निर्माण किया गया है जहां सुबह शाम भक्तों की भीड़ रहती है और भजन कीर्तन होता रहता है। मन्दिर में मां दुर्गा की भव्य मूर्ति की स्थापना की गई है जिसे सुन्दर वस्त्रों तथा आभूषणों से सजाया गया है। मन्दिर की बाहरी दीवारों पर केतु, राहु, गणेश जी, शुक्र, बृहस्पती, बुध, मंगल, चंद्र तथा सूर्य ग्रहों की मूर्तियां बनी हुई हैं। प्रवेश द्वारों पर गणेश जी, भगवान शिव, माता पार्वती, हनुमान जी तथा विष्णु भगवान जी की मूतर्तियां हैं। दुर्गा मन्दिर परिसर में ही गंगा माता की भव्य तथा विशाल मूर्ति है। माता के हाथ में एक कलश है जिससे पवित्र जल धारा हर समय बहती रहती है। ऊपर तीन बंदरों की आकृतियां बनी हैं जो समस्त मानव जाति को बुरा नहीं बोलने, बुरा नहीं सुनने तथा बुरी बातों को न देखने का संकेत देते हैं।

महंत जी के अनुसार जिया पोता घाट बड़ा प्राचीन है जहां ऋषिमुनि तपस्या किया करते थे। चंद्रभागा नदी के तट पर कई प्राचीन मन्दिरों के अवशेष आज भी देखे जा सकते है जो इस बात के साक्षी हैं कि यहां ऋषि मुनियों के आश्रम, देवी देवताओं के पवित्र स्थान तथा महात्माओं की समाधियां थीं। महंत जी ने पार्क में दो तथा आश्रम के परिसार में एक जिया पोता का वृक्ष लगाया है। उन्होंने कहा कि रात को साढ़े तीन बजे जब वह चंद्रभागा नदी पर स्नान करने जाते हैं तो उनको वहां बहुत सी परछाईयां दिखाई देती है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे ऋषियों मुनियों की आत्माएं घूम रही हैं। यहां यात्रियों तथा विद्यार्थियों के रहने के लिए भी कमरों का निर्माण किया गया है। पर्वों के अवसर पर दूर दूर से लोग चंद्र भागा के इस पवित्र घाट पर स्नान करने के लिए आते हैं।

'हरि मन्दिर' चंद्रभागा के तट पर स्थित हरि मन्दिर भी नगरवासियों की आस्था का केंद्र है जहां धर्म प्रेमी श्रद्धापूर्वक भगवान विष्णु तथा माता लक्ष्मी जी की सुंदर

प्रतिमाओं की पूजा अर्चना तथा प्राचीन शिव लिंग पर जल चढ़ाने के लिए आते हैं। कहते हैं कि यह मन्दिर सैंकड़ों साल पुराना है। यहां हरि मन्दिर तथा शिव मन्दिर के अतिरिक्त और भी बहुत सी ईमारतें थीं जिन में कभी एक स्कूल, पटवार खाना, यात्रियों के ठहरने के लिए सरायें थीं। पं. सोहन लाल तथा उनका परिवार वर्षों से मन्दिर की सेवा करते आ रहे थे। जब उनके लिए मन्दिर की देखभाल करना असम्भव हो गया तो उन्होंने अपनी इच्छा से मन्दिर तथा उस की सम्पत्ति को कमेटी के सपुर्द कर दिया जो तहसीलदार अखनूर श्री आत्मा राम की अध्यक्षता में बनी। कमेटी ने अखनूर वासियों के सहयोग से इस पवित्र स्थान का नवनिर्माण करवाया। वर्तमान कमेटी में श्री रामेश्वर दास जी महंत कामेशवर मन्दिर, श्री सुरेन्द्र गुप्ता, श्री विरेन्द्र खजूरिया, श्री दयाल सिंह मनहास, श्री दयानन्द जी तथा अन्य प्रतिष्ठित, नगरवासी शामिल हैं।

इस पवित्र तथा प्राचीन स्थान की महत्ता का अनुमान इस बात से भी लगाया जा सकता है कि जम्मू का राज्य प्राप्त करने के बाद गुलाब सिंह जी ने अपना पहला दरबार हरि मन्दिर के थड़े पर ही लगाया था जहां उस के निकटतम सहयोगियों, संबंधियों तथा उच्च सैनिक तथा प्रशासनिक अधिकारियों ने शमूलियत की थी। दरबार की समप्ति पर उन्होंने अपने अधिकारियों को जम्मू भेज दिया और स्वयं अपने गुरु बावा प्रेम दास जी का आर्शीवाद लेने सूई चले गए।

'सीमेंट की किश्ती' इन दिनों चन्द्रभागा तट पर बनी सीमेंट की बहुत बड़ी किश्ती अखनूर तथा आसपास के लोगों के आकर्षण का केंद्र बनी हुई है जिस का निर्माण अखनूर वासी राजेंद्र कुमार गुप्ता ने करवाया है जो वहां के प्रतिष्ठित व्यक्ति तथा प्रसिद्ध समाज सेवक हैं। 1947 से पहले उनके बुजुर्ग टोक खालसा में रहते थे। बड़ों की शिक्षा तथा धार्मिक ग्रंथों में वर्णित सदगुणों से प्रभावित होकर उनके दिल में समाज सेवा तथा जनहित कार्यों को करने की भावना पैदा हुई। उन का विचार है कि हर व्यक्ति को कुछ समय तथा धन लोगों की भलाई के लिए निकालना चाहिए ताकि उस व्यक्ति के चले जाने पर भी लोग उसे याद रखें। इस छोटे से जीवन में नेकी के जितने भी काम हो सकें मनुष्य को करने चाहिएं।

इस बात को ध्यान में रखते हुए ही उन्होंने हरि मन्दिर के सामने सीमेंट की किश्ती का निर्माण करवाया जिस में डेढ़ दो सौ व्यक्ति बड़े आराम से बैठकर चन्द्रभागा से उठती लहरों तथा शीतल वायु का आनन्द ले सकते हैं। शाम होते ही

बड़ी संख्या में बच्चे, बूढ़े पुरुष तथा स्त्रियां जब चंद्रभागा के तट पर सैर करने आते हैं तो वे कुछ समय के लिए किश्ती में बैठना पसंद करते हैं। किश्ती के आस पास लोगों को देख कर स्वयं राजेंद्र गुप्ता भी खुशी से फूले नहीं समाते। कभी कभी तो वह दूर से ही इस स्थान की चहल पहल देखकर घर लौट जाते हैं। जब लोग उनको सुनाते हैं कि आज किश्ती भरी हुई थी तो वह बड़े प्रसन्न होते हैं। वह इस बात को मानते हैं कि हर काम ईश्वर की आज्ञा से ही होता है। दूर से किश्ती तथा उस पर रंग बिरंगे झंडों को लहराते देख ऐसा प्रतीत होता है मानो मुसाफिरों से भरा कोई समुद्री जहाज जा रहा हो। इस किश्ती को झारखंड के मिस्त्री अलाऊदीन ने बनाया है। इसका निर्माण कार्य जनवरी 2005 को आरम्भ हुआ और मार्च 2005 को सम्पन्न हुआ। करमठ समाज सेवक होने के नाते श्री गुप्ता ने शमशान भूमि पर पक्के घाट का निर्माण भी करवाया तथा अपने आप को खतरे में डाल 3 लोगों को नदी में डूबने से बचाया है।

'सेवा आश्रम (वृद्ध आश्रम)' हरि मन्दिर के साथ ही अखनूर वासी स्वार्गीय देवराज बढ़ैरा ने एक सेवा आश्रम का निर्माण करवाय है जहां इस समय 11 वृद्ध तथा बेहसहारा व्यक्ति रहते हैं जिन के रहने तथा खाने पीने का प्रबंध सेवा समिति अखनूर द्वारा किया जाता है।

सेवा समिति के अध्यक्ष श्री कृष्ण गोपाल गुप्ता के अनुसार देवराज बढ़ैरा के पूर्वज मीरपुर सिद्ड़ के रहने वाले थे जो 1933 ई में अखनूर आ कर बस गए। उन के पिता का नाम रूड़ीमल तथा माता का नाम चनन देवी था। आरंभिक शिक्षा उन्होंने अखनूर में ही प्राप्त की और फिर वह इंजीनियरिंग करने लाहौर चले गए। किसी कारण वश व अपनी ट्रेनिंग पूरी न कर सके और वापस अखनूर लौट आए। उन के पिता भी घर छोड़ कर चले गए। तीनों भाईयों ने रूड़ीमल जी को ढूंढ कर लाया। 1947 में देवराज जी अपने भाई प्रकाश के साथ देहली चले गए और तीसरा भाई धर्मपाल कोलकत्ता चल गया। मां चूंकि स्कूल में पढ़ाती थी इसलिए वह अखनूर में ही रही। देहली में देवराज जी एक फर्म में नौकर हो गए। फर्म की गिफ्ट आईटमों को लेकर वह अक्सर अमरीका जाते थे। कुछ समय के बाद वह अमरीका में ही आबाद हो गए और वहीं काम करने लगे। उन्होंने अपनी पत्नी तथा लड़की को भी वहीं बुला लिया। 60 साल की आयु के बाद उन को वहां 1150 डालर प्रतिमहा पैनशन मिलने लगी। अपने पिता की मृत्यु पर वह अखनूर नहीं आ

सके। उन्होंने अपना शोरूम बहू के नाम कर दिया और स्वयं अखनूर आ गए। उनको इस बात का दुख था कि वह अपने माता पिता की सेवा न कर सके और न ही पिता की मृत्यु के समय उनके अंतिम दर्शन कर सके। श्री कृष्ण गोपाल जी से मिलकर उन्होंने इच्छा प्रगट की कि यहां ऐसा आश्रम स्थापित किया जाए जिस से वृद्धों तथा बेसहारा लोगों की सेवा का अवसर प्राप्त हो जिस के लिए उन्होंने कुल खर्च होने वाली राशि का 90 प्रतिशत स्वयं देने तथा 10 प्रतिशत कृष्ण गोपाल जी को लगाने के लिए कहा।

पहले तो आश्रम हरि मंन्दिर में ही चलता रहा। फिर आश्रम की ईमारत का निर्माण किया गया। 1994 में बरामदा और कमरे बने और 2000 ई में वर्तमान ईमारत बन कर तैयार हो गई। आरम्भ में केवल दो ही व्यक्ति यहां थे। फिर चार हुए और अब 11 व्यक्ति यहां रहते हैं। 2002 ई. में देवराज जी का स्वर्ग वास हो गया। दानी सजनों, कमेटी के सदस्यों तथा मानवता के सेवकों के सहयोग से आश्रम का काम सुचारु रूप से चल रहा है। आश्रम में रहने वालों को साल में दो बार कपड़े, बैसाखी को ठंडे, दीवाली को गर्म कपड़े, दिन में दो बार चाय, दो बार खाना, सुबह का नाश्ता, सप्ताह में दो बार फल दिया जाता है। बीमार व्यक्तियों को डाक्टरी सहायता तथा दवाईयां भी दी जाती हैं। बिना किसी भेदभाव के आश्रम में सब को रखा जाता है। आश्रम के साथ ही एक साधना केंद्र का निर्माण भी किया गया है।

अखनूर नगर में विभिन्न धर्मों तथा जातियों के लोग सदियों से भाईयों की तरह रहते चले आ रहे हैं। यहां रहने वालों ने न केवल सेना में भर्ती होकर अपनी वीरता का प्रदर्शन किया है बल्कि राज्य प्रशासन में भी ऊंचे पदों पर रहकर अपनी योग्यता से अखनूर का नाम रोशन किया है। कुछ लोगों ने जनहित तथा समाज सेवा को अपने जीवन का लक्ष बना कर गरीबों तथा पीड़ितों की सहायता कर के नाम कमाया है। चंद्रभागा तट पर बने यह दर्शनीय स्थान अखनूर की सुन्दरता को चार चांद लगाते हैं जिन को देखने के लिए दूर-दूर से लोग यहां आते हैं।

मोहयाल सरस्वती मंदिर-जम्मू

जम्मू नगर तथा इसके आस पास जिधर भी नजर जाती है विभिन्न देवी देवताओं के मंदिर, साधु संतों के मठ तथा कुल देवियों और कुल देवताओं की देहरियां तथा ऋषि मुनियों की समाधियां दिखाई देती है। अधिक मंदिर होने के कारण ही जम्मू को ''मंदिरों का शहर'' कहा जाता है। इस पवित्र धरती पर कई महापुरुषों ने ईश्वर की आराधना की। उन्होंने यहां धर्म प्रचार के साथ-साथ लोगों को आपस में मिलजुल कर रहने की प्रेरणा दी। ऋषि मुनियों के आर्शीवाद से इस क्षेत्र में सदा शांति का वातावरण रहा है। जब कभी भी आस पास के क्षेत्रों में हालात खराब हुए या राजाओं तथा जागीरदारों के आपसी झगड़ों के कारण लोगों के दिलों में डर पैदा हुआ तो उन्होंने जम्मू में आकर पनाह ली। यहां के राजाओं ने भी बाहर से आने वालों को रहने के लिए स्थान दिया। ऋषि मुनियों की तपस्या स्थली होने के कारण यहां रहने वाले लोगों के दिलों में भक्ति भाव तथा धर्म के प्रति प्रेम पैदा हुआ।

जम्मू नगर में प्रवेश करते ही मंदिरों के ऊंचे-ऊंचे सुनेहरी कलशों के दर्शनों तथा भजन कीर्तन की ध्वनि से यात्रियों का मन गद गद हो उठता है और उनके दिल में तीव्र इच्छा पैदा होती है कि वे शीघ्र अति शीघ्र जम्मू नगर के सभी मंदिरों में जाकर वहां स्थापित देवी देवताओं की मूर्तियों के दर्शन तथा पूजा करके उन सब का आर्शीवाद प्राप्त करें। अब तो जम्मू के बाहरी क्षेत्र में भी कई नए मंदिरों का निर्माण हुआ है परन्तु प्राचीन मंदिरों की बनावट तथा सजावट को देख कर उस समय के कारीगरों, शिल्पकारों तथा चित्रकारों की दाद देनी पड़ती है जिन्होंने सीमित साधनों के बावजूद इन मंदिरों की सुन्दरता में निखार पैदा किया। जम्मू के प्राचीन मंदिरों में श्री रघुनाथ जी का मंदिर और उसी परिसर में बने अन्य देवी देवताओं के मंदिरों को देखने के लिए भारत तथा विश्व के कईभागों से यात्री तथा पर्यटक यहां आते हैं। शालीमार स्थित रणवीरेश्वर मंदिर में ऊंचे स्थान पर भगवान शिव, माता पार्वती तथा गणेश जी की प्रतिमा है। सामने एक बड़े तथा सुन्दर शिव लिंग की स्थापना की गई है। इस के अतिरिक्त पंजवक्तर शिवालय, पीरखोह, लक्ष्मी नारायण मंदिर, महालक्ष्मी मंदिर, बलदेव का मंदिर, मंदिर माता चिन्तपूर्णी, राधा कृष्ण मंदिर तथा रानी मंदिर आदि कई मंदिर हैं जिन को देखकर भक्तों को

आध्यात्मिक शांति मिलती है।

पुराने जम्मू शहर के नव निर्मित मंदिरों में जनरल बस स्टैंड के पास बी.सी. रोड के पश्चिमी किनारे पर एक पहाड़ी पर मोहयाल सरस्वती मंदिर सब को अपनी ओर आकर्षित करता है। पहाड़ी पर स्थित होने के कारण यह मंदिर बड़ी दूर से दिखाई देता है। चंद सीढ़ियां चढ़ने के बाद श्रद्धालु मंदिर परिसार में प्रवेश करते हैं। बरामदे की दीवारों पर श्री गणेश जी, माता सरस्वती तथा हनुमान जी की मूर्तियां हैं। गर्भगृह में शिव लिंग की स्थापना की गई है जिस को प्रतिदिन फूलों से सजाया जाता है। शिव लिंग पर नाग देवता की प्रतिमा शिव लिंग की शोभा में वृद्धि करती है। सामने वाली दीवार में माता सरस्वती, भगवान शिव, माता पार्वती की मूर्तियों की स्थापना की गई है। दीवारों पर देवी देवताओं के चित्र लगे हैं। मंदिर के भीतरी भाग को रंग बिरंगी रोशनियों से सजाया गया है। धूप, दीप तथा पुष्पों की सुगंध से वातावरण शुद्ध रहता है। श्रद्धालु बड़ी श्रद्धा से शिवलिंग पर जल चढ़ाते हैं और मंदिर में स्थापित देवी देवताओं की पूजा करने के बाद पुजारी जी से चरणामृत तथा प्रसाद ग्रहण करते हैं। बरामदे में 1008 स्वामी सेवा नन्द जी गिरी वैद्य(नंगल वाले) की सुन्दर प्रतिमा है जो सिर पर पगड़ी, शाल ओढ़े और माला धारण किए हुए हैं और भक्तों को आर्शीवाद देते नजर आते हैं। उनके चेहरे पर दिव्य तेज तथा मुस्कान देखकर भक्तों को बड़ी प्रसन्नता होती है। मंदिर में हर रविवार को कीर्तन होता है जिसमें भक्ति गीतों के अतिरिक्त धर्मग्रन्थों का पाठ तथा कथा भी की जाती है। समय समय पर जम्मू से बाहर की कीर्तन मण्डलियों तथा धर्म प्रचारकों को भी बुलाया जाता है। हर महीने के अन्तिम बृहस्पतिवार को गुरु जी का सत्संग होता है जिसमें गुरु जी के जीवन तथा उनकी शिक्षा पर व्याख्यान होते हैं। गुरु जी किसी से भेद भाव नहीं करते थे। उनके शिष्यों में न केवल मोहयाल बरादरी के लोग थे। बल्कि जम्मू, पुंछ, राजौरी, कुद, बटोत तथा पंजाब में रहने वाले सभी धर्मों तथा जातियों के लोग शामिल हैं और समय समय पर गुरु जी के दर्शन करने के लिए आते थे। स्वामी सेवानन्द जी साम्बा के रहने वाले थे। उनका सम्बंधत वैद्य जाति से था। उन्होंने नंगल में गद्दी स्थापित कर ली थी, परन्तु अपने अनुयायियों से मिलने अक्सर यहां आते रहते थे। दिसम्बर 2000 ई. को वह स्वर्ग सिधारे और हरिद्वार में उनको जलसमाधि दी गई। उस अवसर पर उनके हजारों शिष्य वहां मौजूद थे।

मोहयाल सरस्वती मंदिर का प्रबंध चलाने तथा इस पवित्र स्थान को और

अधिक सुन्दर तथा आकर्षक बनाने और बरादरी के संगठन को मजबूत करने के लिए जम्मू कश्मीर मोहयाल सभा का गठन किया गया है जिसके वर्तमान अध्यक्ष श्री एन. एल. बख्शी, उपाध्यक्ष श्री बाल कृष्ण छिब्बर, महासचिव श्री भीम सैन बाली और कोषाध्यक्ष, श्री द्वारिकानाथ छिब्बर हैं जो बरादरी के सभी सदस्यों के सहृयोग से पूरी मेहनत तथा लगन से बरादरी की निष्काम सेवा कर रहे हैं। मोहयाल किसी विशेष जाति या समुदाय का नाम नहीं बल्कि ब्राहम्णों की सात जातियों का एक बड़ा समूह है जिसमें छिब्बर, दत्त, बाली, वैद्य, लो, मोहन, तथा भमियाल जातियों से सम्बंध रखने वाले लोग शामिल हैं। इन जातियों के लोग अधिकतर फ्रंटियर में रहते थे परन्तु अब उत्तरी भारत में आबाद हैं। जम्मू-कश्मीर में मोहयाल परिवारों की संख्या भारत के अन्य भागों से अधिक है। एक अनुमान के अनुसार भारत में दो लाख से अधिक परिवारों का सम्बंध मोहयाल जाति से है जिन में कुछ दक्षिण भारत में भी रहते हैं। देश भर में इस बरादरी की लगभग 70 सभाऐं हैं जिन का मुख्यालय दिल्ली में है। इस समय जनरल मोहयाल सभा के अध्यक्ष श्री बी.डी. बाली हैं। जम्मू कश्मीर मोहयाल सभा के अध्यक्ष श्री एन.एल बख्शी जनरल मोहयाल सभा के निर्वाचित सदस्य हैं। इस बरादरी के अधिकतर सदस्य मीरपुर कोटली तथा पाक अधिकृत कश्मीर में रहते थे जो 1947 ई के पश्चात रिहाड़ी, सरवाल, रेशमघर, गांधीनगर तथा अन्य स्थानों पर रह रहे हैं।

जम्मू-कश्मीर में मोहयाल सभा की स्थापना 11 नवम्बर 1892 ई को हुई थी और इसका पहला अधिवेशन महाराजा प्रताप सिंह के शासनकाल में सरदार करतार सिंह बाली की अध्यक्षता में हुआ था जो उन दिनों जम्मू कश्मीर सरकार के फाईनांस सैक्रेटरी थे। दूसरा अधिवेशन 1936ई. में तथा तीसरा 1977 ई. में श्री पी.सी. मोहन की अध्यक्षता में सम्पन्न हुआ जिस में भारत के अन्य भागों में रहने वाले बरादरी के प्रतिनिधियों ने भाग लिया था। बेशक सभी जातियों के गोत्र अलग-अलग हैं और सबकी मेल भी अपने अपने गुरु या कुल देवता के स्थान पर अपने अपने ढंग से आयेजित की जाती है परन्तु इन सब का आपसी सम्बंध तथा मेल मिलाप बड़ा दृढ़ है और सभी अपने आप को मोहयाल कहलाने में गर्व महसूस करते हैं। कुछ बरादरियों के रीति रिवाज भी एक दूसरे से अलग हैं।

छिब्बर बरादरी की मेल नौशहरा के पास खैरी में लगती है। वैद्य बरादरी की मेल साम्बा में, बाली बरादरी की मेल झंगड़ में आयोजित होती है। लो, मोहन,

भमियाल आदि बरादरियों के अधिक लोग अपने पूर्वजों अथवा बड़ों को ही देवताओं के रूप में पूजते हैं। हर शुभ कार्य करने से पहले कुल देवताओं तथा बड़ों का आर्शीवाद प्राप्त किया जाता है। इन बरादरियों के लोग बच्चों के मुंडन संस्कार घरों में ही बेरी के वृक्ष के नीचे करते हैं परन्तु दत्ता परिवार के बच्चों के मुंडन नवरात्रों के बाद अष्टमी को महूरत के अनुसार किये जाते हैं। सभी बरादरियां अपनी सुविधा अनुसार निश्चित स्थानों पर मेल का आयोजन करती हैं। दत्ता बरादरी का गोत्र भारद्वाज, बाली बरादरी का पराशर, छिब्बर जाति का भार्गव, भमियाल जाति का कोशल, लो बिरादरी का वशिष्ठ, मोहन बिरादरी का कश्यप, तथा वैद्य बिरादरी का गोत्र धनवंत्री है। मोहयाल जाति से संबंध रखने वाले लोग शस्त्रधारी हैं जिन्होंने देश की रक्षा तथा एकता के लिए अपने प्राणों की आहूति दे कर अपने पूवजों का नाम रोशन किया है। सेना में भर्ती होकर बड़े-बड़े पदों पर काम करके वीरता के पुरस्कार प्राप्त किये हैं। जिन पर मोहयाल जाति को गर्व है।

वर्तमान मंदिर की नींव 1977 ई में जम्मू के प्रसिद्ध फोटोग्राफर तथा समाज सेवक श्री डी.एन. दता द्वारा रखी गई थी जो उस समय मोहयाल सभा के अध्यक्ष भी थे। मंदिर का निर्माण कार्य 1992 ई में पूरा हुआ था जिस के बाद विधिपूर्वक यहां शिवलिंग तथा अन्य देवी देवताओं की मूर्तियों की स्थापना की गई। 2 अक्तूवर 1977 को मंदिर परिसार में एक बड़े हाल का नींव पत्थर श्री बोध राज बाली ने रखा। यह हाल 18 अप्रैल 1999 को बन कर तैयार हुआ जिस का उद्घाटन उसी दिन 1008 स्वामी सेवानन्द जी ने किया। इस हाल में धार्मिक पर्वों के अवसर पर सम्मेलनों का आयोजन किया जाता है जिस में सभी जातियों के लोग बढ़-चढ़ कर भाग लेते हैं। सब से बड़ा आयोजन भगवान परशुराम जयंति के अवसर पर किया जाता है। इस पवित्र स्थान पर हर दो साल के बाद मोहयाल मेले का आयोजन भी किया, जाता है जिस में भारत के अन्य स्थानों पर रहने वाले मोहयाल बरादरी के लोग भी शामिल होते हैं। इस अवसर पर बरादरी की भलाई बेहतरी तथा इसके उत्थान बारे सोच विचार किया जाता है और बरादरी के उन बच्चों को पुरस्कृत किया जाता है जो विभिन्न परीक्षाओं में विशेष स्थान प्राप्त करते हैं। उन सरकारी तथा गैर सरकारी संस्थाओं तथा विभागों में काम करने वाले कर्मचारियों को भी सम्मानित किया जाता है जो राज्य तथा राष्ट्रीय स्तर के पुरस्कार प्राप्त करते हैं। मंदिर परिसर में बने हाल तथा कमरों का प्रयोग बरादरी के अतिरिक्त अन्य लोग भी कर

सकते हैं। श्री अमरनाथ जी की यात्रा के दौरान बाहर से आने वाले यात्री तथा साधु मंदिर में रहते हैं। पुंछ, राजौरी तथा दूर दराज पहाड़ी क्षेत्र से आने वाले लोग भी यहां रहते हैं। कुछ लोग जो अपने सगे संबंधियों की अस्थियां गंगा प्रवाह के लिए हरिद्वार जाते हैं और जिन को रहने के लिए कहीं स्थान नहीं मिलता यहां आकर ही ठहरते हैं। हरिद्वार में भी मोहयाल आश्रम का निर्माण किया गया है। मोहयाल बरादरी के लोग मां सरस्वती को इष्ट मानते हैं और इस बात पर विश्वास करते हैं कि विद्या प्राप्ति से ही मनुष्य का मानसिक विकास होता है। विद्या ही मन के अंदर फैले अन्धेरे को मिटाने में सहायक होती है। इसलिए अन्य देवी देवताओं की पूजा के साथ साथ मां सरस्वती की आराधना को विशेष स्थान दिया गया है।

गरीब तथा अनाथ लड़कियों की शादी के लिए हाल तथा कमरे बिना किसी शुल्क के दिये जाते हैं। यही नहीं उस परिवार की आर्थिक सहायता भी की जाती है। जब आतंकवाद से प्रभावित दराबा, सुरनकोट, पुंछ तथा राजौरी के लोग यहां आए तो उनके रहने के लिए मंदिर के कमरे तथा हाल खोल दिये गये और उनकी हर प्रकार से सहायता की गई। मोहयाल बरादरी के सदस्य आपसी एकता के साथ-साथ अन्य धर्मों तथा समुदायों के साथ मिलजुल कर रहने में विश्वास करते हैं ताकि बिना किसी भेदभाव के सभी भारत वासी देश की उन्नति तथा समृद्धि में अपना योगदान दे सकें।

तपो भूमि-फलोरा नागबनी

देव भूमि जम्मू साधु संतों तथा महापुरुषों की तपस्या स्थली रही है। यहां के जंगलों तथा पहाड़ों में महात्माओं को प्राकृतिक सुंदरता का अनुभव होता था इसलिए वह भारत के अन्य भागों से चल कर भगवान की भक्ति करने के लिए इस क्षेत्र के वातावरण को ही प्राथमिकता देते थे। यहां का सुहावना वातावरण ऋषियों, मुनियों तथा तपस्वियों को अपनी ओर आकर्षित करता था। इस क्षेत्र में बड़े-बड़े धार्मिक सम्मेलनों का अयोजन भी किया जाता था। महापुरुषों तथा वेदों के ज्ञाताओं के पवित्र कदम इस धरती पर पड़ने से इस क्षेत्र का महत्त्व और भी बढ़ गया था। महापुरुषों के आने और धर्म का प्रचार करने से यहां रहने वाले लोगों को अपने धर्मग्रंथों और देवी देवताओं के विषय में और अधिक जानने का अवसर मिला जिस कारण यहां रहने वाले लोगों के दिलों में धर्म के प्रति प्यार की भावना में वृद्धि हुई। इस बात का भी ज्ञान हुआ कि ईश्वर एक है जिसे उनके भक्त भिन्न-भिन्न नामों से याद करते हैं। ईश्वर के बनाये हुए बंदों से प्यार करना ही ईश्वर की सबसे बड़ी भक्ति है। सभी धर्म यही सिखाते हैं, सभी का एक ही लक्ष्य है।

जम्मू से 13 किलो मीटर दूर तथा दोमाना से लगभग डेढ़ किलोमीटर की दूरी पर एक तपस्या स्थल फलोरा-नागबनी के नाम से प्रसिद्ध है जिसका प्राचीन नाम मठवाला नाला था। कहते हैं कि प्राचीन काल में यह क्षेत्र रंग-बिरंगे फूलों तथा जंगली बेल बूटों, हरे-भरे वृक्षों से भरा हुआ था। यहां ऋषियों मुनियों का वास था और हर समय हवन यज्ञ तथा वेद मंत्रों की ध्वनी से यह क्षेत्र गुंजता रहता था। इस मठ में साधुओं के रहने तथा खाने पीने का सारा प्रबंध धर्म प्रेमी ही करते थे। हर समय यहां लंगर चलता रहता था। यह स्थान तपोभूमि के नाम से भी दूर-दूर तक जाना जाता था। इस स्थान पर भगवान शिव के मन्दिर थे। बड़ी संख्या में वट वृक्ष थे जिन के नीचे बैठ कर ऋषि-मुनि तपस्या करते दिखाई देते थे। सारा भूंखड स्वर्ग समान प्रतीत होता था। नाग देवता का पवित्र स्थान भी था। यहां नाग देवता शिव लिंग के साथ लिपट जाते थे और श्रद्धालु उनके दर्शन कर के अति प्रसन्न होते थे। इस पवित्र स्थान की यात्रा और साधु संतों के दर्शन करने के लिए दूर दूर से श्रद्धालु आने लगे। कुछ एक ने तो यहां ही रहना आरंभ कर दिया। धीरे-धीरे यहां एक गांव आबाद हो गया जिस का नाम फलोरा रखा गया। हो सकता है कि अधिक फूल होने

के कारण ही इस गांव का नाम फलोरा रखा गया हो। इस गांव में सभी बरादरियों तथा समुदायों के लोग मिल जुल कर भाईयों की तरह रहते हैं और सुख दुख में एक दूसरे से सहयोग करते हैं। अधिकतर लोगों का व्यवसाय खेती बाड़ी है परन्तु कुछ लोग सरकारी नौकरियां भी करते हैं। लोग सीधे सादे, अच्छे स्वभाव तथा धार्मिक विचारों के हैं। प्राचीन काल के मठ तो अब यहां नहीं परन्तु इस मिट्टी से साधु संतों का संबंध होने के कारण यहां के लोगों पर धार्मिक संस्कारों का प्रभाव बाकी है। फलोरा के पास नागबनी में नाग देवता का पवित्र स्थान है। इस क्षेत्र में कोई खेती बाड़ी नहीं कर सकता और न ही यहां कोई नाग देवता को मारता है। आस-पास रहने वाले लोगों का विश्वास है कि नाग देवता ही उनके परिवार तथा पशुओं की रक्षा करते हैं और उनकी समृद्धि नाग देवता के ही आर्शीवाद से है। श्रद्धालु यहां आकर नाग देवता की बड़ी बर्मी (नागों के रहने का स्थान) पर दूध डालते हैं और पूजा करते हैं। जिन लोगों के घरों में सांप निकलते हैं वे यहां आकर पूजा करते हैं, तो सांप निकलना बंद हो जाते हैं। यहां साफ पानी का एक खूबसूरत तालाब है जहां स्नान करने से शारीरिक कष्ट दूर हो जाते हैं। श्रद्धालु इस पवित्र तालाब में, स्नान करने के बाद नाग देवता के दरबार में उपस्थित होते हैं।

फलोरा के शिव मन्दिर में सुन्दर शिवलिंग की स्थापना की गई है पास ही एक त्रिशूल है। पीतल की एक बड़ी गागर से पवित्र जल बूंद-बूंद करके नाग देवता तथा शिवलिंग पर हर समय गिरता रहता है। फूलों तथा धूप की सुगंध से मन्दिर का भीतरी भाग बड़ा सुहावना प्रतीत होता है। मन्दिर में सुबह शाम भजन कीर्तन होता रहता है। आरम्भ में स्वामी रामानन्द जी मन्दिर में सत्संग किया करते थे। वह इसी गांव के रहने वाले थे और एक प्रतिष्ठित परिवार से उनका संबंध था। वह स्वयं पटवारी के तौर पर सरकारी नौकरी करते थे। बड़े धार्मिक विचारों के थे। उन्होंने सन्यास ले लिया और प्रभु भक्ति में लीन रहने लगे। यहीं मन्दिर के पास ही आश्रम बना कर रहने लगे। समय समय पर महात्माओं तथा विद्वानों को बुलाकर यहां धार्मिक सम्मेलनों का आयोजन किया करते थे जिन में बड़ी संख्या में लोग भाग लेते थे। महात्माओं के प्रवचनों से लोगों को महत्वपूर्ण धार्मिक जानकारी प्राप्त होती थी। स्वामी रामानन्द जी के बाद 1008 महामंडलेश्वर श्री स्वामी प्रेमानन्द जी महाराजा व्याकरण वेदांत आचार्य यहां पधारे। उन्होंने ही बीस साल पहले यहां विराट ज्ञान योग सम्मेलन का आरम्भ किया जिसमें हरिद्वार, प्रयाग, जम्मू तथा दूसरे तीर्थ स्थानों

से संत महात्मा पधारते थे। उन दिनों यहां बहुत रौनक होती थी। उस समय यहां हर ओर राम नाम की गूंज सुनाई देती थी।

इस समय आश्रम में स्वामी सवीतानन्द जी महाराज रह रही हैं। वह पहली बार एक धार्मिक सम्मेलन में शमिल होने के लिए दस भक्तों के साथ यहां आई थीं। यहां के लोगों ने उनको आदर दिया, उनसे इतने हिल मिल गये, इतना प्यार दिया जिसे वह आज तक नहीं भूलीं। सम्मेलन के बाद वह अपने गुरु जी के पास चली गई। यहां के लोगों ने गुरु जी से आग्रह किया कि सरोज बहन जी को यहां भेजें और कम से कम एक महीना तक उनके सत्संग का लाभ लेने का अवसर दीजिए। सरोज बहन जी यहां आई। उस समय पुरुषोतम महीना चल रहा था। सारा महीना सुबह शाम भजन कीर्तन तथा सत्संग चलता रहता था। पलक झपकते ही महीना बीत गया। जब वह वापिस जाने लगीं तो लोगों ने उन को स्थाई रूप से इस गांव में रहने के लिए कहा। लोगों ने सेवा द्वारा उनको अपने वश में कर लिया था। केवल 15 दिन के लिए वह यहां आई थीं और अब बारह वर्ष हो गये हैं यहां रहते हुए। अब स्वामी सवीतानन्द जी महाराज (सरोज बहन जी) यहां धर्म प्रचार के साथ साथ गांव वासियों को प्यार तथा भाई-चारे से रहना, प्रभु का भजन करना तथा ईमानदारी से काम करने का पाठ पढ़ा रही हैं। गांव में रहने वाले सभी धर्मों तथा समुदायों के लोग उन का आदर करते हैं। गांव की महिलाएं, पुरुष, बूढे, युवा बच्चे तथा बच्चियां उनके सत्संग में आते हैं। महिलाएं भी प्रतिदिन दोपहर को अपने घर के काम काज से निवृत होकर सत्संग में आ जाती हैं। स्वामी जो के प्रवचन सुनकर उन्हें आध्यात्मिक शांति मिलती है। इस के अतिरिक्त स्वामी जी गांव की छोटी-छोटी बच्चियों की दिन में दो बार क्लास लेती हैं जहां उनको धार्मिक ग्रंथों तथा वेद मंत्रों की जानकारी के साथ साथ धार्मिक कहानियां सुनाई जाती हैं। बच्चों को यह मंत्र जवानी याद करने को कहा जाता है। स्वामी जी के मार्ग दर्शन में बच्चों ने कई मंत्र तथा धार्मिक ग्रंथों जैसे गीता, रामायण, शिव चालीसा, हनुमान चालीसा आदि के कई श्लोक जवानी याद कर लिए हैं। मंत्रों के जाप से बच्चों की मानसिक शक्ति का विकास होता है और उनकी बुद्धि तीव्र होती है। बच्चों को अपने धर्म, संस्कृति, देवी देवताओं तथा महापुरुषों की जानकारी मिलती है। इस प्रकार गांव की नई पीढ़ी को अपने धर्म के प्रति जानकारी देकर स्वामी जी बहुत बड़ा कार्य कर रही हैं। राम नवमीं, तथा नवरात्रों को 9 दिन तक रामायण का अखंड पाठ होता है जिस में

अधिकतर बच्चियां ही भाग लेती हैं। शिवरात्रि पर यहां तीन दिन का सम्मेलन होता है। शिवरात्रि को पूरी रात महात्माओं के प्रवचन होते है। उन दिनों यह गांव एक तीर्थ स्थल का रूप धारण कर लेता है। शनिवार को पुरुष सत्संग में आकर भजन कीर्तन करते हैं और स्वामी जी के प्रवचन सुनते हैं।

स्वामी सवीतानन्द जी ने कहा कि जब मुझे गुरु जी ने यहां आकर रहने को कहा तो मुझे यहां आने में संकोच हुआ कि मेरी भाषा गुजराती है। यहां के लोग डोगरी भाषा बोलते और समझते हैं। मैं यहां कैसे रह पाऊंगी और इन लोगों की बात कैसे समझ सकूंगी। स्वामी प्रेमानन्द जी ने यहां आकर कमरा बनवाया और मुझे यहां रहने को कहा। भला गुरु जी की आज्ञा कैसे टाल सकती थी। यहां रहना शुरू कर दिया। यहां के लोगों के साथ रहने तथा उनके साथ सत्संग करने से मैं उनके साथ ऐसे हिल मिल गई कि ऐसा मालूम होने लगा जैसे मैं भी इनही में से एक हूं। यहां के लोग खास तौर पर महिलाओं और नन्ही नन्ही बच्चियों ने मुझे इतना प्यार दिया कि मैं यहां की ही होकर रह गई। अब यहां हर साल सम्मेलन का आयोजन किया जाता है जिस में वेद, शास्त्रों के ज्ञाता, महापुरुष अपने प्रवचनों का लाभ यहां की जनता को देते हैं। हर त्यौहार को यहां भंडारा होता है। जम्मू से भी कई लोग साधना के लिए यहां आते हैं। आश्रम का सारा प्रबंध दानी सज्जनों की सहायता से चलता है। यहां के धर्म प्रेमी लोग सभी त्यौहारों को बड़े प्रेम भाव से मनाते हैं सम्मेलन के समय गुरु महाराज बच्चों तथा बच्चियों से संस्कृत के श्लोक तथा अन्य देवी देवताओं की स्तुति में जवानी पाठ सुनते हैं और बच्चों को पुरस्कार देते हैं। प्रतिदिन बहुत सी बच्चियां अपनी पढ़ाई तथा घर के काम काम समाप्त करके स्वामी जी के पास जाती हैं। यहां उनको वेद मंत्रों को जवानी याद कराया जाता है। पहली कक्षा की छात्रा नेहा शर्मा ने संस्कृत में वेद मंत्रों को जवानी याद किया है और बड़े अच्छे ढ़ंग से उन का उच्चारण कर सकती है।

इसी प्रकार तीसरी कक्षा की छात्रा पूजा शर्मा ने पुष्पांजली मंत्र, कुमारी रजनी ने शिव महिमा स्तोत्र तथा अनुराधा ने भगवत् गीता के 11 अध्याय जबानी याद किये हुए हैं। स्वामी सवीतानन्द जी ने कहा कि एक साल तक तो वह एक ही कमरे में रहीं हैं। वहीं खाना, वहीं सोना, वहीं आराधना, वहीं सत्संग, वहीं प्रवचन करने में असुविधा सी होती थी। एक बार तो यहां से जाने का निश्चय भी कर लिया। फिर लोगों के अनुरोध पर रुकना भी पड़ा। गांव वासियों ने मेरे कहने पर कार सेवा कर

के और दानी सज्जनों से धन इकट्ठा कर मंदिर के अन्दर बाहर तथा सत्संग घर में मार्बल लगवाया। कमरे, रसोई, बाथरूम के अतिरिक्त चारदीवारी तथा गेट भी लगवाया। अब यहां हर सुविधा है। अब तो यही मेरा घर है, यही मेरा गांव है और यही लोग मेरे सुख दुख के साथी हैं।

आश्रम के शिव मन्दिर में स्थापित शिव लिंग की महिमा अपरम्पार है। प्रतिदिन श्रद्धालु मन्दिर में भगवान शिव की पूजा करने तथा उन का आर्शीवाद प्राप्त करने आते हैं। सोमवार भक्तों की भीड़ होती है। लोगों का विश्वास है कि भगवान शिव के दरबार में सच्चे दिल से प्रार्थना करने पर हर मनोकामना पूर्ण होती है। भोले नाथ हर समय अपने भक्तों के अंग संग रहते हैं और उन को कष्टों से मुक्ति दिलाते हैं।

श्री अमरनाथ यात्रा

तीर्थ यात्रा पर जाने से मनुष्य के मन की शुद्धि होती है। वहां जाकर यात्रियों को ऋषियों मुनियों के दर्शन करने का अवसर मिलता है तथा आध्यात्मिक शांति प्राप्त होती है। भारत में बहुत से तीर्थ स्थान हैं और हर तीर्थ स्थान किसी देवता, संत, महात्मा या ऋषि मुनि की लीला से जुड़ा हुआ है जिन का उल्लेख वेदों, पुराणों तथा धार्मिक ग्रंथों में मिलता है। भारत के अन्य भागों की तरह जम्मू-कश्मीर की धरती पर भी कई तीर्थ स्थान हैं जिन की यात्रा करने के लिए भारत के कोने-कोने से सारा साल श्रद्धालु आते रहते हैं। इन पवित्र स्थानों पर मेलों का आयोजन किया जाता है यहां देवी देवताओं के अनगिनित मंदिर हैं परन्तु इनमें शिव तथा शक्ति के मंदिरों की संख्या अधिक हैं। यहां बहुत से तीर्थ स्थान हैं जो भगवान शिव से सम्बंधित हैं। जम्मू-कश्मीर में भगवान शिव से सम्बंधित तीर्थ स्थानों में स्वामी श्री अमरनाथ जी की पवित्र गुफा सबसे अधिक प्रसिद्ध है जो कश्मीर प्रांत के स्वास्थ्य वर्धक स्थान पहलगाम से लगभग 45 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। पहाड़ी के मध्य बनी यह गुफा 60 फुट लम्बी, 30 फुट चौड़ी तथा 15 फुट ऊंची है। श्रावण मास की पूर्णिमा यानि रक्षाबंधन के पवित्र त्यौहार के अवसर पर इस गुफा में श्रद्धालु बर्फ से बने शिवलिंग के दर्शन करते हैं। सब से बड़ा शिवलिंग कभी कभी 10 फुट से भी अधिक ऊंचा होता है। इसके साथ ही दो छोटे लिंग भी बने होते हैं जिन को श्रद्धालु माता पार्वती तथा गणेश जी का रूप मानकर पूजते हैं। रक्षाबंधन के दिन बर्फ का बना हुआ शिवलिंग पूर्ण रूप में होता है। उसके बाद लिंग की ऊंचाई में कमी आना शुरू हो जाती है। बेशक श्री अमर नाथ जी की यात्रा श्रावन पूर्णिमा से एक महीना पहले आरम्भ हो जाती है और हजारों यात्री यहां आते हैं परन्तु श्रावण की पूर्णिमा के दिन शिवलिंग के दर्शन तथा पूजा को अधिक महत्वपूर्ण माना गया है। काशी में शिवलिंग की पूजा करने से दस गुना लाभ श्री अमरनाथ गुफा में स्थित शिवलिंग की पूजा करने से होता है। प्रयाग के त्रिवेणी संगम के दर्शन से सौ गुना तथा कुरुक्षेत्र से हजार गुना लाभ इस पवित्र लिंग की पूजा से एक ही दिन में प्राप्त होता है। वैसे तो कश्मीर में 45 शिवधाम, 60 विष्णुधाम, 3 ब्रह्मधाम, 22 शक्ति धाम 700 नागधाम तथा अनगिनित पूजा स्थल हैं परन्तु इन सब में श्री अमरनाथ जी की यात्रा का महत्व अधिक माना जाता है। लिद्दर नदी के तट पर स्थित पहलगाम पवित्र अमरनाथ जी

की यात्रा का आधार शिविर है जहां यात्रा के दिनों में शिव भक्तों की भीड़ रहती है। हर ओर चहल पहल दिखाई देती है। यहां का सारा वातावरण शिव भक्ति के रंग में रंग जाता है। भोले नाथ जी की जय, बम बम भोले, जय शिव शम्भू की मधुर गूंज कानों को सुनाई देती है। यहां विभिन्न शहरों के शिव भक्तों की ओर से यात्रियों के लिए लंगर लगाये जाते हैं। राज्य सरकार की ओर से यात्रियों के ठहरने खाने-पीने तथा उनकी सुरक्षा का पूरा प्रबंध किया जाता है। पहलगाम से पवित्र गुफा तक का रास्ता श्रद्धालु घोड़ों पर अथवा पैदल तय करते हैं।

धार्मिक ग्रंथों के अनुसार एक बार लोग ऋषि ब्रिंगेश जी के पास गये और उन से मुक्ति का रास्ता पूछा ताकि वे सांसारिक बंधनों से छुटकारा पाकर ईश्वर धाम को प्राप्त कर सकें और मृत्यु के बाद उनको स्वर्ग की प्राप्ति हो। लोगों की इच्छा पूर्ति के लिए उन्होंने लोगों से कहा कि वे श्री अमर नाथ जी की पवित्र गुफा की यात्रा करें तो उनके सभी पाप मिट जायेंगे। पवित्र गुफा में बर्फ से बने शिवलिंग के दर्शन करने से मनुष्य की सभी मनोकामनाएं पूरी होती हैं। जो श्रद्धाभाव से शिवलिंग की पूजा करता है वह शिव स्वरूप को प्राप्त होता है। बर्फ से बना यह प्राकृतिक लिंग सिद्धि को देने वाला है। मनुष्य की बुद्धि को बढ़ाने वाला तथा वृद्धिदायक है। इस की पूजा करने से सुख तथा शांति की प्राप्ति होती है। ऋषि जी के वचन सुन कर लोग श्री अमरनाथ जी की यात्रा पर चल पड़े। रास्ते में शिव भक्तों को राक्षसों ने बहुत परेशान किया। लोग फिर ऋषि जी के पास गये और प्रार्थना की कि राक्षस हमें वहां नहीं जाने दे रहे। इस पर ऋषि ब्रिंगेश जी ने भगवान शिव की आराधना की। ऋषि जी की भक्ति से प्रसन्न होकर भगवान शिव ने यात्रियों की सुरक्षा के लिए चमत्कारी छड़ी ऋषि जी को दी और कहा यात्री सुरक्षा के लिए जत्थे के आगे इसे रखेंगे तो राक्षस उनका कुछ नहीं बिगाड़ सकेंगे। तब से पवित्र छड़ी यात्रियों के पहले जत्थे के आगे चलती है जिस में बड़ी संख्या में साधु संत शामिल होते हैं। यात्रा आरंभ होने से पहले विधि पूर्वक, मंत्रों के उच्चारण के साथ ही पवित्र छड़ी की पूजा की जाती है और रक्षाबंधन पर होने वाली पूजा को जाने वाले साधु संतों के आगे चलती है जिस की अगवाई दशनामी अखाड़ा श्रीनगर के महंत जी करते हैं।

सारे भारत वर्ष में यह अद्वितीय गुफा है क्योंकि यहां निश्चित समय पर बर्फ के प्राकृतिक शिवलिंग का निर्माण होता है। यहां के चढ़ावे का एक भाग पहलगाम से 7 किलोमीटर के फासले पर स्थित गांव बाटकोट के एक मुस्लिम परिवार को

मिलता है। कहते हैं कि बहुत समय पहले इसी परिवार के एक सदस्य को सब से पहले इस पवित्र गुफा का पता चला था। कुछ चढ़ावा दशनामी अखाड़े के महंत तथा कुछ अनन्त नाग जिला में स्थित मारतंड के पुजारियों को मिलता है। यह भी कहा जाता है कि श्री अमरनाथ गुफा को जने वाली पगडंडी जो पत्थरों तथा बड़ी-बड़ी चट्टानों के गिरने तथा पेड़ पौधे उगने से खराब हो चुकी थी और एक सौ साल तक यात्रियों की नज़र से ओझल रही उस की खोज भी पुनः मलिक परिवार के लोगों ने ही की थी।

एक दंत कथा के अनुसार पहलगाम से 7 किलोमीटर दूर एक गांव बाटकोट में एक मुस्लिम परिवार रहता था। उस परिवार के लोग भेड़ बकरियां पालते थे और भेड़ों की ऊन आदि बेच कर गुजारा करते थे। एक बार इस परिवार का एक सदस्य बूटा मलिक भेड़ों को चराते-चराते गांव से बहुत दूर एक जंगल की ओर चला गया। वह बड़ा दयालु व्यक्ति था और ईश्वर की भक्ति में लीन रहता था। जंगल में एक स्थान पर जब बूटा मलिक एक वृक्ष के नीचे आराम कर रहा था तो वहां एक बूढ़ा साधु आया। बूटा मलिक ने साधू को नमस्कार किया। साधु ने प्रसन्न हो कर बूटा मलिक को कोयले से भरी हुई एक कांगड़ी दी और कहा, "इसे अपने पास रख लो और घर जाकर ही देखना कि इस में क्या है।" बूटा मलिक ने कांगड़ी को अपने कम्बल में लपेट कर पीठ के पीछे बांध लिया और भेड़ों को लेकर घर वापिस आ गया। घर आकर उस ने जब कांगड़ी को जमीन पर उल्टा तो उसे कांगड़ी में से कोयले के स्थान पर सोना ज़मीन पर गिरता दिखाई दिया। बूटा मलिक हैरान रह गया कि यह क्या चमत्कार है। वह खुशी से फूला नहीं समा रहा था। वह उसी समय साधु महाराज की तलाश में उनका धन्यवाद करने निकल पड़ा परन्तु वहां उसे साधु की बजाए एक गुफा के दर्शन हुए। बूटा मलिक ने घर आकर लोगों को पवित्र गुफा तथा साधु महात्मा के बारे में बताया। सब लोग इकट्ठा होकर गुफा में गये। वहां जाकर क्या देखते हैं कि बर्फ का एक बड़ा शिवलिंग बना हुआ है। वह साधु महात्मा और कोई नहीं बल्कि स्वयं भगवान शिव थे जो साधु के रूप में बूटा मलिक से मिले थे। वह साधु महात्मा लिंग का रूप धारण कर गुफा में विराजमान थे। इस पवित्र तीर्थ का नाम श्री अमरनाथ जी इसलिए प्रसिद्ध हुआ क्योंकि इस गुफा में भगवान शिव ने माता पार्वती को अमर कथा सुनाई थी जिस के सुनने से प्राणियों को अमरपद की प्राप्ति होती है। यह कथा लोक तथा परलोक

का सुख देने वाली है। इस कथा में भगवान शंकर तथा माता पार्वती के सम्वाद का वर्णन है जिस का उल्लेख भृगु-संहिता, नीलमत पुराण, तीर्थ संग्रह आदि ग्रंथों में मिलता है।

एक बार माता पार्वती ने भगवान शिव से पूछा, ''प्रभु, मेरी तो मृत्यु होती है तथा मृत्यु के बाद बार-बार जन्म भी होता है, परन्तु आप की मृत्यु नहीं होती। इस का क्या कारण है। विस्तार पूर्वक मुझे समझाईये।'' भगवान शिव ने कहा कि यह अमरकथा के कारण है इस पर माता पार्वती ने आग्रह किया कि मुझे भी वह अमरकथा सुनाइए। माता पार्वती के कहने पर भगवान शिव अमर कथा सुनाने पर राजी हो गये। उन्होंने अपना आसन लगाया और कालाग्नि रुद्र नामक गण को प्रकट किया और उसे आदेश दिया कि चारों ओर ऐसी अग्नि उत्पन्न करो जिस में तमाम जीव धारी मर जायें। कालाग्नि रुद्र ने ऐसा ही किया और वहां से अदृश्य हो गया परन्तु जिस आसन पर भगवान शिव बैठे थे उस आसन के नीचे पहले ही तोते का अण्डा था जो कालाग्नि को दिखाई न दिया भगवान शंकर माता पार्वती को अमर कथा सुनाने लगे और माता पार्वती अमर कथा को बड़े ध्यान पूर्वक सुनने लगीं। भगवान शिव के हर वाक्य पर माता पार्वती हुंकार भरने लगीं। कुछ समय के बाद माता पार्वती को नींद आ गई उस समय अंडे में से जीव प्रकट हुआ माता पार्वती के सोने के बाद उन के स्थान पर तोता हुंकार भरने लगा। जब कथा समाप्त हुई तो उसी समय माता पार्वती जी की नींद भी खुल गई। भगवान शिव ने माता पार्वती से पूछा, ''क्या आप ने अमर कथा सुन ली।'' माता पार्वती ने उत्तर दिया, ''हे प्रभु, आधी कथा सुनने के बाद ही मुझे नींद आ गई थी।'' भगवान शिव बोले तो फिर मेरे हर वाक्य पर हुंकारा कौन भर रहा था। भगवान शिव ने इधर-उधर देखा तो आसन के पास एक तोता दिखाई दिया । भगवान शिव उस तोते की ओर लपके तो वह तोता उड़ गया और श्री व्यास जी के आश्रम में आ गया और उन की पत्नी के पेट में प्रवेश कर गया। भगवान शिव भी तोते के पीछे-पीछे व्यास जी के आश्रम में पहुंच गये और श्री व्यास जी से कहा, ''मेरा चोर यहां आपके आश्रम में घुस गया है।'' व्यास जी ने कहा यहां तो कोई नहीं आया परन्तु पत्नी ने व्यास जी से कहा कि ऐसा प्रतीत हो रहा है जैसे मेरे पेट में कोई पक्षी दाखिल हो गया है। भगवान शिव के क्रोध को व्यास जी ने शांत किया और वह आश्रम से चले गये। कुछ समय के बाद तोता बालक के रूप में व्यास जी की पत्नी के पेट से बाहर आया जिस का नाम

शुकदेव रखा। श्री शुकदेव जी बड़े ज्ञानी तथा अमर कथा सुनने के कारण चारों वेदों तथा अठारह पुराणों के ज्ञाता थे। एक बार वह नैमिषारण्य गये तो ऋषियों मुनियों ने भी उन से अमर कथा सुनने का आग्रह किया। जब कथा आरम्भ हुई तो कैलश पर्वत, क्षीर सागर तथा ब्रह्मलोक हिलने लगा। ब्रह्मा, विष्णु, महेश देवता भी वहां पहुंच गये। भगवान शिव ने सोचा यदि कथा सुनकर सभी अमर हो गये तो पृथ्वी का संचालन बंद हो जायेगा। इसलिए उन्होंने क्रोध में आकर श्राप दिया कि जो इस कथा को सुनेगा वह अमर नहीं होग, केवल शिवलोक को अवश्य प्राप्त होगा।

श्री अमर नाथ जी की यात्रा के साथ कबूतरों की कथा भी आती है। इस सम्बंध में उल्लेख आता है कि माता पार्वती ने भगवान सदाशिव से पूछा कि कौन से शिवगण कबूतर हुए और अब वे कहां पर हैं। इस पर भगवान सदाशिव ने कहा, ''एक बार भगवान शिव संध्या समय नृत्य कर रहे थे कि यह गण आपसी ईर्ष्या के कारण 'कुरु कुरु' करने लगे। भगवान शिव ने उन को श्राप दिया कि तुम दीर्घकाल तक 'कुरु कुरु' करते रहो। भगवान शिव के श्राप से दोनों गण कबूतर बन गये जो आज भी अमरनाथ जी की पवित्र गुफा में देखे जा सकते हैं। उन कबूतरों के दर्शन से श्रद्धालु पाप मुक्त हो जाते हैं। कबूतरों के दर्शन करके यात्री अपनी यात्रा को सम्पूर्ण मानते हैं।''

आजकल तो लाखों की संख्या में यात्री श्री अमरनाथ जी की यात्रा के लिए आते हैं। आतंकवादियों की धमकियों के बावजूद यात्रियों की संख्या में प्रतिवर्ष वृद्धि होती जा रही है। यात्रियों की सुरक्षा के लिए जम्मू-कश्मीर सरकार की ओर से उचित प्रबंध किये जाते हैं। भारत के कौने कौने से यात्री पहले जम्मू पहुंचते हैं। यात्रा के दिनों जम्मू शहर में बहुत रौनक तथा चहल पहल होती है। जिधर देखें यात्रियों के जत्थे तथा साधु महात्माओं की टोलियां गलियों तथा बाजारों में दिखाई देती है। यात्रा के दौरान देश के विभिन्न प्रांतों के लोगों को आपस में मिलने का अवसर मिलता है जिस से राष्ट्रीय एकता को बढ़ावा मिलता है। पंजीकृत करने के बाद यात्रियों को पहचान पत्र तथा यात्रा पर्ची जारी की जाती है और प्रतिदिन यात्रियों का एक जत्था पहलगाम के लिए भेजा जाता है।

जम्मू के बाद यात्रा का दूसरा आधार शिविर पहलगाम है। यहां यात्रियों की आवश्यकता का हर सामान उपलब्ध है। यहां तक यात्री बसों या मोटरों द्वारा पहुंचते हैं। इसके बाद 45 किलोमीटर का रास्ता यात्रियों को पैदल चलना पड़ता है।

पहलगाम से चंदन बाड़ी 16 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। यह रास्ता लिद्दर नदी के साथ-साथ जाता है। चंदन बाड़ी यात्रा का पहला चरण है। यहां यात्री रात को ठहरते हैं। यात्रियों के ठहरने के लिए यहां उचित प्रबंध किया जाता है। उनको तम्बुओं की सुविधा प्राप्त होती है। यात्रा के दौरान सुरक्षा कर्मी यात्रियों के साथ-साथ चलते हैं।

शेषनाग चंदन बाड़ी से 13 किलोमीटर की दूरी पर श्री अमरनाथ यात्रा का दूसरा चरण है। शेषनाग एक झील है जिसका पानी ठंडा है कहते हैं कि इस झील में स्नान करने से गंगा जैसा पुण्य प्राप्त होता है। यात्री यहां स्नान करके अपनी थकावट दूर करते हैं। यह झील क्योंकि यात्रा मार्ग से 4 किलोमीटर नीचे है इसलिए बहुत कम यात्री इस में स्नान के लिए जाते हैं अधिकतर यात्री दूर से ही इस झील को देखकर आत्मविभोर हो उठते हैं। शेषनाग वास्तव में एक पर्वत है जिस के सात शिखर हैं। शेषनाग के बाद यात्री पंच तरनी के लिए रवाना होते हैं। पंचतरणी शेष नाग से लगभग 13 किलोमीटर दूर है। यह रास्ता बर्फ से ढ़का रहता है और यात्रियों को तीन किलोमीटर बर्फानी पगडंडी पर ही चलना पड़ता है। अधिक ठंड के कारण यात्रा में कुछ कठिनाई तो आती है परन्तु शिवभक्त भोले नाथ का नाम लेकर आगे बढ़ते जाते हैं। इसके बाद महागुणाम की कठिन चढ़ाई आरम्भ होती है। फिर एक ढ़लान में पंचतरणी का पड़ाव है। इस स्थान पर पांच नदियों मिलती है। पंचतरणी से श्री अमरनाथ जी की गुफा लगभग 6 किलोमीटर की दूरी पर है। क्योंकि श्री अमरनाथ जी की गुफा के पास ठहरने का कोई प्रबंध नहीं इसलिए यात्री पंचतरणी में ही रात को विश्राम करते हैं और अगले दिन प्रातः स्नान करके श्री अमरनाथ जी की गुफा में बर्फ से बने शिवलिंग के दर्शनों के लिए चल पड़ते हैं। रास्ते में अमरावती तथा पंचतरणी नदियों का पवित्र संगम है। संगम में स्नान करके यात्री पवित्र हो जाते हैं गुफा के पास पाई जाने वाली भस्म को यात्री अपने शरीर पर मल कर गुफा में प्रवेश करते हैं। यात्री वहां बर्फ से बने शिवलिंग के रूप में भोलेनाथ तथा दो अन्य लिंगों माता पार्वती तथा गणेश जी के दर्शन तथा पूजा करके जल्दी ही बाहर आ जाते हैं क्योंकि बाहर शिव भक्तों की लम्बी कतार लगी होती है जो शिवलिंग के दर्शन के लिए अपनी बारी की प्रतीक्षा का रहे होते हैं। भोले नाथ जी के दर्शन करके यात्रियों के चेहरे प्रसन्नता से खिल उठते हैं और वे अपने आप को बड़े भाग्यशाली समझते हैं। यात्रा के दौरान सामान उठाने तथा बच्चों और वृद्धों को

पीठ या पालकी पर ले जाने के लिए पिटठू भी मिल जाते हैं। कुछ लोग घोड़ों पर यात्रा करते हैं। यात्रा के रास्ते में मुस्लिम भाई भी यात्रियों के लिए भोजन तथा चाय का प्रबंध करते हैं। पहलगाम से लेकर श्री अमरनाथ जी की गुफा तक के रास्ते में पालकी वाले या घोड़ों के मालिक या पिटठू अधिकांश मुसलमान भाई ही होते हैं। इस यात्रा से कई परिवारों की रोजी-रोटी चलती है। राष्ट्र विरोधी तत्वों ने हिन्दू-मुसलमानों में फूट डालने की बहुत कोशिश की परन्तु वे अपनी चाल में सफल न हो सके और आज भी यात्रा के दौरान हमें शताब्दियों पुराना भाईचारा तथा आपसी मेल मिलाप देखने को मिलता है। सभी यात्री तथा जम्मू कश्मीर राज्य के लोग भोले नाथ जी से प्रार्थना करते हैं कि राज्य में पहले जैसा शांत वातावरण स्थापित हो और धरती के इस स्वर्ग पर पहले जैसी रौनक हो।

पहले की तरह ही यहां के प्राकृतिक दृश्यों का आनन्द लेने देश विदेश के पयर्टक यहां आयें और जम्मू-कश्मीर राज्य उन्नति तथा समृद्धि के पथ पर आगे बढ़ता जाये।

कुछ लोग छोटे रास्ते से भी श्री अमरनाथ जी की यात्रा पर जाते हैं यह रास्ता अनन्तनाग से बालटाल और फिर बालटाल से श्री अमरनाथ गुफा तक जाता है। इस रास्ते से यात्रा करने में समय तो कम लगता है परन्तु इस रास्ते से यात्रा बहुत कठिन है। इस यात्रा में बालटाल यात्रा का आधार शिविर है और यहां से श्री अमरनाथ जी की गुफा 12 किलोमीटर दूर है।

गुरुद्वारा बाबा सुन्दर सिंह जी-अखनूर

जम्मू क्षेत्र तीर्थ स्थलों से भरा हुआ है। इस धरती के चप्पे चप्पे में आज भी हवन यज्ञों की मीठी मीठी सुगन्ध महसूस की जा सकती है जिन को सदियों पहले अपने आश्रमों में यहां तपस्या करने वाले ऋषियों मुनियों ने किये थे। उन पवित्र मंत्रों का ही प्रभाव है कि यहां रहने वाले लोगों में धर्म के प्रति पूरी आस्था है और वे अन्य धर्मों के मानने वालों का भी आदर करते हैं। वे इस बात पर विश्वास करते हैं कि सब धर्म एकता तथा भाईचारे का संदेश देते हैं तथा एक दूसरे से मिलजुल कर रहने पर जोर देते हैं। सभी धर्मों में ईश्वर के बनाये हुए बंदों की सेवा को ही उत्तम माना गया है। सब यही कहते हैं कि मानवता की भलाई ही सबसे बड़ा धर्म है और जो दीन दुखियों की सेवा नहीं करता वह ईश्वर का सच्चा भक्त नहीं। उसकी भक्ति केवल एक ढोंग है।

इस क्षेत्र की पवित्र नदियों के किनारों पर साधुओं संतों तथा महात्माओं के आश्रम थे जिन्होंने यहां के लोगों को एक पवित्र जीवन व्यतीत करने तथा नेकी के मार्ग पर चलने की प्रेरणा दी। उन महात्माओं के आशीर्वाद से ही इस क्षेत्र के सभी लोग शताब्दियों से इकट्ठे मिल कर रहते चले आ रहे हैं। यहां की अन्य नदियों की भान्ति चंद्रभागा (चिनाब) नदी के किनारे पर भी कई महात्माओं ने ईश्वर की आराधना की है और लोगों के दिलों में प्यार की जोत जलाई है। आज भी यहां के लोग उन महात्माओं के बताए हुए रास्ते पर चलकर सुखी जीवन गुज़ार रहे हैं। यह पवित्र नदी पहाड़ी क्षेत्र से होती हुई जब अखनूर के पास पहुंचती है तो इसकी गति शांत हो जाती है इसका पहाड़ी सफर समाप्त हो जाता है और यह मैदानी क्षेत्र में प्रवेश करती है। अखनूर के पास चंद्र भागा नदी के किनारे कभी घने बियाबान जंगल हुआ करते थे। संत तथा महात्मा इस नदी के किनारे पर बनी प्राकृतिक गुफाओं में रहते थे जहां उनके श्रद्धालुओं की भीड़ रहती थी। पवित्र चंद्रभागा नदी के किनारे तपस्या करने वाले महात्माओं में 108 बाबा सुन्दर सिंह जी (अली बेग वाले) का नाम भी बड़ी श्रद्धा से लिया जाता है जिन्होंने एक लम्बे समय तक चंद्रभागा नदी के दायें किनारे बनी पांडव गुफा के पास ईश्वर की भक्ति की और अपनी आध्यात्मिक शक्ति से समस्त मानव जाति का कल्याण किया। इस क्षेत्र को तपोस्थल के नाम से भी जाना जाता है। जिस स्थान पर बाबा सुन्दर सिंह जी ने तप

किया आज वहां एक भव्य गुरुद्वारे का निर्माण किया गया है जिसकी सुन्दरता देखते ही बनती है। यह गुरुद्वारा बाबा सुन्दर सिंह जी की याद में बनाया गया है जो दूर से ही देखने वालों को अपनी ओर आकर्षित करता है। इसी स्थान पर बाबा जी ने आज से 110 वर्ष पहले ईश्वर की भक्ति की थी। बाबा जी का जीवन बड़ा सादा था जिससे उनके श्रद्धालु बड़े प्रभावित थे। वे अपने दुखों का निवारण करने के लिए बाबा जी के पास आते थे। बाबा जी सिख धर्म से सम्बंध रखते थे परन्तु बिना किसी भेदभाव के उनको सभी धर्मों के मानने वालों से प्यार था। सभी उन के दर्शन करके अपने को धन्य मानते थे। उन की वाणी में मिठास थी। एक बार जो उनके सम्पर्क में आता वह उनका ही हो जाता। ऐसा आकर्षण था उनके व्यक्तित्व में। ऐसा जादू था उनकी वाणी में, ऐसा रस था कि सब उनको दिल से प्यार करने थे।

सेवक सरदार अटल सिंह जी ने बताया कि बाबा सुन्दर सिंह जी पहुंचे हुए संत थे जिनका सम्बंध सिखों के पहले गुरु, गुरु नानक देव जी की दसवीं पीढ़ी से था। वह समाज सुधारक, बाल बह्मचारी, महान तपस्वी जन हितैषी तथा सादगी की मिसाल थे। उनके दादा अतर सिंह जी के तीन पुत्र थे, बाबा बिशन सिंह जी, बाबा किशन सिंह जी तथा बाबा जवाहर सिंह जी। बाबा सुन्दर सिंह जी के पिता का नाम बाबा जवाहर सिंह बेदी तथा माता जी का नाम भागवंती देवी था। बाबा जी का जन्म नवम्बर 1887 ई. में गांव कोटली फकीर चंद जिला स्यालकोट (पाकिस्तान) में अपने पिता जवाहर सिंह जी के स्वार्गवास होने के चार महीने बाद हुआ। बाबा जी के बुजुर्ग करतार पुर तथा डेरा बाबा नानक के रहने वाले थे और वहां से आकर कोटली फकीर चंद में बस गये थे। क्योंकि बाबाजी के दादा के दादा फकीर चंद कोटली में आकर बस गये इसलिए गांव कोटली के साथ उनका नाम जुड़ गया और वह गांव कोटली फकीर चंद के नाम से ही जाना जाने लगा। गुरु नानक देव जी के वंशज होने के कारण बाबा जी भी धर्मात्मा पुरुष थे इसलिए थोड़े ही समय में लोगों में प्रसिद्ध हो गये। उस इलाके का एकमात्र स्वामी एक मुगल लाल बेग था। उस के घर संतान नहीं थी इसलिए वह बाबा फकीर चंद जी की शरण में आया और उन के आर्शीवाद से लाल बेग के घर एक बेटे ने जन्म लिया। बेटे के जन्म पर प्रसन्न होकर लाल बेग ने सारा गांव बाबा जी के नाम कर दिया।

बाबा सुन्दर सिंह जी के आध्यात्मिक गुरु उन के चाचा बिशन सिंह जी ही थे जिन से बाबा जी ने पांच वर्ष की आयु में ही गुरुवाणी का उच्चारण तथा व्याख्या

सीख ली थी। इस छोटी सी आयु में ही वह अपने साथियों से खेलने की बजाय प्रभु भक्ति में खुश रहते थे। उनके घर का वातावरण भी धार्मिक था और हर समय वहां गुरुवाणी का पाठा होता रहता था। सब मिल कर भजन कीर्तन करते और साधु संतों की दिल से सेवा करते थे। ऐसे वातावरण में बालक सुन्दर सिंह जी श्री गुरु ग्रंथ साहिब के रसीले पाठी बन गये। उनकी माता जी उन से कई बार कहतीं कि बाहर जाकर बच्चों से खेलो परन्तु बाबा जी उत्तर देते कि जिन के साथ मैंने खेलना है वह तो घर में ही हैं फिर बाहर जाने की क्या आवश्यकता है वही तो मेरे सच्चे साथी हैं। मुझे तो बस उनके साथ खेलने में ही मज़ा आता है। उन्होंने कई बार अपने चाचा जी तथा माता जी से कहा कि वह ईश्वर भक्ति के लिए घर छोड़ कर कहीं दूर जाना चाहते हैं परन्तु हर बार उनको ऐसा करने से रोका गया। आखिर एक रात उन्होंने रात के समय अपनी माता जी की चारपाई की परिक्रमा की। उनको नमस्कार किया और चुपचाप घर से बाहर निकल आए और फिर कभी घर वापिस नहीं गये।

ईश्वर की भक्ति करने के लिए वह किसी एकान्त स्थान की खोज में थे ताकि उनकी तपस्या में किसी प्रकार का विध्न न पड़े। कोटली फकीर चंद से चलने के बाद बाबा जी कई स्थानों पर गये। हर स्थान पर लोगों ने उनका स्वागत किया और उनका सत्संग सुनने के बाद बड़ी संख्या में लोग उनके शिष्य बनते गये। कुछ दिन एक स्थान पर रहने के बाद वह दूसरे स्थान की ओर चल देते थे। अपनी यात्रा के दौरान उनको अखनूर आने का अवसर मिला। यहां चंद्र भागा नदी के दायें किनारे बियाबान जंगल में बाबा दीदार सिंह जी की कुटिया में पहुंचे। उनको नमस्कार किया और वहीं उन के पास बैठ गये। बाबा दीदार सिंह जी सिख धर्म के प्रचारक थे। उन्होंने बाबा सुन्दर सिंह जी से पूछा ''बेटा तुम कौन हो और कहां से आए हो ?'' बाबा सुन्दर सिंह जी ने उत्तर दिया, ''मै कोटली फकीर चंद से आया हूं। मेरा संबंध गुरु नानक देव जी की दसवीं पीढ़ी से है।'' बाबा दीदार सिंह ने अपनी दिव्य दृष्टि से ही बाबा सुन्दर सिंह की आध्यात्मिक शक्ति का अनुमान लगा लिया था। बाबा सुन्दर सिंह जी ने कहा कि मैं ईश्वर की आराधना के लिए यहां आया हूं और आपके पास ही रहूंगा। आप मेरा मार्ग दर्शन करें।

बाबा दीदार सिंह जी ने कहा, ''बेटा तुम इस एकान्त तपोभूमि में ईश्वर की तपस्या करो परन्तु आप को खाना यहीं गुरु जी के लंगर में खाना होगा।''

बाबा सुन्दर सिंह जी मान गये। उन्होंने बाबा दीदार सिंह को चाचा कहना शुरू

कर दिया। बाबा दीदार सिंह ने उनको अपने पास रख लिया। अब वह जहां भी धर्म प्रचार के लिए जाते बाबा सुन्दरी सिंह जी को अपने साथ ले जाते थे। उनकी मधुर वाणी से गुरु ग्रंथ साहिब का पाठ सुनकर श्रद्धालु मंत्र मुग्ध हो जाते थे।

एक दिन बाबा दीदार सिंह जी एकान्त में बैठे गुरु महाराज जी से बातें कर रहे थे। उनसे शिकायत कर रहे थे। उन से शिक्वा कर रहे थे। बाबा सुन्दर सिंह जी उनके पास गये और पूछा कि क्या बात है। आप दुखी नज़र आ रहे हैं और आप गुरु महाराज जी से बातें भी कर रहे हैं। बाबा दीदार सिंह ने कहा ईश्वर से गिला कर रहा हूं कि आप ने सब कुछ दिया जायदाद के साथ साथ सेवकी भी दी परन्तु घर की रौनक नहीं दी। आप गुरु नानक जी के वंशज हैं इसलिए उस परमपिता से मेरे लिए प्रार्थना करें। बाबा सुन्दर सिंह जी ने कहा कि उसके घर में देर हैं अन्धेर नहीं। आप निश्चिंत रहें। वह सब की मनोकामना पूरी करते हैं। कुछ समय के बाद बाबा दीदार सिंह जी के घर में पुत्र ने जन्म लिया। उस समय उन्होंने बाबा सुन्दर सिंह जी को गले लगा लिया और अपना विशेष शिष्य बना लिया।

कई गांव में धर्म प्रचार करने के बाद एक दिन बाबा दीदार सिंह जी, बाबा सुन्दर सिंह जी के साथ अली बेग (पाक अधिकृत कश्मीर) पहुंचे जहां कुछ सिख परिवार रहते थे। वहां की सिख संगत बाबा सुन्दर सिंह जी की मधुर वाणी से अखंडपाठ सुन कर बड़े प्रभावित हुई उन्होंने बाबा दीदार सिंह जी से प्रार्थना की कि आप बाबा सुन्दर सिंह जी को यहीं छोड़ जायें ताकि हम प्रतिदिन उनकी मधुर वाणी से गुरु ग्रंथ साहिब जी का पाठ सुनकर परम आनंद को प्राप्त कर सकें। वहां की सिख संगत के अनुरोध पर बाबा सुंदर सिंह जी अली बेग में ही रह गये। सिख संगत ने वहां एक गुरुद्वारे का निर्माण भी कराया। इस के बाद बाबा जी तीन साल तक वहां रहे। एक बार वह दीपावली के पर्व पर अमृतसर गये और वहां संतों महात्माओं के साथ रहे। फिर वह कशी चले गये और वहां जाकर संस्कृत की शिक्षा प्राप्त की। वहां बाबा जी एक महात्मा जी के पास रहने लगे जो बाबा सुन्दर सिंह जी की आध्यात्मिक शक्ति को पहचान चुके थे।

डा. सुखदेव सिंह जी के एक लेख के अनुसार फरवरी 1905 ई में ज्वालामुखी में एक विस्फोट हुआ तथा कांगड़ा में जबरदस्त भूकम्म आया जिस के कारण लोगों का बहुत जानी तथा माली नुकसान हुआ। बाबा जी को इस घटना से बहुत दुख हुआ। वह प्रभावित लोगों की सहायता करने के लिए कांगड़ा चले गये और संगत

के साथ पीड़ित लोगों की सहायता की। वह 6 महीने तक वहां रहे और फिर बनारस चले गये। फिर वह महात्मा जी के साथ अमृतसर तथा ननकाना साहिब आदि स्थानों पर गये और अंत में 1909 ई. के बाद वह अली बेग में ही रहने गले। उन्होंने उस क्षेत्र में बहुत से गुरुद्वारों का निर्माण करवाया और बिना किसी मतभेद के सभी लोगों को गुरु साहिबान की शिक्षा पर चलने का संदेश दिया। बाबा जी चाहते थे कि समाज से जात-पात, ऊंच-नीच, छोटे-बड़े का अन्तर मिट जाए और सब मिल जुल कर भाईयों की तरह रहें। एक परिवार की भान्ति एक दूसरे के सुख दुख में शामिल हों। उन्होंने 1947 के फसादात तथा अफरातफरी की भविष्यवाणी बहुत पहले कर दी थी। अखनूर में गुरुद्वारा तपोस्थान बाबा सुन्दर सिंह जी अली बेग वाले का निर्माण इस अभिप्राय से किया गया ताकि यहां से गुरु नानक देव जी के आपसी भाईचारे का संदेश दूर दूर तक पहुंचाया जा सके।

जिला गुजरात तथा जेहलम के बहुत से सिख परिवार काम काज के लिए उत्तरी भारत के शहरों में बसे हुए थे। उन की भावनाओं का आदर करते हुए बाबा सुन्दर सिंह जी यूं पी. सी.पी. तथा बिहार में भी प्रचार करने के लिए गये और सबको नेक कमाई करने, पुण्यदान करने तथा प्रेमभाव से रहने का उपदेश दिया। संत जी कानपूर भी गये वहां सिखों के अतिरिक्त अन्य धर्मों के मानने वाले भी उन के श्रद्धालु बन गये और वहां 1938 ई. को बैसाखी के दिन एक नव निर्मित गुरुद्वारे का उद्घाटन किया। जिस में लंगर तथा संगत के रहने का प्रबंध भी किया गया। 1940 में आप ने कई तीर्थस्थलों की यात्रा की।

बाबा सुन्दर सिंह जी की तरह ही बाबा मोहन सिंह जी के दिल में भी एक प्रबल इच्छा थी कि किसी संत महात्मा से मिलाप हो। वह गुजरात, लाला मूसा होते हुए कीर्तन गढ़ पहुंचे। वहां उन्होंने गुरुद्वारे में सेवा करनी शुरू कर दी। जब संत सुन्दर सिंह जी बाहर जाते तो डेरे का प्रबंध मोहन सिंह जी संभालते थे। इन तमाम गुणों के कारण सुन्दर सिंह जी उनको "बाबा जी " कहकर पुकारते थे। बाबा मोहन सिंह जी के सेवाभाव को देखकर एक दिन बाबा सुन्दर सिंह जी ने उनको बड़े प्यार से अपने पास बिठाया, और कहा, "तुम्हारी सेवा सम्पूर्ण हुई, अब तुम सुमिरण करो" बाबा मोहन सिंह जी ने संत जी के चरणों में शीश झुकाया और हाथ जोड़ कर विनती की, "ढंग बताओ"। हुक्म हुआ "एकाग्र, एकान्त चित होकर बैठो और गुरु मंत्र का अभ्यास करो" बस फिर क्या था सुमिरण शुरू हो गया। सेवा तथा सुमिरण के

सदके वह महात्मा बन गये। संत जी उन को पंजाब से बाहर भी ले जाते थे।

जिस प्रकार कई कई सालों का जीवन जीने और तपस्या करने के बाद सभी ऋषि मुनि, पीर फकीर तथा महात्मा भी सच्चखंड के निवासी बने उसी प्रकार बाबा सुन्दर सिंह जी भी सच्च खंड जाने की तैयारी करने लगे। संत महात्मा जानी जान होते हैं। उनको पता चल जाता है कि उन का अन्त समय निकट आ गया है इसलिए वह जाने की तैयारी शुरू कर देते हैं। बाबा सुन्दर सिंह जी ने 1943 ई. में गुरुद्वारे में लंगर के लिए बहुत सा सामान इकट्ठा कर लिया। सब पूछते बाबा जी आप इतना सामान क्यों इकट्ठा कर रहे हैं तो बाबा जी उत्तर देते ''संगत खायेगी''

11 पौष एतवार को बाबा मोहन सिंह जी उन के पास आकर बैठे और कहा, ''महाराजा जी दर्शन दो'' हुक्म हुआ, ''सतनाम भली करेंगे, बहुत बड़ी संगत आ गई है लंगर तैयार करें।'' 12 पौष को बाबा जी के अन्तिम संस्कार की तैयारी शुरू हो गई। सारे देश से सिख संगत पहुंची। बाबा सुन्दर सिंह जी को सुन्दर शालों तथा वस्त्रों में लपेट कर चिता पर रख दिया गया। बाबा मोहन सिंह जी ने चिता को आग लगा दी।

15 अगस्त 1947 को भारत दो भागों में बंट गया और एक नया देश पाकिस्तान के नाम से संसार के मानचित्र पर उभर कर सामने आया। जम्मू कश्मीर के कई भागों पर पाकिस्तान ने अधिकार कर लिया। हजारों लोग शहीद हो गये। कई परिवार पूर्ण रूप से समाप्त हो गये। बाबा मोहन सिंह जी अपने कुछ साथियों के साथ जम्मू आ गये। फिर अमृतसर और दिल्ली की ओर कूच किया। यहां भी उनको कीर्तन गढ़ आदि क्षेत्रों की तबाही की खबरें मिलती रहीं। अन्त में कानपुर की सिख संगत के अनुरोध पर वहां पहुंचे और वहां सुन्दर नगर में एक गुरुद्वारा बनाया। अली बेग की तरह कानपुर में भी स्कूल खोला जो अब कालेज बन गया है। बाबा मोहन सिंह जी इस समय कानपुर के गुरूद्वारे की गद्दी पर विराजमान हैं और महन्त सुन्दर सिंह जी के बताए हुए रास्ते पर चलते हुए अपना कर्तव्य निभा रहे हैं। उन में बाबा सुन्दर सिंह जी के ही गुण हैं। उन की पावन तथा महान आत्मा प्रत्यक्ष रूप में बाबा मोहन सिंह जी के अन्दर समाई हुई है। मोहन सिंह जी के श्रद्धालुओं में सभी धर्मों के लोग शामिल हैं। और वह गुरु साहिबान की पवित्र वाणी का प्रचार करने में लगे हैं। वह भी अपने शिष्यों को एक अच्छा इनसान बनने तथा महापुरुषों के बताए हुए रास्ते पर चलने की प्रेरणा देते हैं। अखनूर में गुरुद्वारा बाबा

सुन्दर सिंह जी के निर्माण में सरदार एच. एस. बाली जी का बड़ा योगदान है। एक बार उन्होंने सेवक छैबर सिंह द्वारा लिखित बाबा सुन्दर सिंह जी के जीवन पर एक पुस्तक पढ़ी तो उन्होंने उस स्थान की खोज करने का बीड़ा उठाया जहां चिनाब नदी के किनारे सुन्दर सिंह जी ने तपस्या की थी। ईश्वर की कृपा से वह अपने इस पवित्र लक्ष्य में सफल हुए और बाबा जी का तपस्या स्थल ढूंढ लिया। कानपुन जाकर बाबा मोहन सिंह जी की आज्ञा लेकर तमाम सिख संगत तथा अन्य श्रद्धालुओं के सहयोग से इस भव्य गुरुद्वारे का निर्माण कार्य आरम्भ करवा दिया जो इस समय 8 कनाल भूमि पर फैला हुआ है जहां सुबह शाम पवित्र गुरुवाणी का पाठ होता है। गुरुद्वारे में संगत के रहने तथा खाने पीने का उचित प्रबंध किया गया है। सेवक संगत के सुख सुविधा का पूरा ध्यान रखते हैं। प्रतिदिन लंगर का प्रबंध किया जाता है।

देश के बंटवारे के बाद अली बेग के आध्यात्मिक केंद्र का काम कानपुर में स्थापित हो गया जहां बाबा मोहन सिंह जी उन के काम को आगे बढ़ा रहे हैं। गुरुद्वारा बाबा सुन्दर सिंह अखनूर का प्रबंध जिन सेवकों के हाथ में है वह पूरे तन, मन तथा लगन से काम कर रहे हैं और गुरु कृपा से इस तपोस्थल को और अधिक सुन्दर और आकर्षित बनाने में लगे हैं। वहां के सेवादार मैनेजर तथा ग्रंथी जी सभी श्रद्धालुओं का हार्दिक स्वागत करते हैं और सब को बड़े प्यार से चाय पीने तथा लंगर खाने को कहते हैं। इस गुरुद्वारे को बने अभी दो तीन साल ही हुए हैं, इसलिए अभी यहां बहुत कुछ करना बाकी है। योजना बद्ध तरीके से यहां पर एक वृद्ध आश्रम, अनाथालय, संगीत विद्यालय, कालेज तथा औषधालय, खोला जायेगा जहां गरीबों तथा बेसहारा लोगों की सहायता की जायेगी और उन को शिक्षा तथा उपचार की सहूलियत देने के उचित प्रबंध किये जाएंगे।

सैन्ट पाल चर्च-जम्मू

जम्मू की पवित्र धरती सदियों से धर्मनिरपेक्षता की एक मिसाल रही है जहां हिन्दू, मुसलमान, सिख, ईसाई, जैनी सब भाईयों की तरह रहते हैं। जम्मू में धार्मिक पर्वों पर आपसी भाईचारे का दृश्य देखने को मिलता है जब धार्मिक जलूसों तथा झांकियों के अवसर पर नगरवासियों की ओर से तमाम रास्ते में छबीलें लगाई जाती हैं और प्रसाद बांटा जाता है। मन्दिरों की अधिक संख्या होने के कारण जम्मू को 'मन्दिरों का शहर' कहा जाता है। मन्दिरों के अतिरिक्त यहां गुरुद्वारे, गिरजाघर तथा अन्य धर्मों के पूजा स्थल भी हैं, जो इस शहर की एकता तथा धर्मनिरपेक्षता के प्रतीक हैं। कुछ समाज विरोधी तत्वों को यहां के लोगों का भाईचारा तथा मेल मिलाप एक आंख नहीं भाता और वे इस यत्न में रहते हैं कि दंगे फसाद करवाकर यहां के शांत वातावरण को खराब किया जाये परन्तु इस शहर के शान्ति प्रिय लोगों ने ऐसे समाज विरोधी तत्वों के हर यत्न को असफल कर दिया और सदियों पुराने सम्बंधों को हर कीमत पर कायम रखा। यही नहीं राष्ट्रीय पर्वों को मनाने में भी सब लोग बिना किसी मतभेद के बढ़-चढ़ कर भग लेते हैं और सरकारी भवनों के अतिरिक्त लोग शहर की गलियों तथा बाजारों को भी राष्ट्रीय झंड़ों तथा रंग बिरंगी रोशनियों से सजाते हैं।

जम्मू शहर में ईसाई धर्म के मानने वालों की संख्या बेशक कम है परन्तु इस शहर में मनाए जाने वाले धार्मिक तथा राष्ट्रीय पर्वों के अवसर पर वे किसी से पीछे नहीं रहते और उनको मनाने में अपना पूर्ण योगदान देते हैं। धार्मिक नियमों पर चलते हुए वे ईसा मसीह के बताए हुए सत्य मार्ग पर चल कर अन्य धर्मों का भी आदर करते हैं। दंगा, फसाद, लड़ाई झगड़ा तथा झूठ और अन्याय से हट कर वे धर्म, सच्चाई तथा नेकी के मार्ग पर चलना अधिक पसंद करते हैं। आज तक उन्होंने कोई ऐसा कार्य नहीं किया जिससे यहां की शांति भंग होती हो। प्रभु ईसा मसीह ने समस्त मानव जाति से प्रेम करने, सब से मिलजुल कर रहने तथा सभी धर्मों का आदर करने का जो संदेश दिया है उसका अनुकरण करते हुए सब से सदव्यवहार करते तथा सादा जीवन व्यतीत करते हैं।

जम्मू में अन्य धर्मों के पूजा स्थलों के साथ साथ गिरजाघरों का भी निर्माण हुआ है। इस समय जम्मू में लगभग एक दर्जन के करीब गिरजाघर हैं परन्तु इस शहर का

प्राचीन गिरजाघर वीरमार्ग (पुराना नाम रैजीडेंसी रोड) पर स्थित है जो 'सैन्ट पाल चर्च' के नाम से प्रसिद्ध है जहां रविवार तथा अन्य धार्मिक पर्वों पर श्रद्धालुओं की भीड़ होती है। भक्तजन इस अवसर पर प्रार्थना करते हैं और प्रभु यसू महीह के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करते हैं। प्रभु का आशीर्वाद प्राप्त कर अपनी मनोकामनाएं पूरी करते हैं। प्रभु यसू मसीह के दरबार में सब बराबर होते हैं और वह बिना किसी मतभेद के भक्तों को पापों से मुक्ति दिलाते हैं। सच्चे दिल से उनको याद करने वाला सदा सुखी रहता है। इस गिरजाघर में क्रिसमिस, गुडफ्राईडे तथा ईस्टर के अवसर पर विशेष समारोहों का आयोजन किया जाता है। उस समय देश के अन्य भागों से विद्धानों, पादरियों, तथा धर्म प्रचारकों को यहां बुलाया जाता है, जो प्रभु यसू मसीह के जीवन तथा उनकी शिक्षा पर प्रकाश डालते हैं। इन पर्वों तथा समारोहों में जम्मू शहर में रहने वाले अन्य धर्मों के लोग भी भाग लेते हैं। प्रभु यसू मसीस के जन्म दिन 25 दिसम्बर को विशेष तौर पर यहां बहुत रौनक होती है। उस समय गिरजाघर को बहुत ही सुन्दर ढंग से सजाया जाता है और शहर में झांकियां निकाली जाती है।

एक लेख के अनुसार स्काटिश चर्च के प्रचारक श्री वारिस मसीह सेयाल कोट से जून 1862 में पहली बार प्रभु यसू मसीह की शिक्षा का प्रचार करने जम्मू आये थे। क्योंकि उन दिनों राज्य में ईसाई धर्म का प्रचार करने की अनुमति नहीं थी इसलिए उनको जेल में बंद कर दिया गया। उनके बन्दीकरण का समाचार जब सेयालकोट पहुंचा तो उनको छुड़ाने के लिए रैवरैन्ड राबर्ट पीटरसन जम्मू पहुंचे। उस समय जम्मू कश्मीर राज्य पर महाराजा रणवीर सिंह का शासन था। यह बात उल्लेखनीय है कि चर्च मिशनरी सोसाइटी इंग्लैड के प्रचारक महाराजा गुलाब सिंह के शासनकाल में श्रीनगर पहुंच चुके थे। परन्तु जम्मू में प्रचार की अभी शुरूआत नहीं हुई थी। जम्मू कश्मीर राज्य पर उस समय डोगरा महाराजाओं का शासन था और वे शासन चलाने में स्वतन्त्र भी थे। परन्तु उनके काम काम की निगरानी के लिए अंग्रेजी सरकार ने यहां रैजीडेंट नियुक्त किया हुआ था। अंग्रेजी सरकार का यह प्रतिनिधि इसी क्षेत्र में रहता था जिस कारण इस मार्ग का नाम रैजीडेंसी रोड रखा गया । यह क्षेत्र जम्मू शहर का सबसे सुन्दर तथा बारौनक क्षेत्र था और आज भी है। अंग्रेज रैजीडेंट से मिलने के लिए सेयालकोट तथा भारत के अन्य शहरों से अंग्रेज यहां आते थे और उनको प्रार्थना करने में कठिनाई आती थी क्योंकि जम्मू

शहर में उस समय कोई गिजराघर नहीं था। 1885 ई. में प्रताप सिंह जी अपने पिता महाराजा रणवीर सिंह की मृत्यु के बाद जम्मू कश्मीर राज्य के महाराजा बने। वह धार्मिक विचारों के थे और हिन्दू धर्म के साथ साथ अन्य धर्मों का भी आदर करते थे। उनके शासन काल में जम्मू शहर तथा उसके आस पास कई पीर फकीर आये जिनको महाराजा प्रताप सिंह ने हर प्रकार की सुविधा दी। महाराजा प्रताप सिंह भी समय समय पर रैजिडैंट से मिलने उनके निवास स्थान पर आते थे। उन्होंने भी महसूस किया कि जम्मू शहर में सभी धर्मों के पूजा स्थल हैं परन्तु ईसाईयों के लिए नहीं। इससे पहले 1877 ई. में राज्य सरकार ने सकाटलैंट चर्च से प्रार्थना की कि जम्मू में मिशन स्कूल खोला जाये परन्तु वहां ईसाई धर्म के प्रचार की आज्ञा नहीं होगी। यह प्रार्थना आस्वीकार की गई। परन्तु 1888 ई. में रैवरैन्ड टहल सिंह जम्मू आने में सफल हुए। उन्होंने यहां आकर मन्दिरों के पुजारियों से बातचीत और उनको सूचित किया कि सरकार की ओर से आदेश जारी किया गया है कि यहां आने वाले ईसाई धर्म के प्रचारकों को परेशान न किया जाये। उन दिनों अन्य प्रचारक भी जम्मू शहर में आए क्योंकि सरकार की ओर से जारी आदेश के अन्तर्गत अब उनको परेशान नहीं किया जाता था। उन दिनों डां. हटसन भी जम्मू आया करते थे और रैवरैंड जान फोर्बस वाईट यंग सन भी कई बार यहां आएं। इन दोनों प्रचारकों को 1890ई. में महाराजा प्रताप सिंह से मिलने की आज्ञा मिली। महाराजा इन दोनों की बातचीत से बड़े प्रभावित हुए और उनको जम्मू शहर तथा जम्मू जिला में ईसाई धर्म का प्रचार करने की अनुमति दे दी। इसके बाद रैजिडेंट कर्नल निस्वेत तथा राज्य सरकार के अधिकारियों ने जम्मू में इस कार्य को प्रोत्साहन दिया और ईसाई धर्म का प्रचार जोरों से होने लगा। महाराजा प्रताप सिंह जी भी समय समय पर इन प्रचारकों को दरबार में बुलाते थे और उनसे यसू मसीह के जीवन तथा उनकी शिक्षाओं बारे जानकारी प्रास करते थे। 1892ई. में महाराजा प्रताप सिंह ने मिशन स्कूल खोलने की आज्ञा दे दी। एस.पी.जी (सोसाईटी फार प्रोमोशन आफ गास्पल) का मिशन जम्मू में सफल न रहा। उनके पादरी यहां जमाएत बनाने में असफल रहे। वे लोगों को इकट्ठा न कर सके इसलिए उन्होंने यहां की जमीन चर्च आफ सकाटलैंड को दे दी। रैवरैंड यंगसन सकाटिश मिशन के पहले पादरी थे जो स्थाई रूप से यहां आए। उन्होंने महाराजा बाहदुर से प्रार्थन की कि उनको यहां मकान बनाने की आज्ञा दी जाये ताकि वह यहां रह कर सुचारु रूप से अपना काम

कर सकें। महाराजा बहादुर ने मिशन हाऊस के लिए जमीन अलाट कर दी और 7 मार्च 1893 ई. के शुभ दिन मिशन हाऊस का नींव पत्थर रखा गया। जम्मू में यह पहला मौका था कि किसी यूरोपीय को मकान बनाने की अनुमति दी गई हो।

श्रीमती एस्थर विलियम प्रिंसीपल अलैगजंडर हाई स्कूल जम्मू के अनुसार यह स्कूल पहले स्काट मिशन स्कूल के नाम से जाना जाता था जो केवल प्राईमरी तक ही था ओर उस में केवल अमीर घरानों के लड़के ही शिक्षा प्राप्त करते थे। उन दिनों ईसाई तबका बहुत पिछड़ा हुआ था। इसलिए वे बच्चों को स्कूल नहीं भेजते थे। 1950ई में यह मिडल स्कूल बना और 1960 ई. में हाई स्कूल। अब तो यहां लड़के तथा लड़कियां शिक्षा प्राप्त कर रहे हैं। उस समय स्कूल परिसार में छोटे से चर्च का निर्माण भी किया गया जो अब भी है।

1902ई. में मिशन हाऊस का निर्माण कार्य पूरा हुआ और डां. जे एफ.डब्ल्यू. यंगसन पहले प्रचारक थे जो यहां रहने लगे। मिशन हाऊस बनने के पश्चात डां. जान फोबरस, वईट यंगसन ने महाराजा प्रताप सिंह से प्रार्थना की कि जम्मू में अब ईसाईयों की संख्या बढ़ती जा रही है इसलिए यहां बड़ा गिरजाघर बनाने की आज्ञा दी जाये ताकि ईसाई भाईयों को प्रभु यसू मसीह की आराधना करने में सुविध हो।

10 अक्तूबर 1905 को श्री यंगसन यहां से चले गये और उनका स्थान रैवरैंड जान ए अलैगजेंडर ने संभाला। वह राजा अमर सिंह के मित्र थे इसलिए उन्होंने भी महाराजा प्रताप सिंह से चर्च बनाने के लिए भूमि अलाट करने की प्रार्थना की। महाराजा प्रताप सिंह जी 1925 ई. को स्वर्ग सिधार गये और राजा अमर सिंह के पुत्र हरि सिंह जी जम्मू कश्मीर राज्य के महाराजा बने। वह भी महाराजा प्रताप सिंह की तरह धार्मिक विचारों के थे। वह भी अपने राज्य में सभी धर्मों को फूलता फलता देखना चाहते थे इसलिए उन्होंने 1928 ई. में अंग्रेजी रैजिडेंट की कोठी के पास ही सैंट जान पाल चर्च के निर्माण के लिए भूमि अलाट कर दी और 10 मई 1929 ई. को मिस इसाबेला पलम्ब ने सैंट पाल चर्च का नींव पत्थर रख। उस दिन ईस्टर का पर्व था और सोसाईटी फार प्रमोशन आफ गास्पल (एस.पी.जी.) के प्रतिनिधि तथा स्थानीय लोग इस अवसर पर उपस्थित थे।

उस समय जो पादरी साहिब मिशन हाऊस में रहते थे वही स्कूल का प्रबंध भी चलाते थे।

1902 से 1928 ई. तक मिशन स्कूल को चलाने में सहयोग देने तथा ईसाई धर्म

का प्रचार करने के लिए बहुत से प्रचारक जम्मू आते थे। समय समय पर यहां धार्मिक सभाओं का आयोजन भी किया जाता था जिस में सेयालकोट तथा देश-विदेश के विद्धानों को बुलाया जाता था। मिस पलम्ब ने यहां लड़कियों के लिए भी स्कूल खोला और वह सेयालकोट से नियमित यहां आया करती थीं। वह सयालकोट में डब्ल्यू एम.एफ मिशन की प्रचारक थी। बाबू घसीटा राम ने भी ईसाई कालोनियों में बड़ी लगन से काम किया। प्रभु यसू मसीह के श्रद्धालु तथा सेवक मुंशी अनायत उल्ला ने भी जम्मू के लोगों में ईसाई धर्म का प्रचार किया। अखनूर, रियासी तथा उधमपुर में भी क्रिश्चयन कालोनियां बन गई थीं जो जम्मू में रहने वाले ईसाई भाईयों से जुड़े हुए थे और पर्वों के समय इकटठे होते थे। रामनगर में भी कुछ लोगों ने ईसाई धर्म को अपना लिया था और कुछ ईसाई साम्बा में भी आबाद हो गये थे। जम्मू में मिशन हाऊस के निर्माण से सेयालकोट तथा जम्मू के मध्यवर्ती क्षेत्र में ईसाई धर्म का प्रचार जोरों पर था। रैवरैन्ड हाकम शाह ने चकरोही गांव (आर.एस.पुरा) के आस पास प्रचार किया और बाबू ढूंडा मल ने इस काम को आगे बढ़ाया। जम्मू शहर में मास्टर सादिक मसीह ने स्कूल में काम किया। उनके बाद यह जिम्मेदारी बाबू यूसफ तथा उनकी पत्नी फोएबे ने संभाली। श्रीमती अलैग़जेंडर तथा श्रीमती फोएबो ने मिलकर लड़कियों तथा स्त्रियों की भलाई के लिए काम किया और उनको पढ़ने लिखने तथा घरेलू काम सीखने के लिए प्ररेत किया। उन दिनों ईसाई समुदाय के लोग लड़कियों को पढ़ाने में रुचि नहीं लेते थे। लड़कियों तथा स्त्रियों को शिक्षित करने की जिम्मेदार डब्ल्यू एफ.एम. ने ली और मिस दलगलेश को यहां भेजा। इस शुभ कार्य में श्रीमती हमपरी, श्रीमती मुकरजी तथा मिस बोस ने पूर्ण योगदान दिया। उनके यत्नों से इस पिछड़े तबके में जागृति पैदा हुई और वे लड़कियों को स्कूल भेजने लगे।

श्रीमती एस्थरा विलियम ने बताया कि रैवरैंड यंगसन के बाद रैवरैंड पीटर सन तथा उनके बाद रैन्वरैंड अलैगजेंडर साहिब यहां पादरी पद पर नियुक्त हुए और सैन्टपाल चर्च तथा स्कूल का प्रबंध संभाला। रैवरैंड अजीज विलियम विभाजन से पहले 1942ई. में इस चर्च के पादरी नियुक्त हुए। वह पहले भारतीय थे जो इस पद पर नियुक्त हुए। वह सेलयालकोट से यहां आए और वही स्कूल का प्रबंध भी देखते थे। जम्मू क्षेत्र में ईसाई साम्प्रदाय के पिछड़ेपन को देखकर उनको बड़ा दुख हुआ। श्री अज़ीज विलियम जी ने लोगों को शिक्षा के महत्व बारे जानकारी दी और

उनको मजबूर किया कि बच्चों के उज्जवल भविष्य के लिए स्कूल भेजें क्योंकि बिना शिक्षा ग्रहण किये वे समाज में उच्च स्थान प्राप्त नहीं कर सकेंगे। रैवरैंड अजीज विलियम के यत्नों से ईसाई साम्प्रदाय में जागृति आई और उन्होंने अपने बच्चों को स्कूल भेजना शुरू किया। उनके यत्नों से आज ईसाई साम्प्रदाय के बच्चे डाक्टर, अध्यापक, प्रोफैसर, स्वास्थ्य विभाग, पुलिस तथा अन्य सरकारी नौकरियां कर रहे हैं। श्री अजीज विलियम जीवन भर ईसाई साम्पदाय की सेवा करते रहे। पूरा समय स्कूल में काम करते परन्तु स्कूल से उन्होंने वेतन के तौर पर कुछ नहीं लिया। 1944 में उनका विवाह श्रीमती लिल्ली जी से सम्पन्न हुआ। वह रतलाम (मध्यप्रदेश) की रहने वाली थी और सेयालकोट के एक अस्पताल में नर्स के पद पर नियुक्त थीं। मिशनरी वालों ने ही उनका विवाह करवाया था। जम्मू आकर उन्होंने समाज सेवा के कार्यों में श्री अजीज विलियम को पूर्ण सहयोग दिया। पति पत्नी दोनों अपने सुख चैन की परवाह किया बिना लोगों के घरों में जाकर उनका हाल पूछते और जरुरतमन्दों की सहायता करते थे। और शहर में होने वाले सभी धार्मिक, सामाजिक तथा राष्ट्रीय पर्वों पर आयोजित कार्यक्रमों में बढ़-चढ़ कर भाग लेते थे। वह 47 वर्ष तक जम्मू शहर के लोगों की बिना किसी भेदभाव के सेवा करते रहे और 16 अक्तूबर 1989 को 79 वर्ष की आयु में यह संसार छोड़ कर चले गये। दीन दुखियों की सेवा करने में उनको आनन्द प्राप्त होता था। उनके घर चार पुत्र तथा एक पुत्री ने जन्म लिया। तीन पुत्र प्रभु को प्यारे हो गये और चौथे जानी विलियम जी राज्य सरकार के पुलिस विभाग में इस समय एस.एस.पी. के पद पर नियुक्त हैं। कई लोगों ने अजीज विलियम जी को यहां तक कहा कि घर छोड़कर कहीं दूर चले जाओ परन्तु वह कहते कि जिस मिशन को लेकर जम्मू आया हूं उसे पूरा करके ही जाऊंगा।

1978 ई. में पादरी अजीज विलियम बिशअप बने और पांच साल तक इस पद पर आसीन रहे। उन्हें पंजाब, हिमाचल प्रदेश, तथा जम्मू कश्मीर राज्यों का दौरा करना पड़ता था परन्तु स्कूल की ओर भी वह पूरा ध्यान रखते थे। बिशअप अजीज विलियम के बाद रैवरैंड सी.एम. खन्ना इस चर्च के पादरी नियुक्त हुए। उन्होंने भी श्री अजीज विलियम के पदचिन्हों पर चलते हुए ईसाई समुदाय की भलाई बेहतरी के लिए अनथक यत्न किए। जब रैवरैंड चंद्रमणी खन्ना सैंट पाल चर्च में आये वह सहायक पादरी थे। सेवानिवृत रैवरैंड अजीज विलियम के स्वर्गवास होने पर श्री

खन्ना प्रधान पादरी नियुक्त हुए। कुछ महीने पहले रैवरैंड श्री सी.एम. खन्ना की तब्दीली श्रीनगर की गई और उनके स्थान पर रैवरैंड श्री सोहन लाल जी सैन्ट पाल गिरजाघर के पादरी नियुक्त हुए। जम्मू में रैजीडैंसी रोड पर स्थित सैन्टपाल का यह चर्च, चर्च आफ नार्थ इंडिया डायोसिस अमृतसर की निगरारी में हैं।

चर्च में हर रविवार को श्रद्धालु बड़ी संख्या में आकर भजन कीर्तन करते हैं। रैवरैंड सोहन लाल जी पवित्र धार्मिक ग्रंथ बाईबल के हवाले से श्रद्धालुओं को प्रभु यसू मसीह की शिक्षा पर चलने, सब से मिलजुल कर रहने तथा आपसी भाईचारा बनाये रखने की प्ररेणा देते हैं। रैवरैंड श्री सोहन लाल जी स्थानीय लोगों से मेल मिलाप बनाने तथा ईसाई साम्प्रदाय की भलाई के कामों में विशेष रुचि ले रहे हैं ताकि स्वर्गवासी अजीज विलियम तथा श्री खन्ना साहिब के काम को आगे बढ़ाया जा सके और सदियों से दबे कुचले ईसाई साम्प्रदाय को समाज में अन्य तबकों के समान अधिकार प्राप्त हो सकें। यूं तो समय समय पर यहां सम्मेलनों का आयोजन किया जाता है परन्तु यसू मसीह के जन्म दिवस 25 दिसम्बर, गुडफराईडे तथा ईस्टर पर विशेष कार्यक्रम आयोजित किये जाते हैं। यसू मसीह के जन्मदिन पर तो शहर में झांकियां निकाली जाती हैं और बाजारों को झंडियों तथा रोशनियों से सजाया जाता है। शहर के सभी गिरजाघरों में खूब चहल पहल होती है। गिरजाघरों में विशेष प्रार्थनाओं का आयोजन किया जाता है। जम्मू का यह एक मात्र चर्च तथा मिशन हाऊस है जो स्काटिश वास्तुकला का अद्‌भुत नमूना तथा जम्मू की अमूल्य विरास्त का प्रतीक है।

पीर बाबा-बुड्ढन अलीशाह

जम्मू की पवित्र धरती पर कई महापुरुषों ने कदम रखे जिन्होंने लोगों को प्यार तथा आपसी भाईचारे का संदेश दिया। उनके बताऐ हुए रास्ते पर चलकर लोगों ने आध्यात्मिक शांति प्राप्त की और अपना जीवन सफल बनाया। इन महारुषों में इस्लाम धर्म के वे सूफी पीर फकीर भी थे जो मध्यएशिया से इस्लाम का प्रचार करने भारत में आए और लोगों को नेकी तथा सच्चाई का रास्ता दिखा कर उनको एक अच्छा इंसान बनने की प्रेरणा दी। उनका विश्वास था कि ईश्वर तक पहुंचने और उसकी बनाई हुई दुनियां के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए किसी मुर्शद (गुरु) की आवश्यकता होती है इसलिए उन्होंने मुर्शद (गुरु) तथा मरीद (शिष्य) के संबंधों को महत्व दिया। वे किसी व्यक्ति विशेष या धर्म के बजाये सबको प्यार करते थे। उनके शिष्यों में हिन्दू, मुसलमान, सिख तथा ईसाई सब शामिल थे और वे सब की उन्नति तथा समृद्धि की प्रर्थना करते थे।

जम्मू शहर तथा उसके आसपास कई फकीरों की दरगाहें हैं जो लम्बे समय तक यहां रहे और यहां के लोगों में इस तरह हिल मिल गए कि आखरी सांस तक वे भूले-भटके लोगों का मार्गदर्शन करते रहे। उन महानपुरुषों में पीर-बाबा शम्मस-उद्दीन भी थे जो अपने मरीदों में बाबा बुड्ढन अली शाह के नाम से जाने जाते थे। उनकी दरगाह जम्मू से लगभग 10 किलोमीटर दूर दक्षिण की ओर सतवारी के पास स्थित है जहां हर वीरवार को श्रद्धालुओं की भीड़ होती है जो बाबा जी का आशीर्वाद लेने दूर दूर से यहां आते हैं। बाबा जी के मरीदों में यद्यपि सभी धर्मों के लोग शामिल हैं परन्तु हिन्दुओं की संख्या अधिक है जो यहां शीश झुका का अपनी मनोकामनाएं पूर्ण करते हैं। बाबा जी के दरबार में सब बराबर हैं और यहां से कोई भी खाली हाथ वापस नहीं जाता। यहां सच्चे दिल से प्रार्थना करने वाले की हर मुराद पूरी होती है। बाबा जी सच्चे ईश्वर भक्त थे और सादा जीवन व्यतीत करते थे। उन्होंने सारी उम्र शादी नहीं की। वह स्वयं मांस नहीं खाते थे और उनका विश्वास था कि जो आनंद सादा भोजन में है वह चटकीले खानों में नहीं। वह स्वयं केवल दूध ही पीते थे इसलिए उन्होंने अपनी कुटिया में कुछ बकरियां पाल रखी थी।

कहते हैं कि बाबा जी गुरु नानक देव जी के समकालीन थे और लगभग पांच सौ साल पहले तलवंडी में पैदा हुए जो अब ननकाना साहिब के नाम से प्रसिद्ध है

और लाहौर पाकिस्तान से 64 मील पश्चिम की ओर स्थित हैं। दोनों घनिष्ठ मित्र थे। दोनों के आपसी संबंधों के बारे में कहानियां प्रसिद्ध हैं। दोनों महापुरुष इकट्ठे बैठ कर ज्ञान की बातें करते थे और कई स्थानों की इकटठे मिल कर यात्रा भी करते थे। वे दोनों आध्यात्मिक तौर पर भी एक दूसरे के निकट थे। बाबा जी अनन्दपुर साहिब भी गये। वहां भी उनकी दरगाह है। बाबा जी की एक दरगाह कीरतपुर में भी है। कहते हैं एक बार जब बाबा जी गुरु नानक देव जी से मिलने गये तो गुरु नानक देव जी ने उनको वहां ही ठहरने के लिए कहा। बाबा जी ने उत्तर दिया कि एक म्यान में दो तलवारें कैसे रह सकती हैं। जहां आप विराजमान हैं वहां मैं कैसे रह सकता हूं। गुरु नानक देव जी के दिल में बाबा जी के लिए इतना आदर था कि उन्होंने सब को कह दिया था कि जो भी आनंदपुर साहब आए उसे पहले कीरतपुर में बाबा जी के पास हाजरी देनी होगी।

भारत के अन्य नगरों का भ्रमण करने के बाद जब बाबा जी सतवारी के पास आए तो उनको यह स्थान पसंद आया और उन्होंने यहीं रहने का निश्चय कर लिया। यद्यपि उन दिनों यहां घना जंगल था परन्तु बाबा जी के यहां आने से इस स्थान पर रौनक हो गई। उनके दर्शनों को लोग आने लगे। यह उस समय की बात है जब भक्ति की लहर सारे भारत में जोरों पर थी। बाबा जी के चमत्कारों को देखकर उनके मरीदों की संख्या दिन प्रतिदिन बढ़ने लगी। आम लोगों के अतिरिक्त फौजी जवान भी बाबा जी के मरीदों में शामिल हैं और वे भी बड़ी श्रद्धा से बाबा जी के दरबार में हाजरी देते हैं। क्योंकि उन्होंने यहीं शरीर त्यागा था इसलिए उनकी इसी जंगल में दरगाह बनाई गई। कुछ साल पहले तक श्रद्धालुओं को बाबा जी की दरगाह तक पहुंचने के लिए हवाई ग्राउंड से ही गुजरना पड़ता था परन्तु अब सुरक्षा की दृष्टि से दरगाह तक पहुंचने वाले रास्ते में तब्दीली कर दी गई है। जब हवाई अड्डे का विस्तार हुआ तो बाबा जी की दरगाह को रुकावट मान कर इस की खस्ता दीवारों को गिराकर जमीन के बराबर कर दिया गया ताकि हवाई पट्टी बनाने और जहाजों को उड़ने में आसानी हो।

दरगाह को गिराने से जहाजों के आने जाने में मुश्किल पेश आने लगी। यूहीं हवाई जहाज उड़ान भरते उनको आग लग जाती। यह सिलसिला कुछ समय तक चलता रहा। कई जहाजों के इंजन उड़ते समय काम करना बंद कर देते थे। यदि कोई जहाज उड़ने में सफल होता हो वह किसी वस्तु से टकरा कर जमीन पर गिर

पड़ता। सम्बंधित अधिकारी परेशान हो गये। बहुत सोच विचार किया गया परन्तु किसी की समझ में कुछ नहीं आया। कोई भी इस की तह तक नहीं पहुंच सका। इसी तरह एक एक करके कई जहाजों को आग लग गई और सरकार को भारी हानि उठानी पड़ी। कहा जाता है कि हवाई अड्डे के बड़े अधिकारी को रात के समय स्वप्न में बाबा जी ने दर्शन दिये और कहा कि उनकी आरामगाह को तोड़ने से उनको कष्ट हुआ है। दरगाह पर जहाजों के चलने से उनको दुख होता है अच्छा हो यदि आप हवाई पट्टी में परिवर्तन करके मेरी आरामगाह से दूर ले जाएें और यदि ऐसा न किया गया तो जहाजों को नुक्सान होता रहेगा। जहाजों के शोर से मेरी आराधना में खलल पड़ता है। एक ईश्वर भक्त की दरगाह का इस प्रकार अपमान करना उचित नहीं।

अगले दिन उस अधिकारी ने वह स्वप्न अपने साथियों को सुनाया। अब उनके पास बाबा जी के आदेश को मानने के सिवाये कोई रास्ता न था। हवई पट्टी में तबदीली कर दी गई और बाबा जी की दरगाह को सड़क से बाहर रखा गया तब जा कर शांति हुई और अधिकारियों ने सुख की सांस ली। इससे अधिकारियों के दिल में बाबा जी के प्रति श्रद्धा बढ़ गई और उन्होंने वहां शानदार दरगाह का निर्माण करवाया और उसके इर्द-गिर्द चार दीवारी भी बनवाई। उसके बाद जब भी कोई जहाज उड़ता था वह उड़ने से पहले बाबा जी को सलामी देता था और यह सिलसिला आज तक जारी है। कहा जाता है कि अधिकारियों ने जब मजार बनाने की स्कीम बनाई तो उसका नक्शा इस ढंग से तैयार किया गया कि बाबा जी के मजार के ऊपर एक गुंबद बनाया जाये ताकि दरगाह की सुंदरता बनी रहे और यह दूर से दिखाई दे। बाबा जी फिर स्वप्न में आए और उन्होंने आदेश दिया कि उन की दरगाह पर किसी प्रकार की छत न डाली जाए। उसे खुला रखा जाए ताकि वह आसमान की ओर देख सकें। कुछ समय तक दरगाह की देखभाल की जिम्मेदारी फौजी जवानों ने निभाई। दरगाह के रास्ते में तब्दीली की गई ताकि श्रद्धालु बिना रोक-टोक जब चाहें दारगाह पर हाजरी दे सकें।

क्योंकि बाबा बुड्ढन अलीशाह केवल दूध पर ही गुजारा करते थे इसलिए उन्होंने बहुत सी बकरियां पाल रखी थीं। उन बकरियों को चराने की जिम्मेदारी शेरों पर थी। बाबा जी दरगाह में आने वाले अतिथियों को दूध ही पिताले थे। एक बार गुरु नानक देव जी उनसे मिलने यहां आऐ तो बाबा जी ने उनका यथायोग्य सत्कार

किया और कहा, हमारे शेर बकरियां चराने गये हैं मुझे डर है कि वे आकर कहीं आप पर झपट न पड़ें गुरु नानक देव जी ने कहा यदि शेर आप को कुछ नहीं कहते तो हमें भी उनसे डरने की आवश्यकता नहीं। यही हुआ शेर आते ही गुरु नानक देवी जी के चरणों में गिर कर उन्हें नमस्कार करने लगे। बाबा जी ने शेर को आज्ञा दी कि बकरियों का दूध निकाल कर गुरु जी को पिलाओ। शेर एक साफ सुथरे बर्तन में दूध लेकर उपस्थित हुआ। गुरु नानक देव जी ने बाबा जी से कहा कि आप यह दूध रख दें मैं इसे छटी पादशाही में आकर पी लूंगा।

बाबा जी ने कहा हो सकता है तब तक मैं जीवित न रहूं। हो सकता है मेरी आयु इतनी लम्बी न हो और मेरी चाह मेरे दिल में ही रहे कि मेरे मित्र ने दूध नहीं पिया और फिर यदि मैं जीवित भी रहा तो आप की पहचान कैसे करुंगा। बाबा जी की आयु उस समय भी अधिक थी और उनकी आंखों के पर्दों पर मांस झुक आया था और दिखाई भी कम देता था। गुरु नानक देव जी ने कहा कि आप की आयु लम्बी होगी। यह दूध हमारी अमानत के तौर पर आपके पास रहेगा। बाबा जी ने पूछा कि मुझे कैसे पता चलेगा कि आप आए हैं तो गुरु जी ने उत्तर दिया कि मैं यहां आकर अपने दायें हाथ का अंगूठा हिलाऊंगा तब आप मुझे पहचान लेना। छटी पादशाही का समय हुआ और गुरू हरगोबिंद सिंह जी बाबा बुड्ढन अली शाह के पास आये और अपनी अमानत मांगी। बाबा जी ने उन से निशानी मांगी और गुरु नानक देव जी का रूप धारण करने को कहा। गुरु हर गोबिंद सिंह जीने ऐसा ही किया और बाबा जी ने दूध निकाल कर उनको दिया। उस समय भी दूध इतना गर्म था जैसे अभी बकरियों से निकाल कर लाया गया हो।

पीर बाबा बुड्ढन अली शाह की दरगाह पर साल में दो बार भंडारा होता है एक आषाढ़ महीने के पहले वीरवार और दूसरा पौष महीने के मध्य जिस में हजारों की संख्या में हिन्दू, मुसलमान, सिख तथा ईसाई शामिल होकर बाबा जी का आशीर्वाद प्राप्त करते हैं।

श्रद्धालु दरगाह पर धूप जलाते हैं और फूल मालाऐं चढ़ाते हैं, बड़े दिये में तेल डालते हैं जो दिन रात जलता रहता है। श्रधालु दीये का तेल शरीर पर लगाते हैं जिस से शारीरिक रोग दूर होते हैं। दरगाह की भभूती माथे पर लगाते हैं और न्याज़ चढ़ाते हैं। जिन श्रद्धालुओं की मनोकामनायें पूर्ण होती हैं वे झंडे, चादरें और फल आदि चढ़ाते हैं। यह दरगाह राष्ट्रीय एकता की जीती जागती मिसाल है।

धार्मिक तथा पर्यटन स्थल-मानसर

जम्मू की पवित्र धरती देवी देवताओं के पवित्र स्थानों तथा मन्दिरों के अतिरिक्त प्राकृतिक दृष्यों से भरी हुई है। जिस ओर दृष्टि डालों हरे भरे वन, ऊंचे ऊंचे पहाड़, झरने और कल कल करती नदियां मधुर संगीत बखेरती दिखाई देती है।

इस पावन धरती को प्रकृति ने बहुत ही सुंदर ढंग से सजाया है और इसमें आकर्षण पैदा करने के लिए इस प्रकार सुहावने रंग भर दिये हैं कि एक बार जो यहां आता है उसकी इच्छा होती है कि वह बार बार यहां आए और इन प्राकृतिक दृष्यों का आनंद उठाए। जम्मू की धरती पर कुछ झीलें भी हैं जिनका जल निर्मल तथा ठंडा है। इन झीलों की सैर करने के लिए दूर दूर से सैलानी यहां आते हैं जिन के ठहरने के लिए राज्य सरकार की ओर से उचित प्रबंध भी किए गये हैं। यहां जितनी भी झीलें हैं उन में मानसर झील अधिक प्रसिद्ध है। इस मनोहारी झील के साथ कुछ धार्मिक विश्वास भी जुड़े हुए हैं जिन के कारण इस झील का महत्त्व और भी बढ़ गया है।

मानसर झील जम्मू नगर से लगभग 60 किलोमीटर की दूरी पर स्थित है। इससे कुछ दूर एक और झील सरुईंसर के नाम से प्रसिद्ध है। इन दोनों झीलों की उत्पत्ति महाभारत काल से जुड़ी हुई है और धर्म ग्रंथों में भी इन का वर्णन आता है ऐसा स्थानीय लोगों का विश्वास है।

एक दंत कथा के अनुसार यह दोनों झीलें उस तीर से प्रकट हुई जो अर्जुन ने पानी लाने के लिए चलाया था। महाभारत की लड़ाई से पहले जब पांडव 13 वर्ष का वनवास काट रहे थे उस समय वे जम्मू के इलाके से भी गुजरे। एक दिन यात्रा के समय उनकी माता को प्यास लगी। आसपास बहुत तलाश की परन्तु पानी न मिला। आखिर अर्जुन ने जमीन पर तीर मारा जो एक स्थान से जमीन में दाखिल हुआ और दूसरे स्थान से बाहर निकल आया। दोनों स्थानों पर बहुत सा पानी जमा हो गया। इन्हीं स्थानों पर मानसर तथा सरूईंसर की झीलें हैं। मानसर झील की गहराई के बारे में भी सही जानकारी नहीं हो सकी। ऐसा विश्वास है कि दोनों झीलें अंदर ही अंदर से एक दूसरे से जुड़ी हुई हैं। दोनों में पानी की सतह एक ही समय में घटती बढ़ती रहती है। क्योंकि प्राचीन काल से ही डुग्गरवासी नागों की पूजा करते आए हैं इसलिए लोगों का विश्वास है कि काली शेषनाग इस झील में वास

करते हैं। एक और दंतकथा के अनुसार यह झीलें अर्जुन के पुत्र बभ्रुवाहन के तीरों से बनी हैं। कहते हैं कि वनवास के समय अर्जुन ने शेषनाग कन्या अलूपी को देखा तो वह उसकी सुंदरता पर मोहित हो गया। अर्जुन ने अलूपी से शादी कर ली। कुछ समय तक वह अलूपी के साथ भी रहा। दोनों के मिलाप से एक बालक का जन्म हुआ जिसका नाम बभ्रुवाहन रखा गया। यह लड़का भी अर्जुन की तरह वीर था और उसमें वे तमाम खूबियां थीं जो एक योद्धा में होती हैं। वह अपने पिता की तरह ही कुशल तीर अंदाज था। कुछ समय के बाद अर्जुन अपने भाईयों के पास आ गया। वह अलूपी को भूल गया। उसे यह भी मालूम न था कि अलूपी ने एक बच्चे को जन्म दिया है। परन्तु अलूपी अर्जुन को न भूल सकी। महाभारत की लड़ाई जीतने के बाद जब पांडव हस्तिनापुर आए तो उन्होंने अश्वमेघ यज्ञ करने का निश्चय किया ताकि वे अपने चक्रवर्ती होने की घोषणा कर सकें। परम्परा के अनुसार उस यज्ञ के लिए जो सजा हुआ घोड़ा छोड़ा गया उसकी रक्षा के लिए अर्जुन को नियुक्त किया गया। अर्जुन के साथ कुछ वीर सैनिक भी घोड़े के साथ भेजे गये। नियम के अनुसार उस घोड़े को जो भी पकड़े उसे पांडवों से युद्ध करना था।

जब हस्तिनापुर से यह घोड़ा इस क्षेत्र में पहुंचा तो बभ्रुवाहन ने उसे पकड़ लिया। अर्जुन ने उसे घोड़ा छोड़ देने को कहा परन्तु बभ्रु वाहन न माना और दोनों में युद्ध आरम्भ हो गया। अर्जुन के साथ आए कई सैनिक युद्ध में मारे गये। पांडव सेना की पराजय हुई। अर्जुन बभ्रुवाहन के तीर से जख्मी हो गया और मुर्छित होकर धरती पर गिर पड़ा। बभ्रुवाहन ने अपनी विजय का संदेश अपनी माता अलूपी के पास पहुंचाया। अलूपी ने बभ्रुवाहन को कहा कि तुमने जिन को मुर्छित किया है वह तेरे पिता हैं। यह सुनकर बभ्रुवाहन चिंतित हुआ और माता से इस का उपाय पूछा। अलूपी ने उसे कहा कि पाताल लोक में तेरे नाना नागराज रहते हैं। उनके पास मणि हैं। यदि वह मणि मिल जाए तो उससे तुम्हारे पिता जो मुर्छित हुए हैं और उनके सैनिक जो रणभूमि में वीरगति को प्राप्त हुए हैं सभी ठीक हो सकते हैं परन्तु वह तम्हें मणि नहीं देंगे ऐसा मुझे विश्वास है क्योंकि वह मुझ से नाराज हैं। बभ्रुवाहन ने अपनी माता को विश्वास दिलाया कि वह हर कीमत पर नाना जी से मणि लेकर आयेगा चाहे उसके लिए उनसे युद्ध ही क्यों न करना पड़े। बभ्रुवाहन ने पाताल लोक में जाने के लिए पृथ्वी पर तीर मारा जिससे एक सुरंग बन गई। उस स्थान पर

आज एक झील है जो सरुईंसर के नाम से प्रसिद्ध है। बभ्रुवाहन ने पाताल जा कर अपने नाना नागराज को सारा वृतांत सुनाने के बाद मणि मांगी परन्तु उन्होंने मणि देने से इंकार कर दिया। बभ्रुवाहन ने बल प्रयोग करके मणि को प्राप्त करना चाहा तो दोनों में युद्ध शुरू हो गया। नागदेव मूर्छित हो गये और बभ्रुवाहन मणि लेकर भागने लगा। नागदेव ने अपनी शक्ति से सुंरग में पानी भर दिया जिससे बभ्रुवाहन का बाहर निकलना असंभव हो गया। उसने एक और तीर मारा और पृथ्वी पर प्रकट हुआ। जिस स्थान से वह मणि लेकर बाहर निकला वह स्थान मणि सर कहलाया जिसे अब मानसर कहते हैं। इस प्रकार यह दोनों झीलें बभ्रुवाहन के तीरों से इस धरती पर प्रकट हुईं। बभ्रुवाहन ने उस नगमणि से अपने पिता को ठीक किया और मृत सैनिकों को भी जीवित किया। अर्जुन को भी अपनी पत्नी अलूपी तथा पुत्र बभ्रुवाहन से मिल कर प्रसन्नता हुई। इस प्रकार अलूपी ने अपने पति की रक्षा की ओर जम्मू क्षेत्र को दो बहुत सुंदर झीले दीं।

मानसर झील के किनारे नागराज का मन्दिर है जिसे कई जातियों के लोग मानसर देवता के रूप में अपना कुलदेवता मान कर पूजते हैं और हर शुभ कार्य करने से पहले यहां आकर उनका आशीर्वाद प्राप्त करते हैं। इन जातियों के लोग लड़कों के मुंडन संस्कार यहीं आ कर करते हैं। नये शादी शुदा जोड़े बाबा जी का आशीर्वाद प्राप्त करने यहां आते हैं। इसके अतिरिक्त दूसरे धर्मों तथा जातियों के लोग भी इस पवित्र स्थान की यात्रा करके अपने को धन्य मानते हैं। मन्दिर में धार्मिक रस्में पूरी करने के बाद श्रद्धालु इस झील की परिक्रमा करते हैं। यह परिक्रमा साढ़े तीन किलोमीटर के लगभग है। परिक्रमा के पूरे रास्ते को अब पक्का कर दिया गया है जिस से चलने वालों को सुविधा हो गई है। श्रद्धालु नंगे पांव झील की परिक्रमा करते हुए रास्ते में विभिन्न घाटों पर खड़े होकर झील में आटा फैंकते हैं जिसको खाने के लिए झील में से कछुऐ मछलियां तथा दूसरे जीव जन्तु पानी की ऊपरी सतह तक आ जाते हैं। परिक्रमा के साथ साथ झील के किनारे बहुत से मन्दिर बने हुए हैं जिनमें श्रद्धालु पूजा अर्चना करके आध्यात्मिक शान्ति प्राप्त करते हैं। झील के पूर्वी किनारे पर कई सरकारी दफ्तर और विभिन्न विभागों के बंगले बने हुए हैं। यह पवित्र तथा आकर्षक स्थान अब एक पर्यटन स्थाल के रूप में उभर रहा है। जहां पर्यटन विभाग की ओर से सैलानियों तथा यात्रियों के रहने तथा खाने पीने का उचित प्रबंध किया गया है। पर्यटन विभाग की तरफ से यहां हर वर्ष एक

मेले का आयोजन भी किया जाता है। जिस में जम्मू कश्मीर राज्य के अतिरिक्त देश भर से लोग यहां आते हैं। झील के आसपास रोशनी का भी उचित प्रबंध किया गया है। मानसर झील की सैर करने के लिए कई विदेशी भी आते हैं। झील के किनारे एक पार्क भी है जिस में खिले रंग बिरंगे फूल, सैलानियों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। पर्यटन विभाग की ओर से झील में किश्तियों की सैर करने का भी प्रबंध किया गया है। गर्मियों के दिनों में तो यहां दूर दूर से स्कूलों के विद्यार्थी सैर करने आते हैं। जिससे इस स्थान की रौनक बहुत बढ़ जाती है। यद्यपि यह झील कश्मीर की झीलों से छोटी है फिर भी सैलानी मनोरंजन के लिए यहां आना पसंद करते हैं। कुछ समय पहले तक यहां सैलानियों का आना बहुत कम था परन्तु अब धार-उधमपुर सड़क के बनने तथा साम्बा से यहां तक आने वाली पक्की सड़क के कारण आने वाले सैलानियों की गिनती में वृद्धि हुई है। इन दिनों माता वैष्णों देवी के यात्री भी यहां आने लगे हैं जिस से इस स्थान का महत्व बढ़ गया है। इस पवित्र झील में स्नान करने के लिए चैत्र-चौदश, बैसाखी, शिवरत्रि तथा दूसरे त्यौहारों के अवसर पर दूर दूर से श्रद्धालु यहां आते हैं। झील के पवित्र जल में स्नान करने के बाद वे उमापति महादेव, नृसिंह भगवान तथा दुर्गा माता के मन्दिरों में देवी देवताओं पर जल चढ़ाते तथा पूजा करते हैं। मानसर देवता के मन्दिर के पास ही डोगरा राजाओं के समय का एक दो मंजला भवन है जिसकी भीतरी दीवारों पर पहाड़ी चित्र कला के अद्‌भुत नमूने हैं जो प्रशासन की लापरवाही के कारण खराब होते जा रहे हैं। इस ओर यदि ध्यान दिया जाए तो डुग्गर की अमूल्य चित्रकारी के नमूनों को बचाया जा सकता है।

छोटी छोटी पहाड़ियों, चीड़ों तथा आमों के वृक्षों से घिरी यह झील बहुत ही सुंदर तथा मन को मोहित करने वाली प्रतीत होती है। झील में खिले हुए कमल के फूल और मौसमी पक्षियों की सुरीली आवाजें यहां आने वाले यात्रियों तथा सैलानियों का स्वागत करती हैं।

जरूरत इस बात की है कि प्रशासन तथा स्थानीय लोग इस झील के विकास तथा सफाई की ओर एक जुट होकर ध्यान दें। ताकि ज्यादा से ज्यादा सैलानी यहां आएं और इस पिछड़े क्षेत्र का विकास हो सके।
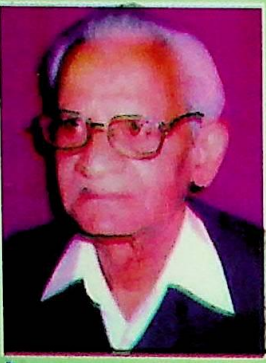
केवल कृष्ण 'शाकिर'

जन्म- 11 नवम्बर 1936 ई.

जन्म स्थान - आर.एस.पुरा।

माता जी का नाम- श्रीमती राम प्यारी

पिता जी का नाम- पं० जगन्नाथ शर्मा

शिक्षाः एम.ए (इतिहास, राजनीति शास्त्र, एवं उर्दू) बी.ऐड।

व्यवसायः जम्मू कश्मीर सरकार के शिक्षा विभाग से सीनियर लैक्चरर के पद से सेवा निवृत। वर्तमान में लेखन तथा पत्रकारिता।

सम्मान

1. 1969 में महात्मा गांधी जन्म शताब्दी समारोह आयोजन समिति द्वारा प्रथम गाँधी मैडल तथा प्रशस्ति पत्र से अलंकृत।
2. 1978 में जम्मू कश्मीर सरकार के शिक्षा विभाग की ओर से सर्वश्रेष्ठ अध्यापक का पुरस्कार।
3. 1990 में सर्वश्रेष्ठ अध्यापक का राष्ट्रीय पुरस्कार।

प्रकाशित पुस्तकें

1. परछांवां
2. धरती दे गीत
3. झांझरां - (पंजाबी)
4. ये लोग
5. गुलशन-गुलशन (उर्दू)
6. सरकंडे- (डोगरी उपन्यास)
7. जम्मू के प्राचीन मन्दिर (हिन्दी)
8. जम्मू के धार्मिक स्थल (हिन्दी)
9. हिरखै दी डोर (डोगरी)
10. जम्मू दर्शन (हिन्दी)
11. Jammu- Heritage & Culture

अक्षय प्रकाशन